हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-सीरीजका १४ वाँ ग्रंथ।

स्वावलम्बन।

अर्थात्

डा० सेमुएल स्माइल्स, एल. एल. डी. के
'सेलफ-हेल्प' नामक अँगरेजी ग्रन्थका

हिन्दी रूपांतर।

लेखक,

बाबू मोतीलाल जैनी, एम. ए.।

प्रकाशक,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।

द्वितीयावृत्ति।

आषाढ़ वि० सं० १९७६।

जून १९१९।

कपड़ेकी जिल्दका एक रु० चौदह आने।] [मूल्य डेढ़ रु०।

Published by Nathuram Premi, Hindi Granth Ratnakar Karyalaya, Hirabag, Girgaon-Bombay.

Printed by M. N. Kulkarni, Karnatak Press, 434 Thakurdwar, Bombay.

समर्पण ।

अपने
कई करोड़
हिन्दी-भाषाभाषी
भाइयोंके करकमलोंमें
यह ग्रंथ लेखकद्वारा
सादर समर्पित
हुआ ।

भूमिका ।

इँग्लेण्डके सुप्रसिद्ध विद्वान् डाक्टर सेमुएल स्माइल्स अनेक उपयोगी ग्रन्थ लिख गये हैं । उनके ग्रन्थोंका बड़ा आदर है । यूरुप और भारतवर्षकी अनेक भाषाओंमें उनके अनुवाद हो चुके हैं । डाक्टर स्माइल्सका सबसे प्रसिद्ध ग्रन्थ सेल्फ-हेल्प (Self-Help) है । यह ग्रन्थ पहले पहल सन् १९५९ में प्रकाशित हुआ और लोगोंको इतना पसन्द आया कि पहले ही वर्षमें इसकी बीस हजार प्रतियाँ बिक गईं । उसके बाद आजतक तो इसकी न जाने कितनी प्रतियाँ खप चुकी होंगी । इतने अच्छे और लोकोपकारी ग्रन्थका हिन्दीमें अभाव देखकर मैं आज अपने पाठकोंके सन्मुख सेल्फ-हेल्पका यह हिन्दी रूपान्तर लेकर उपस्थित हुआ हूँ ।

इस ग्रन्थके बननेका कारण

डाक्टर स्माइल्सने अपनी भूमिकामें इस प्रकार वर्णन किया है:—

" इँग्लेण्डके उत्तरीय प्रान्तके एक कस्बेमें दो तीन नवयुवकोंने मिलकर विचार किया कि हम लोग शामको एक जगह एकट्ठे हुआ करें और एक दूसरेकी सहायतासे पढ़ने लिखनेका अभ्यास बढ़ावें । ये लोग बहुत ही गरीब थे, इस लिए इन्हें कोई अच्छा स्थान इस कार्यके लिए नहीं मिल सका । इनका एक मित्र एक छोटेसे घरमें रहता था । उसमें एक छोटीसी कोठरी थी । बस, ये लोग उसीमें एकत्र होने लगे और अपना कार्य उत्साहके साथ करने लगे । इनकी देखादेखी और भी कई लोगोंकी इच्छा हुई और वे भी इस मण्डलीमें आने लगे । फल यह हुआ कि जगह ओछी पड़ने लगी । गर्मीका मौसम आ चुका था, इस लिए कोठरीके बाहर जो छोटासा बगीचा था, ये लोग उसीमें खुली हवामें बैठकर अपना काम चलाने लगे। परन्तु कभी कभी आँधीपानी आजानेके कारण इनके पढ़ने लिखनेमें व्याघात पड़ने लगा और इन्हें कष्ट होने लगा ।

इतनेमें ही जाड़ेके दिन आ गये। रातको खूब ठण्ड पड़ने लगी। थोड़े आदमी होते, तो कोई छोटी मोटी कोठरी देख ली जाती; परन्तु तब तक एकत्र होनेवालोंकी संख्या बहुत बढ़ गई थी । यद्यपि इस पाठशालामें आनेवाले प्रायः मजदूर लोग थे और उनकी आर्थिक अवस्था बहुत ही शोचनीय थी, तो भी इस समय अपने आन्तरिक प्रेमके कारण उन्होंने हिम्मत बाँधी और एक बड़ा कमरा किरायेपर ले लेनेका संकल्प कर लिया । तलाश करनेसे एक ऐसा कमरा

मिला जिसमें पहले हैजेके रोगी रक्खे जाते थे और इस कारण उसे लोग मुफ्तमें भी न लेना चाहते थे । इन्होंने निर्भय होकर इसे ही ले लिया और अपना काम जारी कर दिया ।

जो स्थान पहले भयंकर था वह अब उद्योग और उत्साहका केन्द्र बन गया। यद्यपि इस संस्थामें शिक्षणकी पूरी पूरी व्यवस्था न थी, तो भी जो कुछ थी उसमें पूरा उत्साह और आन्तरिक प्रेरणा भरी हुई थी । जिसको जो कुछ टूटा फूटा आता था, वह अपनेसे कम जाननेवालोंको सिखलाता था, अपने आप सुधरता था और दूसरोंको सुधारता था; और किसी न किसी तरह दूसरोंके आगे अपना उत्तम उदाहरण उपस्थित करता था। इस तरह वे युवा पुरुष—जिनमें बहुतसे तो पक्की उम्रके थे—लिखना बाँचना, अंकगणित, भूगोल, रसायन शास्त्र, और कई वर्तमान भाषायें आप सीखने लगे तथा औरोंको सिखलाने लगे ।

इस तरह उक्त संस्थामें लगभग १०० मनुष्योंका जमाव होने लगा । कुछ दिनोंके बाद उन्हें व्याख्यान सुननेका शौक लगा और उनमेंसे कुछ युवक मेरे पास आये । उन्होंने अपने पैरोंपर खड़े होकर जो उद्योग और परिश्रम किया था और जिस नम्रतासे मुझसे व्याख्यान देनेकी प्रार्थना की, उसका मुझपर बड़ा प्रभाव पड़ा और मैं जानता था कि आम सभाओंमें व्याख्यान देनेका कुछ विशेष फल नहीं होता है तो भी मैंने व्याख्यान देना स्वीकार कर लिया। मैंने निश्चय किया कि हृदयकी वास्तविक प्रेरणासे और सच्चाईसे जो कुछ कहा जायगा उसका कुछ असर पड़े बिना न रहेगा । इस उद्देश्यसे मैंने उक्त सभामें कई व्याख्यान दिये और उनमें अनेक कर्मवीर मनुष्योंके उदाहरण देकर बतलाया कि तुममेंसे प्रत्येक मनुष्य, यदि चाहे तो न्यूनाधिकरूपमें वैसे ही काम कर सकता है । तुम्हारे आगामी जीवनका सुख और कल्याण स्वयं तुम्हारे ही ऊपर अवलम्बित है, इस लिए तुम्हें अपने आपको उद्योगपूर्वक शिक्षित बनाना चाहिए, अपनेको संयममें रखकर अच्छी आदतें डालनी चाहिए, अपने मनको वशमें रखके चलना चाहिए और इन सबसे बढ़कर अपने कर्तव्यका पालन सच्चाई और एकनिष्ठासे करना चाहिए; क्योंकि मनुष्यके चरित्रकी सारी खूबियाँ उसकी कर्तव्यनिष्ठा पर ही अवलम्बित हैं ।

इस उपदेशमें न कोई नई बात थी और न कोई नया विचार ही था—पुरानी सबकी जानी हुई बातें ही दोहराई गई थीं, तो भी युवकोंने उसको बड़े आदरके साथ सुना । वे अपना अभ्यास बढ़ाते गये और दृढ़ निश्चयसे उत्साहपूर्वक

परिश्रम करते रहे । फल यह हुआ कि उनमें योग्यता आती गई और मौके मिलनेपर वे तरह तरहके रोजगारोंसे लगते गये । उनमेंसे कई लोगोंने तो अच्छी उन्नति कर ली और उनकी गणना प्रतिष्ठित पुरुषोंमें होने लगी । कुछ समयके बाद इनमेंसे एक ऐसे पुरुषसे मेरी भेंट हुई जिसने अपने उद्योगके बल पर अपनी अच्छी उन्नति कर ली जो एक कारखानेका मालिक बन गया था । उसने कहा " मैं इस समय बहुत सुखी हूँ। आपने कई वर्ष पहले मेरे और मेरे साथियोंके सामने जो सच्चे शिक्षाप्रद व्याख्यान दिये थे, उन्हें मैं आज भी कृतज्ञतापूर्वक स्मरण करता हूँ। आपने जो मार्ग बतलाया था अपनी शक्तिभर प्रयत्न करके मैं अबतक उसीपर चल रहा हूँ और मुझे पक्का विश्वास है कि उसीके कारण मुझे यह सुखसमृद्धिकी प्राप्ति हुई है ।"

इस घटनासे "स्वावलम्बनके विषयकी ओर मेरा ध्यान विशेषरूपसे आकर्षित हुआ और मुझे इसके विचारमें बहुत आनन्द आने लगा । अतः मैंने उक्त नवयुवकोंकी सभाके व्याख्यानोंमें जो बातें कही थीं, उनकी वृद्धि करना शुरू किया । मैं जो कुछ बाँचता, निरीक्षण करता अथवा संसारी कामकाजोंमें पड़कर अनुभव प्राप्त करता था, अवकाश मिलनेपर उन सब बातोंका उतना भाग जो इस विषयके लिए उपयोगी होता था लिखता जाता था । इस तरह इस विषयका एक अच्छा संग्रह हो गया और वही संग्रह आज इस रूपमें प्रकाशित किया जाता है ।"

यह ग्रन्थ सन् १८५९ में पहले पहल प्रकाशित हुआ था । उसके बाद सन् १८६६ में स्माइल्स साहबने इसमें अनेक नये नये उदाहरण शामिल करके इसकी उपयोगिताको और भी बढ़ा दिया है ।

इस ग्रन्थकी शिक्षायें।

इस ग्रन्थसे क्या शिक्षा मिलेगी, यह डाक्टर स्माइल्सके शब्दोंमें ही बतलाना अच्छा होगा । वे कहते हैं:—"संक्षेपमें इस पुस्तकका उद्देश्य निम्नलिखित प्राचीन किन्तु लाभदायक उपदेशोंका बार बार दोहराना है । इन बातोंको जितनी बार दोहराया जाय उतना ही थोड़ा है,—

१ सुखी बननेके लिए प्रत्येक युवकको काम अवश्य करना चाहिए ।

२ उद्योग और परिश्रमके बिना कोई भी महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं हो सकता है।

३ कठिनाइयोंसे डरना न चाहिए, किन्तु सन्तोष और धैर्यके साथ उनपर विजय प्राप्त करनी चाहिए ।

४ प्रत्येक मनुष्यको अपना चरित्र उच्चश्रेणीका बनाना चाहिए; क्योंकि इसके बिना स्वाभाविक योग्यता निकम्मी है और सांसारिक सफलता दो कौड़ीकी है।"

डाक्टर स्माइल्सने इन उपदेशोंको सैकड़ों उदाहरण देकर ऐसी सरल और चित्ताकर्षक रीतिसे समझाया है कि मनुष्यके चित्तपर उनका गहरा प्रभाव पड़ता है। उन्हें इस काममें पूरी सफलता हुई है। उन्होंने दिखला दिया है कि हर जातिके और हर तरहके काम करनेवाले मनुष्य—नाई, दर्जी, चमार, कुम्हार, सुतार, बढ़ाई, जुलाहे, मजदूर, व्यापारी आदि—और हरएक श्रेणीके मनुष्य—अमीर, गरीब, मालिक, मजदूर, साधारण गृहस्थ आदि—अपने उद्योगसे अपनी उन्नतिमें सफलता प्राप्त कर सकते हैं। परिश्रम और धैर्यके सामने सब तरहकी कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं और इन गुणोंके द्वारा नीचसे नीच और मूर्ख मनुष्य भी कुछ न कुछ आत्मोन्नति कर सकता है। हमारी अधिकांश उन्नति हमारे ही हाथमें है। स्वावलम्बन या अपने पैरों आप खड़े होना, व्यक्तिगत और जातीय दोनों तरहकी उन्नतिकी जड़ है। भारतवर्षमें इस ग्रन्थके प्रचारकी बड़ी भारी आवश्यकता है। इस देशमें स्वावलम्बनकी शिक्षाका एक तरहसे लोप हो गया है और यही इसकी अवनतिका कारण है, अतएव यह ग्रंथ यहाँ बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। यह हमको उत्साही, कार्यकुशल, परिश्रमी, सदाचारी और सुखी बनायगा। अन्य देशोंके समान यहाँ भी घरघरमें इसका प्रचार होना चाहिए। इसकी शिक्षा हमारे आलस्यको दूर करेगी और हमको उन्नतिके मार्गपर आरूढ करेगी।

माननीय पण्डित **मदनमोहन मालवीयने** ४ फरवरी सन् १९१२ ई० को 'आगरा कालेज' में एक व्याख्यान देकर उक्त कालिजके विद्यार्थियोंको उपदेश दिया था। उसमें उन्होंने कहा था—"नवयुवको, मैं तुमसे अनुरोध करता हूँ कि तुम डा० स्माइल्सके सेल्फ-हेल्प (स्वावलम्बन) नामक ग्रन्थको पढ़ो। उसके पढ़नेसे तुम्हारी बहुत भलाई होगी।"

हिन्दी रूपांतर।

डाक्टर स्माइल्सने इस ग्रंथमें सैकड़ों यूरोपीय, विशेषकर अँगरेज, महापुरुषोंके उदाहरण दिये हैं और ऐसी अनेक बातोंका उल्लेख किया है जो इँग्लेण्डके समाजसे विशेष संबंध रखती हैं। यदि इस ग्रंथका ज्योंका त्यों भाषान्तर किया जाता, तो यह हमारे देशवासियोंके लिए जितना चाहिए उतना लाभदायक न होता। अतएव मैंने इसका रूपान्तर करना ही निश्चय किया। मैंने

इसमें अनेक देशी उदाहरण शामिल कर दिये हैं, जिनका प्रभाव हमारे देश-वासियों पर विदेशी उदाहरणोंसे अधिक पड़ेगा; परन्तु इसके साथ ही मूल पुस्तकमें जितने महत्त्वपूर्ण विदेशी उदाहरण हैं वे भी इस रूपान्तरमें रक्खे गये हैं। अध्यायोंके प्रारंभ और बीचमें कुछ हिन्दी और संस्कृतके सुभाषित बढ़ा दिये गये हैं। इँग्लेण्डकी समाजसंबंधी बातोंमें परिवर्तन करके उनको भारतवर्षके समाजके अनुकूल बनाया गया है। मूल ग्रंथका सातवाँ अध्याय जो सर्वथा इँग्लेण्डके समाज—वहाँके खानदानी रईसोंसे संबंध रखता है इस पुस्तकमें नहीं रक्खा गया। इतना हेर फेर करनेके साथ ही मूल ग्रंथके भावोंकी भी पूर्णतया रक्षा करनेकी चेष्टा की गई है। इस कार्यमें मुझको बहुत परिश्रम करना पड़ा है। देशी उदाहरणोंकी खोज और चुनावमें बहुत समय खर्च हुआ है। कहीं कहीं तो छोटे छोटे उदाहरणोंकी खोज करनेमें मुझे बड़ी बड़ी पुस्तकें आद्योपान्त पढ़नी पड़ी हैं। इस पुस्तकके लिखनेमें मैंने अनेक पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओंसे सहायता ली है जिनमेंसे मुख्य मुख्य ये हैं:—

(१) ईश्वरचन्द्र विद्यासागरका जीवनचरित।
(२) सरस्वती (मासिक पत्रिका) के फाइल।
(३) मिश्रबंधु-विनोद (हिन्दी-ग्रन्थप्रसारक मंडली द्वारा प्रकाशित)।
(४) जावजीकीर्तिप्रकाश (मराठी)।
(५) बालबोध (मराठी मासिकपत्र) के फाइल।
(६) अस्तोदय तथा स्वाश्रय (मनःसुखराम सूर्यराम त्रिपाठीकृत, गुजराती)।
(7) Biographies of Eminent Indians. (G. A. Natesan & Co., Madras.)
(8) The Indian Nation Builders, in three volumes (Ganesh & Co., Madras.)
(9) The Annals and Antiquities of Rajasthan (James Tod.)
(10) The 'Leader.'

उपर्युक्त पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओंके लेखकों तथा संपादकोंका मैं अत्यन्त उपकृत हूँ। मराठी पुस्तकोंके पढ़नेमें मुझे एक मराठा सज्जनसे सहायता मिली है। अतएव मैं उनका भी आभारी हूँ। अंतमें मैं श्रीयुत पण्डित नाथूरामजी प्रेमीके प्रति कृतज्ञता प्रगट किये बिना नहीं रह सकता, जिन्होंने इस पुस्तकका संशोधन

किया है और अपनी बहुमूल्य सम्मतियोंसे मुझे बहुत ही सहायता दी है। उन्हींकी कृपासे मुझे आज इस पुस्तकको आपके सामने रखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है।

यदि इस पुस्तकसे हमारे भाइयोंमें उत्साहका कुछ भी संचार हुआ, तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूँगा।

ड्योढ़ी बेगम, आगरा, }
१-२-१५ }

विनीत—
मोतीलाल।

दूसरे संस्करणकी भूमिका।

इस पुस्तकका प्रथम संस्करण बहुत शीघ्र समाप्त हो गया। यह हिन्दीप्रेमियोंके अनुग्रहका ही फल है। कई कारणोंसे इसका दूसरा संस्करण अब तक न निकल सका।

प्रथम संस्करणमें आरंभके ५-६ अध्यायोंका अनुवाद कुछ संक्षिप्त हो गया था। इस बार इस कमीको पूरा कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त इस संस्करणमें कई देशी उदाहरण और बढ़ा दिये गये हैं और भाषामें यत्र तत्र संशोधन भी कर दिया गया है। आशा है कि यह काम पाठकोंको अरुचिकर न होगा।

ड्योढ़ी बेगम, आगरा, }
१-६-१९ }

मोतीलाल।

विषय-सूची ।

पहला अध्याय ।

जातीय और व्यक्तिगत स्वावलम्बन ।

दूसरा अध्याय ।

औद्योगिक नेतागण ।

तीसरा अध्याय ।

धैर्यकी महिमा ।

चौथा अध्याय ।

अखंड उद्योग और आग्रह ।

पाँचवाँ अध्याय ।

साधनोंकी सहायता और सुयोग ।

छट्ठा अध्याय ।

शिल्पकार ।

सातवाँ अध्याय ।

उत्साह और साहस ।

आठवाँ अध्याय ।

कार्यकुशल मनुष्य ।

नौवाँ अध्याय ।

धनका सदुपयोग और दुरुपयोग ।

दशवाँ अध्याय ।

अपना सुधार-सुविधायें और कठिनाइयाँ ।

हुए---आत्मसम्मान---शिक्षाके विषयमें नीच विचार---हमारा सर्वप्रिय साहित्य---अतिके विनोदसे हानि---वैंजामिन कान्सटेंट---उनके ऊँचे विचार और नीच रहन सहन---थीअरी; उनके उत्तम गुण---अखंड परिश्रमके विषयमें चार्ल्स जेम्स फक्सके विचार---असफलतासे मिली हुई शिक्षा और शक्ति---हंटर, वाट, डेवी, मुहम्मद गोरी इत्यादि---आपत्ति और कठिनाईसे लाभ---अश्रान्त परिश्रमके विषयमें डी ऐलिमवर्ट, कैसिमी रेनाल्ड्स और हेनरी क्लेके विचार---कठिनाइयोंसे सामना; एलेगजेंडर मेरे, ब्रह्मेंद्र स्वामी, विश्रामजी घोले, नारायण मेघाजी लोखंडे, सर टी. मुत्तु स्वामी ऐय्यर---ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, श्रीधर गणेश जिनसीवाले, भास्कर दामोदर पालंदे, वामन शिवराम आपटे, रामचन्द्र विठोबा धामणकर, श्यामाचरण सरकार, मधुस्वामी ऐय्यर---एक फ्रांसीसी संगतराश अध्यापक हो गया---सेमुएल रेमिलीका आत्मोद्धार---अध्यापक ली; उनका अश्रांत परिश्रम और उनकी बहुभाषाविज्ञता---प्रौढ़ अवस्थामें विद्याभ्यास करनेवाले---स्पेलमेन, ड्रइडन, स्काट, बुकेकियो इत्यादि---महामूढ़ लड़के जिन्होंने बड़े होनेपर बहुत नाम पाया; पाइट्रे डी कौरटोना, न्यूटन, क्लार्क इत्यादि---एक मूढ़की कथा---रामदुलाल सरकार और जमसेदजी जीजीभाईका घोर परिश्रम---सफलता धुन बाँधकर काम करनेपर निर्भर है..............पृष्ठ १५९ से २०७ तक ।

ग्यारहवाँ अध्याय ।

उदाहरण---आदर्श ।

उदाहरण प्रभावशाली शिक्षक है---चरित्रका प्रभाव---बच्चोंके लिए मातापिताका उदाहरण---हरएक कामके साथ परिणामोंका एक क्रम बँध जाता है---मनुष्यकी जिम्मेदारी---प्रत्येक मनुष्य उत्तम उदाहरणके लिए दूसरोंका ऋणी है---काम करके दिखाओ, सिर्फ कहनेसे काम नहीं चलता---मिसेज विजहोम---ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और बाबू हरिश्चन्द्र---सदाचारके आदर्श---सत्संगतिके विषयमें फ्रांसिसका विचार---गंगाप्रसाद वर्मा और जान स्टर्लिंगके चरित्रका प्रभाव---दूसरोंपर शिल्पकारकी चतुराईका प्रभाव---वीरोंका उदाहरण कायरोंको उत्साहित करता है---जीवनचरितोंकी उपयोगिता---जीवनचरितोंका मनुष्योंके जीवनपर प्रभाव---ऐलफाइरी, लोयोला, लूथर, वुल्फ---प्रसन्नताका उदाहरण---दूसरोंपर डाक्टर आर्नल्डका प्रभाव---सर सिंक्लेरका जीवन...पृष्ठ २०८ से २२३ तक ।

बारहवाँ अध्याय।

सदाचार और सुजनता।

देशी उदाहरणोंकी वर्णानुक्रमणिका।

“ सबसे बढ़कर यह बात है—जिस तरह दिनके बाद रात अवश्य आती है उसी तरह जो मनुष्य अपने अंतःकरणके साथ सच्चाईका वर्ताव करता है वह दूसरोंके साथ कभी खोटा वर्ताव नहीं करता।”

—शेक्सपियर।

*
*
*

“ यदि मुझे किसी नवयुवकको उपदेश देना हो तो मैं उससे यह कहूँगा—अपनेसे अच्छे मनुष्योंकी संगति करो । तुमको पुस्तकोंमें और अपने जीवनमें ऐसे ही मनुष्योंकी सत्संगति करनी चाहिए; क्योंकि तुम्हारा सबसे अधिक कल्याण इसीमें है। अच्छी बातोंकी कदर करना सीखो; जीवनका सारा सुख इसी बातपर निर्भर है। यह देखो कि महात्माओंने किन बातोंकी कदर की थी। उन्होंने महत्त्वपूर्ण बातोंकी कदर की थी। जो मनुष्य संकीर्णविचारोंके होते हैं वे नीच बातोंकी प्रशंसा और भक्ति करते हैं।”

—थैकरे।

स्वावलम्बन ।
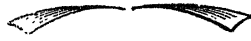
पहला अध्याय ।

जातीय और व्यक्तिगत स्वावलम्बन ।

" अपने सहायक आप हो, होगा सहायक प्रभु तभी,
बस चाहनेसे ही किसीको सुख नहीं मिलता कभीं ।

—मैथिलीशरण गुप्त ।

किसी देशकी तुलना अंतमें उसके व्यक्तियोंकी योग्यतासे होती है । "

—जे. एस. मिल ।

:म व्यवस्थाओंसे—कायदे-कानूनोंसे बहुत कुछ लाभकी आशा करते हैं; मनुष्यसे बहुत कम । "

—बी. डिजरेली ।

ब्क छोटी सी कहावत है कि " ईश्वर उनकी सहायता करता है जो स्वयं अपने भरोसे पर काम करते हैं । " इसमें मानवी अनुभवका ारा हुआ है । स्वावलम्बनका भाव प्रत्येक मनुष्यकी उन्नतिका कारण दि बहुतसे मनुष्योंमें यह भाव पैदा हो जाता है, तो इससे जातीय उत्पत्तिं होती है । दूसरोंकी सहायतासे बहुधा हानि होती है, परन्तु भरोसे पर काम करनेसे अवश्यमेव शक्तिका संचार होता है । यदि जातिके काम सरकार कर दिया करे अथवा उसे सहायता दिया करे; प्त जातिके मनुष्योंमें स्वयं काम करनेका उत्साह कम हो जायगा और

उनको काम करनेकी उतनी आवश्यकता भी न रहेगी। ऐसा करनेसे वे शिथिल और निराश्रय हो जायँगे।

उत्तमसे उत्तम कायदे-कानून और उत्तमसे उत्तम संस्थायें भी मनुष्यको कर्मयुक्त सहायता नहीं दे सकतीं। वे मनुष्यको अपनी उन्नति करनेमें स्वतंत्र बना सकती हैं—इससे अधिक वे कुछ नहीं कर सकतीं। परन्तु बहुत कालसे हम यह मानते आये हैं कि सुख संस्थाओंसे मिलता है न कि हमारे ही चरित्रसे। अतएव हम अपनी उन्नतिके लिए सरकारी नियमोंको इतना आवश्यक समझते हैं जितना वे वास्तवमें नहीं हैं। परन्तु लोग अब समझते जाते हैं कि सरकारका कर्तव्य हमारे लिए काम कर देना नहीं है, किन्तु हमारी—जान, माल और स्वतंत्रताकी—रक्षा करना है। यदि नियमोंका बुद्धिमानीके साथ प्रयोग किया जाय, तो हम थोड़े ही स्वार्थत्यागसे मानसिक अथवा शारीरिक परिश्रमके फलोंको भोग सकते हैं; परन्तु कठोरसे कठोर नियम भी आलसी मनुष्योंको उद्योगी, अमितव्ययी मनुष्योंको मितव्ययी और मदमत्तोंको संयमी नहीं बना सकते। ऐसे सुधार हरएक मनुष्य अपने परिश्रम, मितव्यय और स्वार्थत्यागके द्वारा ही कर सकता है। अच्छे स्वत्व पानेसे नही, किन्तु अच्छी आदतें डालनेसे ये काम हो सकते हैं।

यह बात बहुधा देखी जाती है कि जैसी प्रजा होती है वैसा ही राज्य होता है। जो राज्य प्रजाकी अपेक्षा उन्नत अवस्थामें है, वह अवश्य बिगड़कर प्रजाके समान हो जायगा और इसी तरह जो राज्य प्रजाकी अपेक्षा गिरी हुई दशामें है वह अंतमें उठकर उसीके समान उन्नत हो जायगा। जैसे पानीका धरातल ऊँचा नीचा न रहकर एकसा हो जाता है, उसी प्रकार राज्य और उसके नियम भी प्रजाके चरित्रके अनुकूल हो जाते हैं; यह प्रकृतिका नियम है। यदि प्रजा श्रेष्ठ है, तो राज्यसत्ता भी श्रेष्ठ होगी और यदि प्रजा अज्ञानी और भ्रष्ट है तो राजसत्ता भी उसीके समान होगी। यह एक सिद्धांत है कि किसी जातिकी योग्यता और बल उसकी राज्यसत्ताकी अपेक्षा उसके मनुष्योंके चरित्र पर कहीं जियादा निर्भर है। क्योंकि जाति क्या है? वह बहुतसे मनुष्योंका समूह ही तो है; और सभ्यता क्या है? वह समाजके पुरुषों, स्त्रियों और बालकोंकी उन्नतिका रूप ही तो है।

जातीय और व्यक्तिगत स्वावलम्बन।

जातिकी उन्नति उसके पृथक् पृथक मनुष्यके परिश्रम, उद्योग और सच्चाईसे मिलकर होती है। इसी तरह जातीय अवनति प्रत्येक मनुष्यके आलस्य, स्वार्थपरता और दुराचरणके समूहका नाम है। सामाजिक कुप्रथायें मनुष्यके दुराचारी जीवनसे ही पैदा होती हैं और ये तभी दूर हो सकती हैं जब मनुष्य अपना जीवन और चरित्र सुधार ले। यदि सरकार कानून बनाकर इन्हें दूर करना चाहे, तो ये कुप्रथायें फिर किसी दूसरे रूपमें प्रकट हो जायँगी। अगर यह मत ठीक है तो हमको नियमोंको बदलने और अच्छा बनानेका प्रयत्न न करना चाहिए, किन्तु मनुष्योंको स्वयं उन्नत होनेमें सहायता और उत्तेजना देनी चाहिए; यही सर्वोत्तम देश-भक्ति और परोपकार है।

बाह्य शासनकी अपेक्षा हमारा आंतरिक चरित्र हमारे लिए बहुत कामकी चीज है। किसी निर्दय राजाका दास होना बहुत ही बुरा है; परन्तु अज्ञान, स्वार्थ और दुराचरणका दास बनना उससे भी बुरा है। ऐसे दास केवल राजा अथवा राज्यके बदलनेसे स्वतंत्र नहीं हो सकते। यह सोचना केवल भ्रम है। व्यक्तिगत चरित्र ही स्वतंत्रताका मूलाधार है और इसीसे सामाजिक रक्षा और जातीय उन्नति प्राप्त हो सकती है।

मानवी उन्नतिके विषयमें हम अब भी भूलें किया करते हैं। कुछ लोग विक्रमादित्य और भोजकी याद करते हैं और कुछ लोग सरकारी नियमोंकी आवश्यकता समझते हैं। "हमारा कल्याण उसी समय होगा जब विक्रमादित्य सरीखा राजा राज्य करेगा," जिन लोगोंका ऐसा विचार है उनका मतलब यह है कि हमको कुछ न करना पड़े, कोई दूसरा ही हमारे बदले सब कुछ कर दिया करे। यदि ऐसे विचारको आश्रय दिया जाय, तो हमारे स्वतंत्र विचार जाते रहेंगे और अवनतिका मार्ग खुल जायगा। विक्रमादित्यका सहारा ढूँढ़ना मानो उनकी शक्तिकी पूजा करना है और इसका फल वैसा ही अकल्याणकारी होगा जैसा केवल धनकी भक्ति करनेसे होता है। जातियोंमें फैलानेके लिए इससे कहीं अच्छा विचार स्वावलम्बनका विचार है; और जब मनुष्य इसे पूर्णतया समझ जायँगे और इसके अनुसार चलने लगेंगे तब फिर विक्रमादित्यका आश्रय कदापि न ढूँढ़ेंगे। इसी तरह सरकारी नियमोंकी आवश्यकता समझना भी केवल भ्रम है। हमारी उन्नति हमारे ही

ऊपर निर्भर है। परिश्रम और सावधानीके साथ उद्योग करनेसे बहुत कुछ हो सकता है। भारतवासियोंमें अभी इस विचारका संचार नहीं हुआ है।

प्रत्येक जातिकी उन्नति उस जातिके मनुष्योंकी बहुतसी पीढ़ियोंके विचार और परिश्रमका ही फल है। भिन्न भिन्न श्रेणियोंके धीर और परिश्रमी मनुष्योंने अर्थात् कृषक, खानखोदनेवाले, आविष्कारक, अनुसंधानकर्ता, कारीगर, शिल्पकार और दस्तकार, कवि, दार्शनिक और राजनीतिज्ञ इन सबोंने ही मिलकर इस बड़े फलको पैदा किया है। एक पीढ़ीने दूसरी पीढ़ीके कामको उन्नति दी और इसी तरह शनैः शनैः उन्नति होती चली गई। उत्तम कार्यकर्त्ताओंकी श्रेणीने व्यवसाय, विज्ञान और शिल्पविद्याकी व्यवस्था कर दी, और इस तरह हमको अपने पूर्वजोंके चातुर्य और परिश्रम द्वारा प्राप्त की हुई संपत्ति मिल गई है। अब हमारा कर्तव्य यह है कि इसे उन्नति देकर अपने बालबच्चोंके लिए छोड़ जायँ।

जिन जातियोंमें स्वावलम्बनका जोश रहा है उनकी सदैव उन्नति हुई है। अँगरेजोंकी जाति इसका उदाहरण है। अँगरेजोंमें सदैव ऐसे मनुष्य होते रहे हैं, जो अपने देशके अन्य मनुष्योंसे बढ़े-चढ़े रहे हैं। इनके अतिरिक्त बहुतसे छोटे और अल्पप्रसिद्ध मनुष्यों द्वारा भी उन्नति हुई है। भारतवासियोंमें जब स्वावलम्बनका भाव मौजूद था तब यह देश भी संसारमें उन्नतिके शिखर पर था। चाहे इतिहासमें सेनापतियोंके ही नाम लिखे जायँ, परन्तु अधिकांश विजय एक एक सैनिककी ही शूरवीरतासे होती है। बहुतसे आदमियोंके जीवनचरित नहीं लिखे गये, परन्तु उन्होंने सभ्यता और वृद्धिमें उतना ही योग दिया है जितना उन भाग्यशाली महात्माओंने, जिनके जीवनचरित लिपिबद्ध हो गये हैं। छोटेसे छोटा मनुष्य, जिसने औरोंको परिश्रम, उद्योग, निर्व्यसनता और सत्यपरताका उदाहरण दिखाया है अपने देशकी वर्तमान और भावी उन्नति पर बड़ा प्रभाव डालता है; क्यों कि उसका जीवनचरित गुप्तरीतिसे दूसरोंके जीवनोंमें प्रवेश कर जाता है और भविष्यमें सदैवके लिए उत्तम उदाहरणका प्रसार करता है।

यह हमारा प्रतिदिनका अनुभव है कि उद्योगशील मनुष्य दूसरोंके जीवन और कर्मों पर सबसे अधिक स्थायी प्रभाव डालता है और वास्तवमें सर्वोत्तम व्यावहारिक शिक्षा देता है। विद्यालय और पाठशालायें उन्नतिकी केवल

ारम्भिक शिक्षा देती हैं। घरोंमें, रास्तोंमें, बंकोंमें, कारखानोंमें, खेतोंमें, शेल्पशाखाओंमें और मनुष्योंके नित्यके गमनागमनके स्थानोंमें जो जीवन-ांबंधी शिक्षा मिलती है वह पाठशालाओंकी शिक्षासे कहीं जियादा प्रभाव-ाालिनी होती है। यह शिक्षा हमको मानवी जीवनके कर्तव्य और व्यवहार सेखलाती है—यह पुस्तकों द्वारा कदापि प्राप्त नहीं हो सकती। एक विद्वानने मपने सारगर्भित शब्दोंमें कहा है कि "अध्ययन करनेसे हम अध्ययनसे काम लेना नहीं सीख जाते। यह बात तो अध्ययनके उपरान्त केवल निरी-क्षणसे—अनुभवसे आती है।" मनुष्य अध्ययनकी अपेक्षा काम करनेसे अधिक निपुण होता है। साहित्यकी अपेक्षा जीवन, अध्ययनकी अपेक्षा कार्य और जीवनचरितोंके स्वाध्यायकी अपेक्षा चरित्र मनुष्यजातिकी त्रुटियोंको दूर करते हैं और उसको सदैव उन्नत बनाये रहते हैं।

तो भी बड़े और विशेष कर सज्जन मनुष्योंके जीवनचरित दूसरोंको सहायता एवं उत्तेजना देनेमें बड़े शिक्षाप्रद और उपयोगी होते हैं। कुछ महात्माओंके जीवनचरित तो धार्मिक पुस्तकोंके समान हैं। क्यों कि वे अपने और संसारके कल्याणके लिए जीवनको श्रेष्ठ बनाना, विचारोंको ऊँचे रखना, और परिश्रम करना सिखलाते हैं। वे अपने पैरोंपर आप खड़े रहने, अपने उद्देश्यकी पूर्तिमें धैर्यपूर्वक लगे रहने, अश्रान्त परिश्रम करने, और सच्चाईपर दृढ़ रहनेके बहुत उत्तम उदाहरण हैं और खुले शब्दोंमें हमको यह बतलाते हैं कि प्रत्येक मनुष्यमें अपनी उन्नति करनेकी कितनी शक्ति मौजूद है। वे हमको यह भी साफ साफ बतलाते हैं कि आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरताके द्वारा छोटेसे छोटे मनुष्य भी प्रतिष्ठापूर्वक अपना निर्वाह कर सकते हैं और वास्तविक यश प्राप्त कर सकते हैं।

यह बात नहीं है कि किसी एक जाति अथवा श्रेणीके ही मनुष्य विज्ञान, साहित्य और कला-कौशलमें विद्वान् हुए हों। ऐसे मनुष्य विद्यालयों, कार-खानों और किसानोंके घरोंमें, निर्धन लोगोंके झोंपड़ों और धनाढ्योंके मह-लोंमें—सभी स्थानोंमें हुए हैं। कई बड़े बड़े धार्मिक नेता साधारण स्थितिके मनुष्य थे। कभी कभी अत्यंत निर्धन मनुष्य भी सर्वोच्च पदोंपर पहुँच गये हैं। बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ भी, जो अटल मालूम होती थीं, उनके मार्गमें बाधक नहीं हुईं। बल्कि इन्हीं कठिनाइयोंने उनकी परिश्रम और सहनशील-

ताकी शक्तियोंको उत्तेजित करके और उनके सोते हुए भावोंको जगाकर उनको बहुधा बड़ी सहायता दी है। कठिनाइयोंका सामना करके सफलता प्राप्त करनेके इतने उदाहरण मिलते हैं कि हमको यह मानना पड़ता है कि मनुष्य जो इच्छा करे वही कर सकता है। इस प्रकारके कुछ उदाहरण लीजिए।

संस्कृतके सर्वश्रेष्ठ कवि **कालिदासके** विषयमें जो कुछ मालूम है उसके अनुसार वे चरवाहे थे। वे इतने मूर्ख थे कि एकबार जिस डाल पर बैठे थे उसीको काट रहे थे। अपने विवाहके समय तक वे सर्वथा अशिक्षित रहे; यहाँतक कि साधारण शब्दोंका शुद्ध उच्चारण भी न कर सकते थे। कुरल-काव्यके रचयिता और तामिल भाषाके सर्वोत्तम कवि **वल्लुवर** परिया जातिके जुलाहे थे। उनकी भगिनी **औवेयार** भी सुप्रसिद्ध कवि थी। हिन्दीके श्रेष्ठ कवि और समाजसुधारक महात्मा **कबीरदास** जुलाहे थे। उनके उपदेश लोगोंको इतने पसंद आये कि उनका एक पंथ अथवा संप्रदाय ही जुदा हो गया। मराठीके प्रसिद्ध लेखक **नामदेव** दर्जी थे। वल्लभाचार्यके शिष्य हिन्दी-कवि **कृष्णदास** शूद्र थे। शेख नामक एक मुसलमान महिला हिन्दीकी सुकवि हो गई है; उसके छन्द बड़े मनोहर हैं। वह रँगरेजिन थी और रँगाईका काम किया करती थी। **खगनिया** नामक एक स्त्रीने हिन्दी पद्योंमें बहुत अच्छी पहेलियाँ लिखी हैं। वह उन्नाव जिलेकी रहनेवाली एक तेलिन थी। लार्ड ऐलगिनके आनरेरी सिविल सर्जन रायबहादुर **विश्रामरामजी घोले** अहीर थे। **राणू रावजी आरू** माली थे।

भाट जाति भी बिना ख्याति पाये नहीं रही है। महाराज पृथ्वीराज-द्वारा सम्मानित महाकवि **चंदबरदाई** ब्रह्मभट्ट थे। पृथ्वीराजके यहाँ उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। वे 'पृथ्वीराजरासो' नामक ग्रंथ बनाकर अपनी कीर्ति अमर कर गये हैं। वे केवल कवि ही न थे, किन्तु अच्छे सैनिक भी थे। एक बार उन्होंने पृथ्वीराजके शत्रु भीमंगको युद्धमें परास्त किया था। विजयपाल-रासाके रचयिता **नल्लसिंह** भाट थे। **गंगभाटका** नाम तो प्रसिद्ध है ही। **पूरनमल भाट** अलवर दरबारके कवि थे। ठाकुरशतकके कर्ता प्रसिद्ध कवि **ठाकुर** भाट थे। इनके पुत्र **धनीराम** भी अच्छे कवि थे।

दरिद्र मनुष्योंने अनेक विषयोंमें उन्नति करके ख्याति पाई है और अपने उद्योगसे संसारको लाभ पहुँचाया है। बहुतसे लेखक और कवि दरिद्र थे।

चाणक्य एक निर्धन ब्राह्मणके पुत्र थे। वे स्वयं भी बड़े निर्धन थे। चाणक्य जब पाटलिपुत्र (पटना) में नंदराजाके दरबारमें गये थे तब वहाँके पंडितों और दरबारियोंने उनके फटे और मलीन वस्त्र देखकर उनका बड़ा उपहास किया था। परन्तु चाणक्यने अपने उद्योगसे ऐसी दरिद्रतामें भी विद्या प्राप्त की। कामधेनु और विद्या सदैव फल देती हैं। अंतमें चाणक्यका बड़ा सम्मान हुआ। महाकवि गोस्वामी तुलसीदासके विषयमें बहुसम्मति यही है कि वे अत्यंत दरिद्र थे। सूरदास भी अत्यंत दरिद्र थे। वे आठ वर्षकी अवस्थामें ही अपने पिताको छोड़कर मथुरा चले आये थे। सम्राट् बाबरके दरबारके हिन्दी कवि नरहरिके पिता बड़े दरिद्री थे। संस्कृत और बङ्गभाषाके प्रसिद्ध विद्वान् ईश्वरचंद्र विद्यासागर परम दरिद्री थे। हिन्दीके सुकवि कुम्भनदास भी बहुत दरिद्री थे। वे वल्लभाचार्यके शिष्य थे और एकबार सम्राट् अकबरने फतहपुर सीकरीमें इनका बड़ा सम्मान किया था। चैतन्य महाप्रभुने दरिद्र घरमें जन्म लिया था। इसी तरह गुरु नानक, अक्षयकुमार, द्वारकानाथ, कृष्णदास इत्यादि अनेक महात्मा निर्धन घरोंमें उत्पन्न हुए थे। प्रसिद्ध मासिकपत्र ' ईस्ट एंड वेस्ट ' के सुयोग्य सम्पादक बहरामजी मेरबानजी मलबारी परम दरिद्र थे। वे बाल्यावस्थामें ही अनाथ हो गये थे और संसारमें उनका कोई आश्रयदाता नहीं था। प्रसिद्ध कोशकार वामन शिवराम आपटे अत्यंत दरिद्र थे। मद्रास हायकोर्ट के जज सर मथुस्वामी ऐयर ऐसे दरिद्र थे कि उनको १२ वर्षकी अवस्थामें ही एक रुपया मासिककी नौकरी करनी पड़ी थी। कलकत्ता हाईकोर्टके दुभाषिया श्यामाचरण सरकार भी बाल्यकालमें परम दरिद्र थे।

राजनीतिज्ञों और सैनिकोंको भी लीजिए। द्रोणाचार्य अत्यंत दरिद्र थे। जो अपने बालकको दूध मोल लेकर भी न पिला सकते थे, उनके पास भला क्या रक्खा था ! राजा बीरबलने गंगादास नामक एक निर्धन ब्राह्मणके यहाँ जन्म लिया था। वे केवल नीतिज्ञ ही नहीं, किन्तु अच्छे सैनिक भी थे। युद्धमें ही उनकी जान गई। उनमें और भी गुण थे। उनकी हाजिर-जवाबी तो ऐसी प्रसिद्ध है कि प्रायः सभी भारतवासियोंको उनके दो चार चुटकुले याद रहते हैं। ' बीरबल-विनोद ' मैं उनकी हाजिर-जवाबीके अनेक नमूने दिये हैं। वे हिन्दीमें कविता भी बड़ी ललित और मनोहर करते थे।

सम्राट् अकबर उनके गुणों पर ऐसे लोटपेट थे कि उन्होंने उनकी मृत्युके बाद दो दिन तक भोजन भी न किया था ! सम्राट् अकबरके कोषाध्यक्ष राजा **टोडरमल** अत्यंत दरिद्र थे। महाराज रणजीतसिंहके सरदार और परम-सहायक **फूलासिंहके** पिता बड़े निर्धन थे। एकबार जब घरमें कुछ खानेको न रहा तब वे दिल्लीमें नौकरी ढूढ़नेके लिए आये थे। फूलासिंहकी वीरता बहुत प्रसिद्ध है। उन्होंने महाराज रणजीतसिंहको काश्मीर पर विजय पानेमें बड़ी सहायता दी थी। महाराजने टीरीका युद्ध भी उन्हींके बल पर जीता था। फूलासिंह जातिके जाट थे।

व्यवसाय और कलाकौशल्यमें भी अनेक दरिद्रोंने उन्नति की है। निर्णयसागर प्रेसके संस्थापक **सेठ जावजी दादाजी चौधरी** अत्यंत दरिद्र थे। उनके पितामह बंबईमें हवालदार थे और उनके पिता एक पेटीवालेके यहाँ बहुत छोटी नौकरी करते थे। जावजीका जन्म सन् १८३९ ईसवीमें हुआ। वे अपने पिताके इकलौते पुत्र थे। जब वे सात वर्षके हुए तब उनके पिताका देहान्त हो गया। एक तो वे पहले ही दरिद्र थे और दूसरे इस घटनासे उनके ऊपर आपत्तिका पहाड़ टूट पड़ा। उनकी माता तरकारी बेचकर निर्वाह करने लगी। जब जावजीकी अवस्था दस वर्षकी हुई और वे कुछ काम करनेके योग्य हुए तब वे दो रुपये मासिक पर 'अमेरिकन मिशन प्रेस' में टाइप घिसनेके काम पर नौकर हो गये। यहाँ उन्होंने टाइप-शिल्पसंबंधी प्रारम्भिक शिक्षा पाई, जिसमें उन्होंने अंतमें बड़ा नाम पाया। इस प्रेसमें वे कई वर्षों-तक नौकर रहे और जब यह प्रेस 'टाइम्स आफ इंडिया' ने खरीद लिया तब वे वहाँ भी डेड़ वर्ष तक काम करते रहे। तत्पश्चात् वे 'इन्दु-प्रकाश प्रेस' में १३) रुपये मासिक वेतन पर नौकर हो गये।। फिर वे ओरिएण्टल प्रेसमें टाईप ढालनेके काम पर नौकर हो गये और उन्हें ३०) रु० मासिक मिलने लगे। यहीं पर उन्होंने टाइप ढालनेके कामका ज्ञान प्राप्त किया और कुछ समयमें एक निजी कारखाना खोलनेका निश्चय किया।

सन् १८६४ में उन्होंने टाइप ढालनेका निजी कारखाना खोला और पूर्व अनुभवके कारण उनको इस काममें अच्छी सफलता हुई। उन्होंने शीघ्र ही मराठी टाइप ढालनेका एक नया ढंग निकाला और उनके टाइप अन्य सब कारखानोंके टाइपोंसे अधिक सुन्दर और उत्तम बनने लगे। सर्वसाधारणने

उनको बहुत पसंद किया और उनकी विक्री खूब बढ़ गई। इस काममें सफलता पाकर जावजीने अपना एक प्रेस खोल दिया और उसका नाम 'निर्णयसागर' रक्खा। इस काममें भी उन्होंने वैसी ही चतुराई दिखाई और देशी भाषाओंकी बहुत अच्छी पुस्तकें छापनेका काम प्रारंभ कर दिया। उन्होंने सब तरहके बहुत सुन्दर टाइप बनाये। फिर तो बम्बईकी सरकारने भी अपनी बहुमूल्य संस्कृत पुस्तकें इसी प्रेसमें प्रकाशित कराईं। स्कूलोंके लिए गुजराती और मराठीकी पुस्तकें भी यहीं प्रकाशित होने लगीं। जावजीने इस प्रेसको उपयोगी और उच्चश्रेणीका बनानेमें कोई बात न उठा रक्खी। वे स्वयं भी नामी नामी विद्वानोंकी पुस्तकें प्रकाशित करके बहुत थोड़े मूल्यमें बेचने लगे। इससे सर्व साधारणमें शिक्षाका बड़ा प्रचार हुआ।

उन्होंने अपने यहाँसे तीन मासिकपुस्तकें भी निकालना आरंभ किया, जिनके नाम बालबोध, काव्यमाला और काव्यसंग्रह हैं। इन पुस्तकोंने भी जनसाधारणको बड़ा लाभ पहुँचाया। जावजीने कितनी सफलता प्राप्त की, इसका कुछ अनुमान इस बातसे हो सकता है कि जावजीके जीवनकालमें ही उनके प्रेसके सब कर्मचारियोंका वेतन मिलकर ३०००) मासिक था और अब यह रकम लगभग दूनी हो गई है। गवर्नमेण्टने उनके कामसे प्रसन्न होकर उनको जे. पी. की उपाधिसे विभूषित किया था।

जावजीका चरित्र भी बड़ी उच्चश्रेणीका था। वे बड़े दयालु और उदारचित्त थे। वे दीनदुखियोंसे बड़ा प्रेम रखते थे और उनकी सहायता करनेको सदैव तत्पर रहते थे। एक बार उनके 'बालबोध' मासिक पत्रकी उत्तमतासे प्रसन्न होकर गायकवाड़ श्रीसयाजीराव महाराजने उनको १०००) रुपया का पुरस्कार दिया; परन्तु उदारचित्त जावजीने यह रुपया अपने पास न रखकर बालबोधके सम्पादकको दे दिया। जावजीके जीवनमें सबसे अधिक विचित्र बात यह है कि बहुत थोड़ीसी शिक्षा पाकर ही उन्होंने इतनी उन्नति कर ली। व्यवसायमें अपने उद्योग, परिश्रम और सच्चाईके कारण उनकी, आश्चर्यजनक वृद्धि हुई और वे सर्वसाधारणके प्रिय बन गये। उनकी मृत्युसे छापेकी कला और व्यवसायको बड़ी हानि हुई।

कृष्णपान्तीका जन्म एक दरिद्र घरमें हुआ। उनको बाल्यावस्थासे ही अपने सिरपर नाजकी गठरी उठाकर बाजारमें बेचने जाना पड़ता था। वे

ही कृष्णपान्ती अपने उद्योग और अध्यवसायसे ऐसे धनाढ्य होगये कि एक दुर्भिक्षके अवसर पर उन्होंने तीन लाख रुपयेके चावल बँटवा दिये ! धनाढ्य रामदुलाल सरकार पहले ऐसे निर्धन थे कि पाँच रुपया मासिक पर नौकरी करते थे। बाबू हेमचन्द्र, जी. एस. परांजपे, राजाबहादुर दीनदयाल फोटोग्राफर, व्यंकटेश्वर प्रेसके मालिक सेठ गंगाविष्णु और सेठ खेमराज श्रीकृष्णदास इत्यादिके विषयमें भी यही कहा जा सकता है।

उपर्युक्त महाशयोंने अपने प्रारम्भिक जीवनमें अनेक कठिनाइयोंको सहन करके अपनी प्रतिभा और उद्योगके पराक्रमसे बड़ा यश लाभ किया। यदि वे शुरूसे ही धनाढ्य होते तो वही धन दरिद्रताकी अपेक्षा उनकी उन्नतिमें अधिक बाधक होता। उन्होंने केवल धैर्य और उद्योगके बलसे अत्यंत निम्न श्रेणीसे उन्नति करते करते बड़ी कीर्ति पाई और समाजका बड़ा उपकार किया। इस देशमें और अन्य देशोंमें इस तरहके इतने उदाहरण मिलते हैं कि अब यह बात असाधारण नहीं मालूम होती। बहुतसे मनुष्योंके विषयमें यह कहा जा सकता है कि उनके प्रारम्भिक कष्ट और कठिनाइयाँ उनकी सफलताके लिए अत्यंत आवश्यकीय और अनिवार्य थीं। अटूट परिश्रमके बदलेमें उनको यश मिला। याद रक्खो कि आलसी मनुष्यके लिए किसी प्रकारकी उत्कृष्टता प्राप्त करना सर्वथा असंभव है। आत्मोत्सर्ग, मानसिक उन्नति एवं व्यवसायमें केवल उद्योगी मनुष्य ही सफलता प्राप्त कर सकता है। मनुष्यका जन्म चाहे जैसे धनाढ्य या प्रतिष्ठित घरमें हो, परन्तु उसे यथार्थ कीर्ति केवल अटूट परिश्रमके द्वारा ही मिल सकती है। धनाढ्य मनुष्य रुपया देकर दूसरोंसे अपना काम करा सकता है; परन्तु वह दूसरोंके द्वारा अपना विचार-कार्य नहीं करा सकता और न वह किसी प्रकारकी आत्मोन्नति ही खरीद सकता है।

मध्यम श्रेणीके मनुष्योंने भी ख्याति प्राप्त की है। संस्कृतके अगाध पंडित और अनेक भाषाओंके जानकार राजाराम रामकृष्ण भागवतके पिता बम्बईमें एक साधारण कर्मचारी थे। गुजराती भाषाके सुप्रसिद्ध विद्वान् और अंगरेजीके लेखक गोवर्धनराम माधवराम त्रिपाठीके पिता साधारण व्यापारी थे। श्रीयुत जी. सुबरामनिया ऐयर और वोमेशचन्द्र बन्द्योपाध्यायके पिता वकील थे। सर फीरोजशाह मेहेरवानजी महता, दीन-

शाह ऐदलजी वाचा, पंडित अयोध्यानाथ और जस्टिस बदरुद्दीन तय्यबजीके पिता व्यापार करते थे। जस्टिस महादेव गोविन्द रानडेके पिता नासिकमें एक साधारण कर्मचारी थे।

पंडित मदनमोहन मालवीय, महात्मा तैलंग स्वामी, श्रीयुत गोपाल कृष्ण गोखले, डाक्टर राजेन्द्रलाल मित्र, लाला, हंसराज, 'एडवोकेट' के सम्पादक मुन्शी गंगाप्रसाद वर्मा, काशीनाथ त्र्यंबक तैलंग, सेठ माणिकचंद हीराचंद जे. पी. इत्यादिके पिता साधारण स्थितिके पुरुष थे। श्रीयुत दादाभाई नवरोजीके पिता पुरोहित थे, बल्कि यह काम उनके वंशमें कई पीढ़ियोंसे होता था।

फ्रांसके नेपोलियनके समान अनेक साधारण सैनिकोंने आश्चर्यजनक उन्नति कर ली है। मराठा-शक्तिके व्यवस्थापक महाराज शिवाजी कौन थे? उनके पिता शाहजी बीजापुरके बादशाहके यहाँ नौकर थे। शिवाजीने पूनामें रहकर युद्ध-कौशल सीखे थे। महाराज माधवराव सिंधिया साधारण सैनिक थे। पहले पहले उन्होंने पानीपतके युद्धमें कुछ ख्याति पाई। फिर वे राजा हो गये। दिल्ली और मथुरामें रहकर वे मुगल-सम्राट् शाह आलमके नामसे मुगल-राज्य पर भी शासन करते थे। उनके पिता रानोजी, बालाजी विश्वनाथ पेशवाके एक निम्न सेवक थे। मैसूरके सुलतान हैदरअली उसी देशके हिन्दूराजाके यहाँ एक साधारण सैनिक थे। बहमनी राज्यके संस्थापक शाह हसनगंगू एक ब्राह्मणके सेवक थे और अत्यंत दरिद्र थे। दिल्लीके शासक और सूरवंशके संस्थापक शेरशाह सूर एक साधारण सैनिक थे। दिल्लीके बादशाह कुतुब-उद्दीन ऐबक गुलाम थे।

इस लिए स्पष्ट है कि सर्वोत्तम उन्नतिके लिए यह जरूरी नहीं है कि मनुष्य धनी हो अथवा उसके पास सब तरहके साधन मौजूद हों। यदि ऐसा होता तो संसार सब युगोंमें उन मनुष्योंका ऋणी न होता, जिन्होंने निम्न श्रेणीसे उन्नति की है। जो मनुष्य आलस्य और ऐश आराममें अपने दिन बिताते हैं उनको उद्योग करने अथवा कठिनाइयोंका सामना करनेकी आदत नहीं पड़ती और न उनको उस शक्तिका ज्ञान होता है, जो जीवनमें सफलता प्राप्त करनेके लिए परम आवश्यक है। गरीबीको लोग मुसीबत समझते हैं, परन्तु वास्तवमें बात यह है कि यदि मनुष्य दृढ़तापूर्वक अपने

पैरोंपर खड़ा रहे तो वहीं गरीबी उसके लिए आशीर्वाद हो सकती है। गरीबी मनुष्यको संसारके उस युद्धके लिए तैयार करती है जिसमें यद्यपि कुछ लोग नीचता दिखाकर विलास-प्रिय हो जाते हैं, परन्तु समझदार और सच्चे हृदयवाले मनुष्य बल और विश्वासपूर्वक लड़ते हैं और सफलता प्राप्त करते हैं। एक विद्वान्‌का कथन है कि "मनुष्योंको न तो अपने धनका यथार्थ ज्ञान है और न अपनी शक्तिका। धनमें वे इतना महत्त्व समझते हैं जितना उसमें वास्तवमें नहीं है और शक्तिकी वे उतनी कदर नहीं करते जितनी उनको करनी चाहिए। अपने पैरोंपर आप खड़े रहनेसे और संयमका अभ्यास करनेसे मनुष्यको यह शिक्षा मिलती है कि वह अपनी ही कमाईकी रोटी खावे और अपनी आजीविकाके लिए और अपने अधिकारमें आये हुए उत्तम पदार्थोंकी वृद्धि करनेके लिए सच्चे दिलसे परिश्रम करे।"

सुख और भोगविलासके लिए, जिनकी ओर मनुष्य स्वभावतः झुकते हैं, धन ऐसा प्रबल प्रलोभन है कि वे मनुष्य बड़े धन्य हैं जो धनकुवेरोंके यहाँ पैदा होकर भी संसारमें कुछ काम कर दिखाते हैं, और भोगविलाससे हाथ उठाकर अपना जीवन परिश्रममें व्यतीत करते हैं। बड़े दुःखकी बात है कि हमारे देशके अनेक धनिक आलस्यमें, नाच-रंगमें और खेल-तमाशोंमें अपने समयको नष्ट कर देते हैं। इसके विपरीत इँग्लैण्ड इत्यादि देशोंके धनिक देश-सेवाको ही अपने जीवनका एक मात्र उद्देश्य समझते हैं और स्वदेशके लिए सब तरहका परिश्रम करते हैं और कष्ट उठाते हैं; यहाँ तक कि अपने देश और अपने भाइयोंके लिए युद्धमें अपनी जान तक दे देते हैं। पर भारतीय श्रीमान् इन बातोंसे कोसों दूर भागते हैं।

धनाढ्य मनुष्य भी अप्रसिद्ध नहीं रहे हैं। विदेशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मिलते हैं। भारतमें भी कभी कभी ऐसे रत्न चमक जाते हैं, जिन्होंने किसी न किसी रूपमें देशसेवा की है और जिनसे अन्य समृद्धिशाली मनुष्योंको शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। साहित्यमें सर **रवीन्द्रनाथ** ठाकुरको ले लीजिए जिनकी संसारमें आज धूम मची हुई है। आपके कुलमें सदैव विपुल लक्ष्मीका वास रहा है। आपको सवालाख रुपयेका पुरस्कार मिला; वह भी आपने 'शान्तिनिकेतन' विद्यालयके निमित्त दान कर दिया। विज्ञानमें अध्यापक **जगदीशचन्द्र** वसुको देखिए जिनके आश्चर्यजनक आविष्कारोंको

देखकर यूरोप और अमेरिकाके बड़े बड़े विज्ञानवेत्ता दाँतोंके तले उँगली दबाते हैं। राजनीतिमें राजा **सर टी. माधवराव**को लीजिए जिन्होंने ट्रावनकोर, इंदौर और बड़ौदाके दीवान रहकर उक्त राज्योंकी प्रजाका बहुत भारी उपकार किया और अतुल यश और सम्मान प्राप्त किया। आपने एक समृद्धिशाली कुलमें जन्म लिया था। आपके पिता भी ट्रावनकोरके दीवान थे। कर्मवीर देशभक्तोंमें महात्मा **मोहनदास करमचंद गाँधी**का नाम सदा अमर रहेगा जिन्होंने अपने देशभाइयोंके दुखोंको दूर करना ही अपने जीवनका एक मात्र उद्देश्य बना रक्खा है। आपके पितामह और पिता पोरबंदरके दीवान थे। जाति-हितैषियोंमें **सर सय्यद अहमद**का नाम लिया जा सकता है। उनके पितामह सम्राट् आलमगीर (द्वितीय) के राजमंत्री थे और उनके पिताको सम्राट् अकबर (द्वितीय) ने मंत्री-पद पर नियत करना चाहा था। उद्योग-धंधों और व्यापारमें **जे. एन. टाटा**का नाम छिपा नहीं है। दानी धनाढ्योंमें बम्बईके सेठ **प्रेमचन्द रायचन्द**को कौन नहीं जानता? आपने अपने ही उद्योगसे विपुल धन उपार्जन किया था। आपने अपने जीवनमें सब मिलाकर पचास, साठ लाख रुपये दान किये। आपने कई लाख रुपया कलकत्तेके विश्वविद्यालयको भी दिया, जिसके व्याजसे ऊँची परीक्षा पास करनेवालोंको एक छात्रवृत्ति दी जाती है, जो 'प्रेमचन्द-रायचन्द-स्कालर्शिप' के नामसे प्रसिद्ध है। अन्य समृद्ध कुलोंमें जन्म लेनेवालोंमें श्रीयुक्त **रमेशचन्द्रदत्त**, **सर तारकनाथ पालित**, भारतेन्दु बाबू **हरिश्चन्द्र**, महर्षि **देवेन्द्रनाथ ठाकुर**, रावराजा सर **दिनकरराव**, सर सेठ **हुकमचंद** इत्यादिके नाम लिये जा सकते हैं। परन्तु स्मरण रहे कि इस समय ऐसे मनुष्य भारतवर्षमें इनेगिने ही हैं।

अब विदेशोंमें चलिए। विदेशोंमें कई प्रकारके उदाहरण तो भारतवर्षसे भी अधिक और उत्तम मिलते हैं। वहाँ पर सैकड़ों नीच स्थितिके मनुष्योंने अमित यश प्राप्त किया है और अपने देशका ही मुख उज्ज्वल नहीं किया है, किन्तु समस्त संसारको लाभ पहुँचाया है। भारतवर्षमें, जाति-पाँतिका भेद बड़ा प्रबल है, इसलिए यहाँ नीच जातिके मनुष्य उठने नहीं पाते; परन्तु इंग्लैण्ड आदि देशोंमें, यह बात नहीं है। वहाँ ऐसे सैकड़ों मनुष्य विज्ञान, साहित्य, उद्योग, व्यवसाय इत्यादिमें बहुत बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त कर गये हैं।

स्वावलम्बन—

अँगरेजी भाषाके कविशिरोमणि **शेक्सपियर** किस जातिके थे, यह तो ठीक ठीक नहीं मालूम, परन्तु यह संदेहरहित है कि वे निम्नश्रेणीके थे। उनके पिता कसाई थे और बिक्रीके लिए जानवर पालते थे। यह भी कहा जाता है कि शेक्सपियर बाल्यकालमें ऊन कातनेका धंदा करते थे। कुछ लोगोंका कथन है कि वे स्कूलमें सहायक अध्यापक थे और फिर एक दलालके मुनीम हो गये थे। शेक्सपियर सचमुच कोई एक काम करनेवाले नहीं, किन्तु सर्व मानवजातिके सार मालूम होते हैं। किसीका मत है कि वे अवश्य नौकरी ही करते रहे होंगे और कोई उनके लेखोंकी अंतरस्थ साक्षीके आधार पर उन्हें किसी पादरीका मुहर्रिर अथवा घोड़ोंका व्यापारी ठहराते हैं। यह निश्चय है कि शेक्सपियर नाटकोंमें तमाशा करते थे और उन्होंने सब तरहके अनुभवों और निरीक्षणोंसे अपने ज्ञानभंडारकी पूर्ति की थी। वे चाहे जो काम करते हों, परन्तु यह निश्चय है कि वे ज्ञान प्राप्त करनेमें अवश्य प्रवीण रहे होंगे। उनके लेख अँगरेज जातिके चरित्र पर अब भी बड़ा शक्तिशाली प्रभाव रखते हैं।

कवि **बर्न्स** साधारण मजदूर थे। रुई कातनेकी मशीनके आविष्कारकर्ता सर **रिचर्ड आर्कराइट** और प्रसिद्ध चित्रकार **टर्नर** पहले नाईका काम करते थे। प्रसिद्ध नाटककार **बेन जानसन** जो एक हाथमें कन्नी और दूसरेमें किताब लेकर काम किया करता था, राज था। उसीके समान भूगर्भशास्त्रवेत्ता **ह्यूमिलर** और मूर्तिकार **ऐलेन कनिंघम** राज थे। बढ़इयोंमें प्राणिशास्त्रवेत्ता **जान हण्टर**, चित्रकार **रोमने** और **ओपी**, और मूर्तिकार **जान गिबन**का नाम लिया जा सकता है।

जुलाहोंके वर्गमेंसे गणितज्ञ **सिम्सन**, पक्षिविद्याविशारद **विलसन**, ईसाई-धर्म-प्रचारक डाक्टर **लिविंगस्टन**, कवि **टन्नाहिल** इत्यादिका प्रादुर्भाव हुआ है। मोचियोंको एडमिरल सर **क्लुडसले शोवैल**, निबंधलेखक **सेमुएल ड्रयू**, 'क्वार्टर्ली रिव्यू' के सम्पादक **गिफर्ड** इत्यादिका अभिमान हो सकता है।

दर्जी भी ख्याति पाये बिना नहीं रहे हैं। इतिहासज्ञ **जानस्टा**ने दर्जीका काम किया था। चित्रकार **जैक्सन** युवा अवस्थातक कपड़े सीनेका धंधा

करता रहा। वीर सर जान हाक्सवुड, जिसने फ्रांसवालोंके विरुद्ध पोशि-अर्सके युद्धमें विजय पाई थी, अपने आरम्भिक जीवनमें लंडनके एक दर्जीके यहाँ काम सीखा करता था। परन्तु दर्जियोंमें सबसे प्रसिद्ध निःसंदेह युनाइटेड स्टेट्स अमेरिकाके भूतपूर्व प्रेसीडेंट एंड्रयू जानसन हैं, जिनमें विचित्र चरित्र-बल और मानसिक शक्ति थी। एक बार जब वे वाशिंगटन नगरमें अपने एक व्याख्यानमें वर्णन कर रहे थे कि मैं अपने राजनैतिक जीवनके शुरूमें शहरका हाकिम हुआ था और फिर नियमव्यवस्थाके सभी अंगोंमें होकर बढ़ता चला गया, तब श्रोताओंमेंसे एक आवाज आई, कि " दर्जीकी श्रेणीसे उठे हो!" जानसनका स्वभाव था कि वे ऐसी चुटकी लेनेसे बुरा न मानते थे, उलटा उसको लाभदायक बना देते थे। बस उन्होंने तुरंत ही कहा कि, " कोई सज्जन कहते हैं कि मैं दर्जी था, परन्तु मैं इस बातसे किंचित् भी नहीं घबड़ाता; क्यों कि जब मैं दर्जी था, तो भद्रतामें और कपड़े बनानेमें प्रसिद्ध था; मैं अपने ग्राहकोंसे अपने वायदेमें कभी न चूकता था और सदैव उत्तम काम करता था।"

कार्डिनल वुलजी, डीफो कर्कवाइट, इत्यादि कसाई थे। भाफके अंजनके आविष्कारके संबंधमें न्यूकोमैन, वाट और स्टीफिन्सनके नाम प्रसिद्ध हैं। इनमेंसे पहला लुहार था, दूसरा गणितसंबंधी औजार बनानेवाला था और तीसरा अंजनमें कोयला झोंकनेवाला था। माइकल फेरेडे, जो एक लुहारके पुत्र थे, शुरूमें जिल्द बाँधनेका काम सीखते रहे और बाईस वर्षकी अवस्थातक यही धंदा करते रहे; वे अब दार्शनिकोंके शिरोमणि हैं।

ज्योतिःशास्त्रकी उन्नति करनेवालोंको लीजिए। कोपर्निकसका पिता लुक (पालिश) पकानेका धंदा करता था। कैपलर जर्मनीके एक भटियारेका लड़का था। डी एलिम्बर्टको एक गिरजेकी सीढ़ियों पर कोई रातको डाल गया था और एक जिला (पालिश) करनेवालेकी स्त्री उस बालकको उठा लाई थी और उसने उसका पालनपोषण किया था। लेपलेस एक दरिद्र किसानका लड़का था।

धर्मोपदेशकोंके पुत्रोंने इंग्लैण्डके इतिहासमें विशेषकर ख्याति पाई है। इनमेंसे समुद्री युद्धोंमें ड्रेक और नैलसनने, विज्ञानमें वोलेस्टन और

यंगने, शिल्पमें रेनोल्डस और विल्सनने, कानूनमें थर्लो और कैम्पवेलने और साहित्यमें एडिसन और गोल्डस्मिथने ख्याति पाई है। अनेक अँगरेज अफसर, जिन्होंने भारतीय युद्धोंमें नाम पाया है, धर्मप्रचारकोंके पुत्र थे। बल्कि बात तो यह है कि भारतवर्षको जीतनेवाले और उसपर शासन करनेवाले अनेक अँगरेज जैसे क्लाइब, वारन हेस्टिंग्ज, इत्यादि मध्यम श्रेणीके मनुष्य थे; उन्होंने अधिकतर कारखानोंमें काम किया था और वहींसे कार्यकुशलताकी आदतें सीखीं थीं।

इंग्लैंडके अतिरिक्त और देशोंमें भी ऐसे मनुष्योंके उदाहरणोंकी भरमार है, जिन्होंने अपने परिश्रम और प्रतिभासे गरीबीको श्रेष्ठ कर दिखाया है। पहले शिल्पमें लीजिए। क्लोड एक लेई बनानेवालेका लड़का था, गीफ्रूस रोटी बनानेवालेका और लिओपोल्ड राबर्ट घड़ीसाजका लड़का था। रोमनगरके पोपोंको देखिए। ग्रेगरी सप्तमका पिता बढ़ई था। सेक्सटस पंचमका पिता गड़रिया था; और एड्रियन षष्ठका पिता एक दरिद्र मल्लाह था। जब एड्रियन बालक था, तब वह रातमें पढ़नेके लिए तेल मोल नहीं ले सकता था और सड़कोंपर म्यूनीसिपैलिटी और गिर्जोंके लेम्पोंके पास जाकर पढ़ा करता था। इसी धैर्य और उद्योगसे उसने अपनी ख्याति प्राप्त की। फ्रान्समें ऐसे अनेक मनुष्योंके उदाहरण मिलते हैं, जो शुरूमें साधारण सैनिक थे, परन्तु अपने उद्योगसे उन्नति करके बड़े बड़े ऊँचे ऊँचे पदों पर पहुँच गये।

अँगरेजी राजसभा (पार्लियामेंट) के हौस आफ कामन्समें ऐसे बहुतसे स्वावलम्बशील मनुष्य सदैव रहे हैं, जो अँगरेजी जातिके उद्योगशील चरित्रके सच्चे प्रतिनिधि हैं, और व्यवस्था-विधायिनी सभाका यह कार्य प्रशंसनीय है कि उसने ऐसे मनुष्योंका स्वागत और सम्मान किया। एक बार जब मजदूरोंके संबंधमें एक नियम पर विचार हो रहा था, तब जाजेफ ब्रोथर्टनने उन कष्टों और आपत्तियोंको जो उसने बाल्यकालमें एक रुईके मिलमें मजदूर रहकर सहन की थीं, यथार्थ करुणाके साथ बयान करते हुए कहा कि यदि मुझे सुयोग मिला तो मैं मजदूरोंकी दशाको सुधारनेका प्रयत्न करूँगा। यह सुनकर एक महाशय तुरंत ही उठे और श्रोताओंकी हर्ष-ध्वनिके बीचमें बोले, “ मुझे नहीं मालूम था कि ब्रोथर्टन शुरूमें ऐसी निम्नश्रेणीके थे; परन्तु मुझको इस विचारसे पहलेकी अपेक्षा हौस आफ कामन्स पर और

भी अभिमान है कि एक मनुष्य, जिसने ऐसी दशासे उन्नति की है, इस देशके खानदानी रईसोंके साथ समान अधिकारों सहित बैठनेके योग्य है।"

राजसभाके एक सदस्य मिस्टर **विलियम जैक्सनका** जीवन भी आश्चर्यजनक उन्नतिका उदाहरण है। विलियम जैक्सनके पिता, जो एक वैद्य थे, अपने जिन ग्यारह बच्चोंको छोड़कर मर गये उनमें विलियम जैक्सन सातवाँ पुत्र था। पिताके जीवनकालमें बड़े लड़कोंने तो अच्छी शिक्षा प्राप्त कर ली, परन्तु उनकी मृत्यु होने पर छोटे लड़कोंको स्वावलम्बनके मार्गका आश्रय ढूँढ़ना पड़ा। जब विलियम जैक्सन बारह वर्षका हुआ तब उसका पाठशाला जाना बंद कर दिया गया और वह एक जहाजमें नौकर कर दिया गया, जिसके बाहरी भाग पर सबेरे छः बजेसे रातके नौ बजे तक कठिन परिश्रम करना पड़ता था। उसका स्वामी बीमार हो गया और वह विलियमको हिसाब-किताबके कमरेमें रखने लगा। यहाँ विलियमको पहलेकी अपेक्षा अधिक अवकाश मिलने लगा। अब उसे पढ़नेका सुयोग मिल गया। एक प्रसिद्ध अँगरेजी विश्वकोश उसके हाथ पड़ गया और उसने उसकी २६ जिल्दें कुछ तो दिनमें और विशेषकर रातमें पढ़ डालीं। उसने फिर निजी व्यापार करना आरम्भ किया। वह मेहनती था, अतएव उसको इस काममें सफलता हुई। अब वह बहुतसे जहाजोंका स्वामी है जो लगभग सब समुद्रों पर चलते हैं और वह संसारके लगभग सभी देशोंके साथ व्यापार करता है।

इंग्लैंडके धनाढ्य मनुष्योंमें आधुनिक दर्शनशास्त्रके जन्मदाता **बेकन, वासेंटर, वोईल** और **रोसी** इत्यादिके नाम लिये जा सकते हैं। इनमें रोसी प्रसिद्ध यन्त्रकार हो गया है। यदि वह धनाढ्य घरानेमें जन्म न लेता, तो कदाचित् वह आविष्कारकर्ताओंका शिरोमणि होता। रोसी लुहारके काममें ऐसा प्रवीण था कि एकबार एक कारखानेके स्वामीने—जिसको उसके धनाढ्य होनेका हाल मालूम न था—उससे एक बड़े कारखानेका प्रबंधकर्ता बननेके लिए आग्रह किया था। उसने स्वयं जिस टेलीफोनका आविष्कार किया, वह इसप्रकारके अन्य यंत्रोंसे निश्चयपूर्वक अधिक अपूर्व है।

लार्ड **ब्रौघमका** अटूट परिश्रम लोकप्रसिद्ध है। वे जनसाधारणसंबंधी कामोंमें ६० वर्षकी अवस्थासे भी अधिक अवस्थातक योग देते रहे। इस अवस्थामें उन्होंने कानून, साहित्य, राजनीति, और विज्ञानसंबंधी अनेक

बातोंकी छानबीन कर डाली और सबमें अपूर्वता प्राप्त की। उन्होंने इतनी उन्नति कैसे कर डाली, यह बात बहुतसे मनुष्योंके लिए गुप्त रहस्य रही है। सेमुएल रोमेलीसे किसी नये कामके करनेके लिए अनुरोध किया गया, तब उन्होंने अपने पास समयका अभाव दिखाते हुए कहा " इस कामको ब्रौघमके पास ले जाओ। उनके पास दुनियाभरके कामोंके लिए समय मौजूद रहता है। " इसका रहस्य यह था कि ब्रौघम एक क्षण भी बेकार न खोते थे; और इसके साथ ही उनका शरीर लोहेके समान मजबूत और स्वस्थ था। जब वे उस उम्र पर पहुँचे, जिस पर पहुँचकर बहुतसे आदमी संसारका सब बखेड़ा छोड़कर अपने पूर्व परिश्रमके फल भोगते हैं और विश्राम लेते हैं, तब उन्होंने अपने परिश्रमके फलको लंडन और पेरिसके अनेक धुरंधर वैज्ञानिक विद्वानोंके सामने एक व्याख्यानमें प्रकट किया और उसी समयके लगभग वे अपनी एक प्रसिद्ध पुस्तक भी प्रकाशित कराते रहे।

यद्यपि ये और अन्य उदाहरण प्रकट करते हैं कि व्यक्तिगत परिश्रम और उद्योगसे बहुत कुछ प्राप्त हो सकता है, तो भी यह स्वीकार करना पड़ेगा कि जीवनयात्रामें जो सहायता हमको दूसरोंसे मिलती है वह भी बड़े महत्वकी है। अँगरेजीके एक कविने खूब कहा है कि " वीरताके साथ दूसरोंसे सहायता ग्रहण करना और अपने पैरोंपर आप खड़े रहना, ये दोनों बातें परस्पर विरुद्ध होनेपर भी साथ साथ रहती हैं।" बचपनसे लेकर बुढ़ापे तक सभी लोग अपने पालन-पोषण और उन्नतिके लिए दूसरेके न्यूनाधिक ऋणी रहते हैं और जितने बड़े और शक्तिशाली मनुष्य हैं वे दूसरोंसे सहायता स्वीकार करनेके लिए सबसे अधिक तैयार रहते हैं।

मनुष्यका चरित्र वास्तवमें बहुतसी छोटी छोटी बातोंके प्रभावसे बनता है। उदाहरण और उपदेश, जीवन-चरित और साहित्य, मित्र और पड़ोसी, यह संसार जिसमें हम रहते हैं और हमारे पूर्वजोंके उत्तम शब्द और कार्य, इत्यादि ऐसी ही अनेक बातें हमारे चरित्रपर अपना प्रभाव डालती हैं। यद्यपि इन बातोंके प्रभाव निःसंदेह बड़े हैं तो भी यह स्पष्ट है कि मनुष्योंको अपना सुधार करनेमें और सच्चरित्र बननेमें स्वयं शक्तिपूर्वक उद्योग करना चाहिए। चाहे बुद्धिमान् और सज्जन मनुष्य दूसरोंके कितने ही ऋणी हों, परन्तु अपनी सर्वोत्तम सहायता अपने आप करनी चाहिए।

दूसरा अध्याय ।
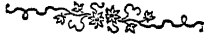
उद्योगी आविष्कर्त्ता ।

" सर्वत्र एक अपूर्व युगका हो रहा सञ्चार है,
देखो, दिनों दिन बढ़ रहा विज्ञानका विस्तार है ।
अब तो उठो क्या पड़ रहे हो व्यर्थ सोच विचारमें ?
सुख दूर, जीना भी कठिन है श्रम बिना संसारमें ॥ "

—मैथिलीशरण गुप्त ।

" निम्नश्रेणीके मनुष्योंने इंग्लैंडके लिए आविष्कारसंबंधी जितने कार्य किये हैं उनको निकाल दो और फिर देखो कि केवल उन्हींके अभावसे इंग्लैंडकी स्थिति कैसी हो जाती है । " —आर्थर हैल्प्स ।

" अब संसारका स्वामित्व उद्योग और विज्ञानशास्त्रके हाथ रहेगा । विज्ञानके पण्डित और उद्योगी पुरुष अपनी शक्तिसे सारी दुनियाको वशीभूत कर लेंगे । "

—डसाल्वान्दी ।

प्रत्येक देशकी महत्ता उस देशके उद्योग-धंधोंपर बहुत कुछ निर्भर है । किसान, उपयोगी पदार्थोंके बनानेवाले, औजारों और मशीनोंके ईजाद करनेवाले, पुस्तकोंके लेखक, शिल्पकार इत्यादि सभी अपने अपने उद्योगसे देशकी उन्नति करते हैं । इसी उद्योगके कारण आज हम पश्चिमी देशोंको फूल-फला पाते हैं और इसीके अभावसे हमारी दशा ऐसी शोचनीय हो रही है । जब इस देशमें भी उद्योग धन्धे होते थे, तब यह देश भी उन्नतिके शिखर पर था । लंडन और पेरिसकी महिलायें भी यहाँके–ढाकेके कपड़ोंको पहन कर गर्व करती थीं । अकेले बंगालमें ही लाखों मनुष्य शिल्प-व्यवसाय करते थे । भारतवासियोंके बनाये हुए पदार्थ संसार-भरमें बिकते थे । दिल्लीमें जो लोहेका ऊँचा स्तंभ है वह हमारे ही पूर्वजोंके शिल्पचातुर्यका नमूना है । पश्चिमी शिल्पकार इसको देखकर दाँतोंके तले उँगली दबाते हैं । इसकी अवस्था इस समय चौदह सौ वर्षकी है, परन्तु हवा और पानीमें निरंतर खुले रहने पर भी इस पर मोरचेका नाम तक नहीं है । भारतकी गृह-निर्माण-विद्या और चित्रकारीके प्राचीन नमूने अब भी अद्भुत समझे जाते हैं ।

अजण्टा और एलोराकी गुफाओंकी चित्रकारी पश्चिमी शिल्पकारोंको चकित कर रही है। भारतीय कलाकौशल्यके ऐसे अनेक नमूने सिद्ध करते हैं कि प्राचीन आर्यजातिकी उद्योगशीलता बहुत बढ़ी चढ़ी थी। यहाँके औद्योगिक नेताओंने अनेक आविष्कार किये थे। परन्तु वह औद्योगिक उत्साह अब भारतवासियोंसे कोसों दूर है।

इस विषयमें हम पश्चिमी देशोंसे बहुत कुछ शिक्षा ले सकते हैं। जिस पश्चिमकी जातिसे हमारा सबसे अधिक घनिष्ठ संबंध है वह अँगरेज जाति है। इस जातिका औद्योगिक उत्साह प्राचीन कालमें जैसा तीव्र था वैसा ही, अभी है। इस जातिके सामान्य मनुष्योंका औद्योगिक उत्साह ही अँगरेजी राज्यकी औद्योगिक महत्ताका आधार है। इसी उत्साहके कारण अँगरेजी राज्यशासनकी त्रुटियाँ और नियमावलीके दोषोंकी हानियाँ दूर हुई हैं।

अंगरेजोंको उद्योग-धंधोंसे सर्वोत्तम शिक्षा भी मिली है। उद्योग शीलतासे जिस प्रकार प्रत्येक मनुष्यको सर्वोत्तम शिक्षा मिलती है उसी प्रकार इससे समस्त जातिको भी लाभ पहुँचता है। ईमानदारीके साथ कोई उद्योग-धंधा करना कर्तव्यपालन करनेके समान श्रेष्ठ है और देवने दोनोंका सुखके साथ घनिष्ठ संबंध रक्खा है। इसमें कुछ संदेह नहीं कि अपने शारीरिक अथवा मानसिक परिश्रमसे कमाई हुई रोटीके बराबर दूसरी रोटी मीठी नहीं होती। परिश्रमके द्वारा ही मनुष्यने पृथ्वी पर अपना अधिकार जमा लिया है और इसीसे मनुष्यने अपनी जंगली दशासे छुटकारा पाया है। सच तो यों है कि परिश्रमके बिना मनुष्य सभ्यताकी ओर एक कदम भी नहीं बढ़ा है। मनुष्यके लिए परिश्रम करना जरूरी है। मनुष्यका कर्तव्य है कि वह परिश्रम करे। इतना ही नहीं, मनुष्यके लिए परिश्रम आशीर्वाद है। केवल आलसी मनुष्योंको परिश्रम आपत्ति मालूम होता है। हाथ-पैरोंकी नस नस पर और मस्तिष्ककी एक एक रग पर लिखा हुआ है कि परिश्रम करना मनुष्यका कर्तव्य है। क्योंकि इन्हीं नसों और रगोंके मिल कर काम करनेसे मनुष्यको संतोष और आनंद मिलता है। व्यवहार-बुद्धिकी सर्वोत्तम शिक्षा परिश्रमकी पाठशालामें मिलती है, और हमको आगे चल कर मालूम होगा कि हाथ-पैरोंकी मेहनत और ऊँचे दरजेकी मानसिक उन्नति परस्पर विरोधी नहीं हैं।

उद्योगी आविष्कर्ता।

एक बड़े अनुभवी मनुष्यका कथन है कि कड़ेसे कड़े परिश्रमसे भी आनन्द मिलता है और उन्नति करनेके साधन प्राप्त होते हैं। ईमानदारीके साथ परिश्रम करनेसे सर्वोत्तम शिक्षा मिलती है और परिश्रमकी पाठशाला सबसे उत्तम है। क्योंकि उसमें उपयोगी बनना सिखलाया जाता है, स्वतंत्रताका भाव आता है और धैर्यपूर्वक उद्योग करनेकी आदत पड़ती है। कारीगरको रोजमर्रा औजारों और दूसरी चीजोंसे काम करना पड़ता है और संसारके लोगोंके साथ व्यवहार करना पड़ता है। इससे उसकी निरीक्षण-शक्ति बढ़ती है और वह जीवनयात्रामें अपने पैरोंपर आप खड़े होनेके और अपने आपको उन्नत बनानेके योग्य हो जाता है। किसी दूसरे पेशेसे मनुष्य इतनी योग्यता नहीं प्राप्त कर सकता।

पहले अध्यायमें हम अनेक प्रतिष्ठित मनुष्योंके नाम लिख आये हैं, जिन्होंने अपने उद्योगके द्वारा निम्न श्रेणीसे उठकर विज्ञान, व्यापार, साहित्य, शिल्प इत्यादिमें ख्याति पाई है। उनके उदाहरणोंसे मालूम होता है कि गरीबी और श्रमके कारण जो कठिनाइयाँ सामने आजाती हैं वे दुर्जय नहीं हैं। जिन उपायों और आविष्कारोंकी बदौलत अँगरेज जाति ऐसी शक्तिशालिनी और धनशालिनी हो गई है, उनके अधिकांशके लिए निस्संदेह अत्यंत निम्न श्रेणीके मनुष्योंका आभार मानना चाहिए। इस संबंधमें ऐसे लोगोंने जो कुछ किया है उसको यदि निकाल दो तो फिर मालूम होगा कि अन्य मनुष्योंके द्वारा वास्तवमें बहुत ही कम काम हुआ है।

आविष्कार-कर्ताओंके द्वारा संसारके कई बड़े बड़े व्यवसाय चल पड़े हैं। उनके द्वारा संसारको आवश्यक पदार्थ और सुख तथा भोगविलासकी चीजें प्राप्त हुई हैं; और उनकी प्रतिभा तथा परिश्रमके कारण मनुष्यजातिका जीवन अधिक सुगम और सुखमय हो गया है। हमारा भोजन, हमारे वस्त्र, हमारे घरोंका असबाब, शीशे जो हमारे घरोंमें प्रकाशको आने देते हैं, परन्तु सर्दीको रोक लेते हैं, गैस और बिजली जिनसे सड़कों, गलियों और घरोंमें प्रकाश होता है, रेल, जहाज इत्यादि जिनसे हम स्थल और जल पर यात्रा करते हैं, व्योमयान जिनसे हम पक्षियोंकी भाँति उड़ते फिरते हैं, वे औजार जिनसे नाना प्रकारकी चीजें बनती हैं, जो हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति करती हैं और हमको सुख देती हैं—ये सब हमको बहुतसे मनुष्य तथा

बहुतसे मस्तिष्कोंके श्रम और चातुर्यसे ही मिली हैं। इन आविष्कारोंसे मानव-जाति बहुत सुखी हो गई है और प्रतिदिन व्यक्तिगत एवं जातीय कुशलताके बढ़नेसे हमको उनका फल मिलता रहता है।

यद्यपि भाफका अंजन, जो यंत्रोंका राजा है, एक ऐसी चीज है जिसका आविष्कार नवीन युगमें ही हुआ है, तथापि इसका विचार सैकड़ों वर्ष पहले उत्पन्न हुआ था। अन्य आविष्कारों और अनुसंधानोंके समान यह भी शनैः शनैः हुआ है। एक मनुष्य अपने परिश्रमका फल अपने उत्तराधिकारियोंको दे गया, उन्होंने उसकी उन्नति करके उसे और आगे बढ़ाया और इसी तरह कई वंशपरंपराओंतक यह कार्य जारी रहा। भाफके अंजनका विचार बहुत पहले शुरू हुआ, परंतु जबतक वह यन्त्रकारों द्वारा कार्यरूपमें परिणत न किया गया, तबतक बेकार ही था। इस अद्भुत यन्त्रके अविष्कारमें वीर और उद्योगशील मनुष्योंने जो धीरज दिखाया है अथवा परिश्रम किया है और जिन जिन आपत्तियोंका सामना किया है उनकी कथा बड़ी ही विचित्र है। वास्तवमें यह कथा मनुष्यकी स्वावलम्बन-शक्तिका एक स्मारक है। इसके चारों तरफ वे लोग हैं, जिन्होंने अपने अटूट परिश्रमसे इस आविष्कारमें योग दिया है और **जेम्स वाट**—जो उद्योगी धैर्यवान् और बिना थके काम करनेवाला था—उन सबका शिरोमणि है।

जेम्स वाट सरतोड़ परिश्रम करनेवाला था। उसका जीवनचरित सिद्ध करता है कि सर्वश्रेष्ठ परिणामोंकी प्राप्तिके लिए स्वाभाविक शक्ति और योग्यताकी आवश्यकता नहीं है, किन्तु बड़े भारी उद्योग और अति सुव्यवस्थित चातुर्यकी जरूरत है—ऐसे चातुर्यकी जो परिश्रम, लगातारके उद्योग और अनुभवके द्वारा प्राप्त होता है। उस समय बहुत लोगोंका ज्ञान वाटके ज्ञानसे कहीं बढ़ा चढ़ा था, परन्तु उनमेंसे किसीने भी वाटके समान अपने ज्ञानको उपयोगी और व्यावहारिक बातोंकी सिद्धिमें लगानेका परिश्रम न किया। उसमें सबसे बड़ा गुण यह था कि वह हर बातका निरीक्षण अत्यंत धैर्यपूर्वक करता था। उसने अपने ध्यानाभ्यासको, जिसपर मस्तिष्ककी उच्चतर शक्तियाँ अवलम्बित हैं, बड़ी सावधानीसे बढ़ाया था। एक महाशयका कथन है कि मनुष्योंकी बुद्धिमत्तामें जो भिन्नता दिखाई देती है उसका मुख्य कारण यही है कि उन्होंने बचपनमें न्यूनाधिक ध्यानाभ्यास किया है; उनकी स्वाभाविक शक्तियोंमें भेद-भाव होना तो गौण कारण है।

वाटको बाल्यकालमें भी अपने खिलोनोंमें विज्ञानका दर्शन होता था। अपने पिताके बढ़ईखानेमें पड़े हुए ऊँचाई नापनेके यंत्रोंको देखकर उसको दृष्टि-विद्या और खगोल शास्त्रके अध्ययनका शोक पैदा हुआ। अपनी अस्वस्थताके कारण उसने शरीर-शास्त्रके रहस्यको जानना चाहा; और अपने आसपासके ग्रामोंमें अकेले भ्रमण करनेसे उसका ध्यान वनस्पति-शास्त्र और इतिहासकी ओर आकर्षित हुआ। जब वह गणितसंबंधी औजार बनानेका व्यवसाय किया करता था, तब उसे एक बाजेकी मरम्मतका काम मिला; और यद्यपि उसे गान-विद्यासे रुचि न थी, तथापि उसने स्वरविद्याका अध्ययन किया और उस बाजेको सफलतापूर्वक बना दिया। इसी तरहसे जब न्यूकोमैनका बनाया हुआ भाफका अंजन उसके पास मरम्मतके लिए आया तब वह तुरंत ही ताप, बाष्पीभवन और गाढ़ीकरणके संबंधमें उस कालमें जो कुछ मालूम था उसे सीखनेके लिए तत्पर होगया और इसके साथ ही यंत्र-विद्या और निर्माण-विद्या भी सीखता रहा। अपने अध्ययनके परिणामोंसे अंतमें उसने स्वयं एक भाफका अंजन बनाकर दिखा दिया।

दस वर्षतक वह यंत्रोंको बनाता और उनके विषयमें विचार करता रहा। उसे आनंदित करनेके लिए आशाकी बहुत थोड़ी मात्रा थी और उसे उत्साहित करनेके लिए मित्र भी बहुत थोड़े थे। इसके साथ ही साथ वह कई तरहके धंधे करके अपने कुटुम्बका भरण पोषण करता रहा। वह ऊँचाई मापनेके यंत्र बनाता और बेचता था, बाँसुरी और अन्य बाजे बनाता था, मकानोंकी माप करता था, सड़कें मापता था, नहरोंकी खुदाईके कामका निराक्षण करता था; इस तरह जो काम मिल जाता था और जिसमें फायदेकी सूरत दिखाई देती थी वही करने लगता था। अंतमें वाटको एक सुयोग्य साथी मिल गया जिसका नाम **मैथ्यू बौल्टन** था। वह एक चतुर, उद्योगशील और दूरदर्शी मनुष्य था जिसने भाफके अंजनसे सब तरहके काम लेनेका बीड़ा उठा लिया था, और इतिहास अब उन दोनोंकी सफलताका साक्षी है।

बहुतसे चतुर आविष्कार-कर्ताओंने समय समय पर भाफके अंजनमें नई नई शक्तियाँ बढ़ाई हैं और तरह-तरहके सुधार करके उन्होंने उसको सब तरहकी चीजें बनानेके योग्य कर दिया है। कलोंको चलाना, जहाजोंको

चलाना, आटा पीसना, किताबें छापना, सिक्कों पर छाप लगाना, लोहेको पीटना, चिकना करना और मोड़ना इत्यादि हरतरहके काम, जिनमें बलकी आवश्यकता होती है, भापके अंजनके द्वारा किये जाते हैं। अंजनमें एक अत्यंत उपयोगी सुधारका प्रस्ताव ट्रेविथिकने किया था जिसकी पूर्ति अंतमें जार्ज स्टीफिन्सन और उसके पुत्रने की। यहाँ हमारा मतलब रेलके गतिमान अंजनसे है, जिसके द्वारा बड़े महत्त्वके सामाजिक परिवर्तन हो गये हैं, और जिनका असर मानवी उन्नति तथा सभ्यता पर वाटके भाफके अंजनसे भी अधिक पड़ा है।

वाटके आविष्कारका—जिसके प्रसादसे कारीगरोंको असीम शक्तिपर अधिकार होगया है—एक प्रथम और महान् परिणाम यह हुआ कि मशीनके द्वारा रुई ओंटने और कातनेकी कारीगरी स्थापित हो गई। इस महती कारीगरीके संस्थापनके साथ जिस मनुष्यका सबसे घनिष्ठ संबंध है वह सर रिचर्ड आर्कराइट था, जिसके कर्मोद्योग और चातुर्य उसकी आविष्कारिणी योग्यतासे भी कहीं बढ़े चढ़े थे। उसने सर्वथा नवीन आविष्कार किया, इस बातको अस्वीकार किया जाता है। ऐसे ही कहा जाता है कि वाट और स्टीफिन्सनने भी सर्वथा नवीन आविष्कार नहीं किये हैं। आर्कराइटका कातनेकी मशीनके साथ बहुत करके ऐसा ही संबंध है जैसे वाटका भापके अंजनके साथ और स्टीफिन्सनका रेलके अंजनके साथ। आर्कराइटने उन साधनोंको, जो पहलेसे ही मौजूद थे, इकट्ठा किया और उन्हें अपने ढंग पर काममें लाकर एक नवीन यंत्र तयार किया। उससे पहले दो अन्य कारीगरोंने सूत कातनेकी मशीन बनानेका प्रयत्न किया था; परन्तु उनके यंत्रोंमें अनेक दोष थे और इस लिए वे काम न देते थे। अतएव उनके प्रयत्न निष्फल गये।

ऐसा बहुधा होता है कि आवश्यकताओंके अनुसार एक ही विचार बहुतसे मनुष्योंके मस्तिष्कोंमें उत्पन्न होजाता है। भाफके अंजन, सुरक्षित लेम्प, तारबर्की और अन्य आविष्कारोंके विषयमें ऐसा ही हुआ। जब बहुतसे चतुर मस्तिष्क आविष्कारकी प्रसववेदना उठाते रहते हैं, तब अंतमें कोई सर्वोत्कृष्ट मस्तिष्क अर्थात् शक्तिशाली कार्यकुशल मनुष्य अग्रसर होता है और उनको उस वेदनासे मुक्त कर देता है। वह उस विचार अथवा कल्पनाका सफलतापूर्वक प्रयोग करता है, और तब काम हो जाता है। फिर दूसरे छोटे उपाय-

चिंतक—जो दौड़में अपने आपको पिछड़ा हुआ देखते हैं—खूब शोर मचाते हैं, और इस कारण वाट, स्टीफिन्सन और आर्कराइट सरीखे मनुष्योंको अपने व्यावहारिक और सफल आविष्कारकर्ता होनेके स्वत्वों और ख्यातिकी बहुधा रक्षा करनी पड़ती है।

अन्य बहुतसे यंत्रकारोंके समान आर्कराइटने भी दरिद्र अवस्थासे उन्नति की। वह सन् १७३२ ईस्वीमें प्रैसटनमें पैदा हुआ। उसके माता पिता बड़े कङ्गाल थे और वह उनके तेरह बालकोंमें सबसे छोटा था। उसने स्कूलमें कभी शिक्षा नहीं पाई; जो कुछ शिक्षा उसे मिली वह उसने अपने आप प्राप्त की और वह अंत समयतक बड़ी कठिनाईके साथ लिखने-पढ़नेके योग्य हुआ। बाल्यकालमें वह एक नाईके यहाँ काम सीखने लगा और जब वह यह काम सीख चुका, तब बोल्टनमें रहने लगा। उसने वहाँ पर एक दूकानके नीचेका तैखाना किराये पर ले लिया और उसके ऊपर यह लिखवा दिया—"आओ, इस तैखानेके नाईके पास आओ—वह दो पैसेमें हजामत बना देता है।" दूसरे नाइयोंके ग्राहक कम हो चले, क्यों कि वे जियादा दाम लेते थे, अतः उनको भी अपनी मजदूरी घटा कर इतनी ही करनी पड़ी। फिर आर्कराइटने, जो अपने धंधेको चलानेकी फिक्रमें था, यह घोषणा कर दी कि "मैं एक ही पैसेमें अच्छी हजामत बनाता हूँ।" कुछ वर्ष बाद उसने वह तैखाना छोड़ दिया और वह स्थान स्थानमें घूम-घूमकर बालोंका रोजगार करने लगा। उस समयमें इंग्लैंण्डके निवासी लम्बे बालोंकी टोपी पहना करते थे और इन टोपियोंका बनाना नाईयोंके व्यवसायका प्रधान अंग था। आर्कराइट टोपियाँ बनानेके लिए इधर उधर घूमकर बाल खरीदने लगा। वह एक तरहका खिजाब भी बनाने लगा, जिससे उसका धंधा खूब चलने लगा; परन्तु इतने पर भी उसकी आमदनी केवल इतनी होती थी कि वह अपना निर्वाह ही कर सकता था।

कुछ समयमें बालोंकी टोपी पहननेके रिवाजमें परिवर्तन हो गया, अतएव बालोंकी टोपी बनानेवालों पर संकटका पहाड़ टूट पड़ा, और आर्कराइटने जिसकी रुचि यंत्रोंकी ओर थी, अपना ध्यान मशीन बनानेमें लगाया। उस समय कातनेकी कल बनानेकी बहुत लोगोंने चेष्टायें की थीं, इस लिए हमारे नाईने भी आविष्काररूपी समुद्र पर औरोंके साथ अपना जहाज चलाना

चाहा। वैसी ही रुचिवाले अन्य स्वशिक्षित मनुष्योंके समान वह अपना समय पहलेसे ही एक ऐसी कलका आविष्कार करनेमें लगाया करता था, जिसकी गति चिरस्थायी हो और ऐसी कल बनाकर फिर कातनेकी कल बनाना सुगम था। वह ऐसे परिश्रमके साथ प्रयोग करता रहा कि उसने अपने रोजगारकी भी परवा न की। उसके पास जो थोड़ासा धन जमा हुआ था वह भी खर्च हो गया और वह निर्धन हो गया। उसकी पत्नीको—क्यों कि उसने इस बीचमें अपना विवाह भी कर लिया था--इस बातकी बड़ी चिन्ता हुई। वह समझती थी कि मेरा स्वामी समय और रुपया वृथा खो रहा है, इस लिए उसका क्रोध एकदमसे ऐसा भड़का कि उसने अपने पतिके बनाये हुए यंत्रोंको लेकर तोड़ मरोड़ डाला। क्यों कि उसने सोचा कि ऐसा करनेसे कुटुम्बके दरिद्रका कारण दूर हो जायगा। आर्कराइट बड़ा हठी और उत्साह-शील मनुष्य था, इस लिए अपनी स्रीके इस कृत्य पर वह ऐसा आग बबूला हुआ कि अपनी स्रीसे अलग रहने लगा।

इधर उधर फिरनेसे आर्कराइटका परिचय एक घड़ीसाजसे हो गया था, जिसका नाम 'के' था। केने आर्करा‌इटको चिरगतिवान् मशीनके बनानेमें सहायता दी। यह खयाल किया जाता है कि आर्करा‌इटको बेलनोंसे कातनेके सिद्धांतका बोध केने कराया था; परन्तु यह भी कहा जाता है कि आर्करा‌इटको इस बातका विचार पहले पहल उस समय हुआ जब उसने अनायास देखा कि गरम लोहेका एक टुकड़ा लोहेके बेलनोंके बीचमें गुजारे जानेसे लम्बा हो गया। जो हो, परन्तु इस विचारने आर्करा‌इटके मस्तिष्क पर पूरा अधिकार जमा लिया और वह अपनी मशीन बनानेका उपाय सोचने लगा; परन्तु इस विषयमें के उसे कुछ न बतला सका। आर्करा‌इटने अब बाल इकट्ठा करनेका धंधा छोड़ दिया और वह अपनी मशीनकी पूर्तिमें लग गया, जिसका एक नमूना उसने केसे अपने सामने बनवाकर प्रेसटन नगरकी एक पाठशालाके एक कमरेमें रखवा दिया। ऐसे नगरमें इस मशीनको सर्व साधारणमें दिखाना—जहाँ बहुतसे मनुष्य हाथसे चर्खा कातकर निर्वाह करते थे—बड़ा भयपूर्ण कार्य था। समय समयपर पाठशालाके कमरेके बाहर भयंकर चिल्लाहट सुनाई देती थी। तब आर्करा‌इटने अपनी मशीनको वहाँसे उठाकर एक ऐसे स्थानमें ले जाना चाहा, जहाँ भय कम हो, क्योंकि उसे याद था कि जब केने ढरकीका

आविष्कार किया था, तब लोग उसके ऊपर टूट पड़े थे और उसको लैंक-शरसे निकाल दिया था और बेचारे हार्गीब्जने जब पानीसे चलनेवाली कातनेकी मशीन बनाई थी तब उपद्रवी लोगोंने उसे तोड़ डाला था। अत एव वह नाटिंघम नगरको चला गया और वहाँके सेठोंसे उसने आर्थिक सहायताकी प्रार्थना की। एक बार वह असफल हुआ, परन्तु एक दूसरी जगहसे उसे इस शर्त पर सहायता मिल गई कि वह अपने आविष्कारसे कमाये हुए धनमें उसको भी साझी करे। आर्कराइटको अपना काम करनेके लिए एक विशिष्ट अधिकार-पत्र भी मिल गया। पहले पहल नाटिंघममें एक रुईका मिल बनाया गया, जो घोड़ोंसे चलाया जाता था और कुछ दिनों बाद एक दूसरा बहुत बड़ा मिल क्रोमफर्डमें बनाया गया, जो पानीके जोरसे चलाया जाता था।

परन्तु यदि आर्कराइटके आगामी परिश्रमका खयाल किया जाय, तो कहना पड़ेगा कि अभी तो उसका परिश्रम शुरू ही हुआ था। उसको अभी तो अपनी मशीनके बहुतसे पुर्जोंकी पूर्ति करनी थी। उस मशीनमें वह निरंतर परिवर्तन और सुधार करता रहा, यहाँ तक कि अंतमें वह खूब कामलायक और लाभदायक बन गई। उसने चिरकालिक धैर्यपूर्वक परिश्रमसे ही सफलता प्राप्त की। कई वर्षोंतक तो निराशा होती रही, रुपया भी बहुत खर्च हुआ और कोई नतीजा न निकला। जब सफलता निश्चय मालूम होने लगी, तब लैंकशरके कारीगर आर्कराइटके विशिष्टाधिकार-पत्र पर इस लिए टूट पड़े कि वे उसे फाड़ डालें। आर्कराइटको लोग कारीगरोंका शत्रु कहने लगे और एक दिन पुलिस तथा शस्त्रधारी सिपाहियोंकी एक बलवती सेनाके देखते देखते लोगोंने आर्कराइटके एक मिलको नष्ट कर दिया। लैंकशरके आदमियोंने उसके सूतको खरीदनेसे इनकार किया; यद्यपि वह बाजारमें सबसे बढ़कर था। फिर उन्होंने उसे उसकी मशीनोंके प्रयोगके लिए विशिष्टाधिकार न दिया और सबोंने मिलकर उसे न्यायालयमें दलित कर देना चाहा। सुविचारवान् मनुष्योंके ना-पसंद करने पर भी आर्कराइटका विशिष्टाधिकार गड़बड़ कर दिया गया। न्यायालयमें परीक्षा हो चुकनेके बाद, जब वह एक सरायके सामने होकर—जिसमें उसके विरोधी ठहरे हुए थे—निकल रहा था, तो उसके एक विरोधीने आर्कराइटको सुनानेके लिए

जोरसे कहा कि " देखा, हमने पुराने खूसट नाईको कैसा मजा चखाया ! " इसका आर्कराइटने यों नम्रतापूर्वक उत्तर दिया—" उँह ! कुछ परवा नहीं, मेरे पास एक उस्तरा बच रहा है, जो तुम सबकी हजामत बना देगा। " इसके बाद आर्कराइटने तीन अन्य नगरोंमें एक एक मिल स्थापित किया और पहले मिल भी, जिनमें दूसरोंका साझा था, साझा टूट जानेसे आर्कराइटके अधिकारमें आ गये। उसके मिलोंमें इतना माल बनता था और ऐसा अच्छा बनता था कि थोड़े ही समयमें उसने उस व्यवसाय पर ऐसा पूर्ण अधिकार जमा लिया कि वह ही भाव निकालता था और उसने अन्य रुई कातनेवालोंको भी अपनी मुट्ठीमें कर लिया।

आर्कराइटमें बड़ा चरित्रबल था, अदम्य साहस था, बहुत कुछ सांसारिक चतुराई थी और इसके साथ ही उसकी व्यावसायिक योग्यता इतनी बढ़ी चढ़ी थी कि उसको प्रतिभा कहनेमें कुछ अत्युक्ति नहीं होगी। एक बार उसको बहुत कठिन और निरंतर परिश्रम करना पड़ा था; क्योंकि उस समय उसे अपने बहुतसे कारखानोंकी व्यवस्था करनी पड़ी, उनको चलाना पड़ा और इन कामोंमें उसे कभी कभी सबेरे चार बजेसे रातके नौ बजेतक परिश्रम करना पड़ता था। पचास वर्षकी अवस्थामें वह व्याकरण सीखनेमें लगा और उसने लिखने-पढ़नेमें उन्नति करनी चाही। इस तरह सब कठिनाइयों पर विजय पाकर उसको अपने साहसका फल मिलनेका आनंद प्राप्त हुआ। अपनी पहली मशीनके बनानेके १८ वर्ष बाद उसका डर्बीशर जिलेमें ऐसा सन्मान होने लगा कि वह उस जिलेका हाई शैरिफ (एक तरहका आननेरी मैजिस्ट्रेट) बना दिया गया, और कुछ समय पश्चात् महाराज जार्ज तृतीयने तो उसको नाइट (Knight) की उपाधिसे विभूषित कर दिया।

अनेक बड़े बड़े व्यवसायोंमें ऐसे ही उद्योगी और कार्यकुशल मनुष्योंके उदाहरण मिलते हैं, जिन्होंने अपने रहनेकी जगहके आसपासके जिलोंको बड़ा लाभ पहुँचाया है और समस्त समाजके बल और धनको बढ़ा दिया है। मोजे बुननेकी कलाका आविष्कारकर्ता विलियम ली मशीन बनानेमें बड़ा चतुर और धैर्यवान् मनुष्य था। उसके परिश्रमके द्वारा उसके रहनेकी जगहके आसपासके जिलोंके कारीगरोंके लिए बहुत बड़ा धंधा निकल आया। मोजेकी मशीनकी आविष्कारसंबंधी घटनाओंके इतिहासमें बड़ी गड़बड़ी है और कई

अंशोंमें परस्पर विरोध है; परन्तु आविष्कारकर्ताके नामके विषयमें कुछ भी संशय नहीं है। वह विलियम ली था और सन् १५६३ ईस्वीमें पैदा हुआ था। कुछ लोगोंका मत है कि उसके पास छोटीसी जमींदारी थी और कुछ लोग कहते हैं कि वह एक निर्धन विद्यार्थी था और उसको शुरूसे ही गरीबीका सामना करना पड़ा था। वह सन् १५७८ में कैम्ब्रिजके क्राइस्ट कालिजमें भरती हो गया। उसको भोजन, वस्त्र इत्यादि कालिजकी ओरसे ही मिलते थे। फिर वह एक दूसरे कालिजमें भरती हुआ और वहाँसे उसने बी. ए. की परीक्षा पास की। वह एम. ए. की कक्षामें भी पढ़ा या नहीं, यह ठीक नहीं मालूम।

जिस समय लीने मोजा बनानेकी कलाका आविष्कार किया उस समय वह एक गिरजेमें नौकर था। कहा जाता है कि वह एक युवती पर आसक्त हो गया, परन्तु उस कुमारीने उसकी कुछ परवा न की। जब ली उस कुमारीके यहाँ जाता था, तब वह अपने मोजे बुननेमें तथा अपने शिष्योंको इस कामकी शिक्षा देनेमें बहुत जियादा ध्यान देती थी और लीकी बातोंको न सुनती थी। लीको इस अपमानका बड़ा खयाल हुआ और उसने ठान लिया कि अब मैं मोजा बुननेकी एक मशीन बनाऊँगा जिससे हाथकी अपेक्षा अपेक्षा अधिक काम होगा और इस लिए हाथसे मोजा बुननेका व्यवसाय लाभहीन हो जायगा। तीन वर्षतक वह अपने आविष्कारमें लगा रहा। जब उसे सफलताकी आशा झलकने लगी, तब वह नौकरी छोड़कर मशीनसे मोजा बनानेके व्यवसायमें लग गया। इस कथाका समर्थन कई प्रमाणोंसे होता है।

मोजेकी मशीनकी आविष्कारसंबंधी घटनायें चाहे जो रही हों, परन्तु इसमें कुछ संदेह नहीं कि आविष्कारकर्ताकी यंत्रसंबंधी प्रतिभा बड़ी विलक्षण थी। एक गिरजेके नौकरके लिए जो एक दूसरे ग्राममें रहता हो और जिसका जीवन अधिकतर पुस्तकावलोकनमें ही व्यतीत हुआ हो, ऐसी सूक्ष्म और पेचीदा पुर्जोंकी मशीन बनाना और उँगलियोंसे सलाइयोंमें सूतके फंदे डाल कर उनमें डोरा पिरोनेके धीमे और थकानेवाले कामको मशीनसे कातनेकी सुंदर और शीघ्रपद्धतिमें एकदम पलट देना वास्तवमें एक आश्चर्यजनक सफलता थी, जो यंत्रसंबंधी अविष्कारोंके इतिहासमें अद्वितीय कही जा

सकती है। लीकी योग्यता इस दृष्टिसे और भी अधिक प्रशंसनीय है कि उस समय हस्तकौशलसंबंधी शिल्प प्रारम्भिक अवस्थामें थे, और ऐसी चीजोंके बनानेके लिए कलोंके अविष्कार करने पर बहुत कम ध्यान दिया जाता था। उसको यथाशक्ति पूर्व विचारके बिना ही अपनी मशीनके अंश बनाने पड़े और जैसे जैसे कठिनाइयाँ आती गईं वैसे ही उसको उनके दूर करनेके उपाय सोचने पड़े। उसके औजार दोषयुक्त थे; उसके पास सामान भी ठीक न था, और उसे मदद देनेके लिए कोई भी चतुर कारीगर न था। कहा जाता है कि उसकी बनाई हुई पहली मशीन लकड़ीकी थी; यहाँ तक कि सुइयाँ भी लकड़ीके टुकड़ोंमें लगा दी गईं थीं। लीकी एक प्रधान कठिनाई यह थी कि सुइयोंसे उनमें छिद्र न होनेके कारण टाँका न लग सकता था; परन्तु इस कठिनाईको भी उसने रेतीसे सुइयोंमें छिद्र करके दूर कर दिया। निदान उसने सब कठिनाइयोंको एक एक करके दूर कर दिया और तीन वर्ष परिश्रम करनेके पश्चात् वह मशीन इस योग्य हो गई कि उससे काम लिया जा सके। लीने—जो अपने शिल्पके प्रति उत्साहसे परिपूर्ण था—केलवर्टन नामक ग्राममें मोजा बुननेका काम शुरू कर दिया। वह वहाँ कई वर्षतक काम करता रहा और अपने भाई और अन्य कई कुटम्बियोंको यह काम सिखलाता रहा।

बादमें उसने अपनी मशीनकी बहुत कुछ पूर्ति की और उसे रानी एलिजाबेथके संरक्षणको प्राप्त करनेकी अभिलाषा हुई, जो बुने हुए रेशमी मोजोंको बहुत पसंद करती थी। अतएव ली अपनी मशीन रानीको दिखानेके लिए लण्डन गया। पहले उसने अपनी मशीनको राजसभासदोंको दिखाया और उनमेंसे एकको उससे काम करना भी सिखा दिया। इन दरबारियोंकी सहायतासे अंतमें लीको रानीके सन्मुख उपस्थित होनेकी आज्ञा मिल गई और उसने रानीके सामने मशीनसे काम किया। परन्तु उसको जैसे उत्साहकी आशा थी वह उसे न मिला, बल्कि रानीने यह कहकर उस आविष्कारका उलटा विरोध किया कि इससे बहुतसे आदमियोंकी—जो हाथसे मोजे बुनते हैं—जीविका नष्ट हो जायगी। लीको और कोई संरक्षक भी न मिला और उसने यह समझ लिया कि लोग मेरी और मेरे आविष्कारकी अवज्ञा करते हैं। अतएव जब फ्रांसके एक चतुर राजमंत्रीने उससे फ्रांसके रोइन नगरको

चलनेके लिए और वहाँके कारीगरोंको मोजा बुननेकी मशीन बनानेकी और उससे काम करनेकी शिक्षा देनेके लिए अनुरोध किया, तब उसने उसकी बात तुरंत ही स्वीकार कर ली। वह अपने भाई और कई अन्य कारीगरों सहित अपनी मशीनको लेकर चला गया। रोइन नगरमें उसका हार्दिक स्वागत किया गया और उसने एक बड़ा कारखाना खोल दिया, जिसमें उसकी नौ मशीनें निरंतर काम करने लगीं; परन्तु इसी समय उस बेचारेको विपत्तिने फिर आ घेरा। फ्रांसका राजा हेनरी चतुर्थ, जो उसका संरक्षक बना था और जिससे उसको पुरस्कार, सम्मान इत्यादि मिलनेकी आशा थी, मार डाला गया। इससे जो कुछ उत्साह और संरक्षण उसे अबतक मिला था, वह सब जाता रहा। अपने स्वत्त्वोंको प्रकट करनेके लिए वह राजधानी पेरिसमें पहुँचा, परन्तु वह प्रोटेस्टेंट सम्प्रदायका था तथा विदेशी था, अतएव उसकी प्रार्थनाओं पर कुछ भी ध्यान न दिया गया और नाना कष्टोंसे तंग आकर वह गौरववान् आविष्कारकर्ता थोड़े ही दिनोंमें पेरिसमें बड़ी गरीबी और आपत्ति भुगतते हुए इस संसारसे उठ गया।

लीका भाई अन्य सात कारीगरोंसहित किसी तरह फ्रांससे भागकर इंग्लैंडमें आगया और सिवाय दो मशीनोंके अपनी सब मशीनोंको भी ले आया। इंग्लैंडमें आकर उसने एक और आदमीके साथ–जिसको लीने मशीनसे मोजा बुननेका यह काम सिखलाया था–साझा कर लिया। फिर इन दोनोंने और कारीगरोंकी सहायतासे मोजा बुननेका काम शुरू किया और बहुत सफलता प्राप्त की। जिस जिलेमें यह कारखाना खोला गया था, उसमें भेड़ें बहुत पाली जाती थीं और उनसे बहुत अच्छी ऊन मिल जाती थी। इंग्लैंडमें धीरे धीरे इन मशीनोंका रिवाज बढ़ता गया, और अंतमें मशीनसे मोजे बुनना एक बड़ा भारी व्यवसाय बन गया।

प्रसिद्ध किन्तु हतभाग्य जैकर्डका जीवनचरित बड़ी उत्तम रीतिसे बतलाता है कि चतुर मनुष्य–चाहे वे कितनी ही निम्न श्रेणीके हों–अपनी जातिकी उद्योगशीलता पर बड़ा प्रभाव डालते हैं। जैकर्डके मातापिता फ्रांस देशके लायोन्स नगरमें रहते थे और बड़े निर्धन थे। जैकर्डका पिता हाथसे कपड़ा बुना करता था। अपनी गरीबीके कारण वह अपने पुत्र जैकर्डको शिक्षा न दे सकता था। जब जैकर्ड बड़ा हुआ और इस योग्य हुआ कि कुछ धंधा

सीख सके तब उसका पिता उसको एक जिल्द बाँधनेवालेके यहाँ काम सीखनेके लिए भेजने लगा। एक बूढ़े गुमाश्तेने, जो उस जिल्दसाजका हिसाब किया करता था, जैकर्डको कुछ गणित सिखलाया। जैकर्डने थोड़े ही समयमें यंत्र-विद्याकी ओर रुचि प्रकट की और उसके कई कार्योंने गुमाश्तेको चकित कर दिया। गुमाश्तेने जैकर्डके पितासे जैकर्डको कुछ और काम सिखलानेका अनुरोध किया, जिसमें वह अपनी विचित्र शक्तियोंकी अधिक उन्नति कर सके। अतएव जैकर्डने एक चाकू–कैंची बनानेवालेके यहाँ नौकरी कर ली, और वहाँ वह काम सीखने लगा। परन्तु उसका मालिक उसके साथ बहुत बुरा बर्ताव करथा था, इस लिए जैकर्डने कुछ समय बाद उसकी नौकरी छोड़ दी और वह एक टाइप ढालनेवालेके यहाँ काम सीखने लगा।

इसी बीचमें जैकर्डके माता पिताका देहांत हो गया, अतएव जैकर्डने मजबूर होकर अपने पिताके दो राछोंको लेकर कपड़ा बुननेका धंधा शुरू कर दिया। वह तुरंत ही उन राछोंको सुधारनेमें लग गया। अपने आविष्कारोंमें वह ऐसा दत्तचित्त हुआ कि उसने अपना धंधा छोड़ दिया और वह शीघ्र ही कङ्गाल हो गया। इसके बाद उसने अपना ऋण चुकानेके लिए राछोंको बेच दिया और अपना विवाह भी कर लिया, जिससे उसके ऊपर और भी भार हो गया। वह और भी गरीब होगया और कर्जसे मुक्त होनेके लिए उसने अपनी झोपड़ी भी बेच दी। उसने नौकरी ढूँढ़नेका प्रयत्न किया, परन्तु उसे सफलता न हुई, क्योंकि लोग समझते थे कि वह आलसी है और अपने आविष्कारोंके संबंधमें आकाशमें महल बनाया करता है। अंतमें वह ब्रैस नगरमें एक रस्सी बनानेवालेके यहाँ नौकर हो गया। उसकी स्त्री लायोन्स नगरमें ही रह गई और टोपी बनाकर अपना पेट भरने लगी।

कुछ वर्षोंतक जैकर्ड उन्नति करता रहा और अंतमें उसने कपड़ा बुननेकी मशीनका आविष्कार किया। इस मशीनका रिवाज धीरेधीरे परंतु स्थिर रूपसे बढ़ा और दस वर्ष बाद लायोन्स नगरमें ऐसी चार हज़ार मशीनोंसे काम होने लगा! इसी बीचमें जैकर्डको एक युद्धमें लड़ना पड़ा और उसका काम कुछ दिनों तक बन्द रहा। कदाचित् वह सैनिक ही बना रहता; परन्तु इस अवसर पर उसका इकलौता पुत्र मारा गया और वह लायोन्स नगरमें अपनी स्त्रीके पास सेनामेंसे भाग कर लौट आया। कुछ दिनोंतक वह वहीं

छिपा रहा और अब उसे फिर अपने आविष्कारोंका ध्यान आया। परन्तु उसके पास इस कामके लिए रुपया कहाँ था? उसने एक कारीगरके यहाँ नौकरी कर ली। जैकर्ड दिनमें अपने मालिकका काम करता था और रातको अपने आविष्कारोंमें लगा रहता था। वह समझता था कि कपड़ा बुननेकी कलामें अधिक उन्नति हो सकती है। एक दिन उसने मालिकसे भी अनायास यह बात कह दी और खेद प्रकट करके यह भी कहा कि "मैं अपनी गरीबीके कारण अपने विचारोंको कार्यरूपमें परिणत नहीं कर सकता।" सौभाग्यवश उसके दयालु मालिकने उसकी बातोंका मूल्य जान लिया और इस कामके लिए उसको रुपया दिया।

तीन महीनेमें जैकर्डने एक कल बनाई, जिसके द्वारा कठिन और थका देनेवाला परिश्रम जो कारीगरोंको अपने हाथसे करना पड़ता था, यंत्रोंके द्वारा किया जाने लगा। यह मशीन पेरिसकी एक प्रदर्शिनीमें रक्खी गई और जैकर्डको इसके पुरस्कारमें एक पीतलका पदक मिला। दूसरे वर्ष लंडनकी सोसायटी आफ आर्ट्सने ऐसी मशीन बनानेके लिए पुरस्कार नियत किया जिससे मछली पकड़नेका जाल और शत्रुको जहाज पर चढ़नेसे रोकनेवाला जाल बन सके। जैकर्डको जब यह समाचार मिला, तो उसने तीन सप्ताहमें ही ऐसी मशीनका आविष्कार कर दिया। इससे उसका इतना यश हुआ कि फ्रांसके सम्राटने उसको अपने यहाँ बुलाकर उसका स्वागत किया। उसको रहनेके लिए मकान दिया गया और नये आविष्कार करनेके लिए उसका वतन नियत कर दिया गया। यहाँ रहकर उसे तरह तरहकी मशीनें देखनेका सुअवसर प्राप्त हुआ।

उसने कुछ भद्दे औजार बनाये और फिर उनकी सहायतासे लकड़ीकी एक घड़ी बनाई, जो बिलकुल ठीक समय देती थी। एक छोटेसे गिरजेके लिए उसने देवदूतोंकी कुछ मूर्तियाँ बनाईं, जो अपने पंखोंको हिलाती थीं और कुछ मूर्तियाँ पुजारियोंकी बनाईं, जो गिरजेके संबंधमें कुछ संकेत किया करती थीं। उसने और भी कई स्वयं काम करनेवाले खिलौने बनाये। उसने एक अद्भुत बतख बनाई, जो सच्ची बतखके समान पानीमें तैरती थी, खेल करती थी, पानी पीती थी और बोलती थी। उसने एक प्राचीन ग्रंथमें वर्णित घटनाके आधार पर एक साँप बनाया, जो उसी तरह फुफकार मारता और झपटता था, जैसा उस ग्रंथमें लिखा था।

उसने फिर अपने कपड़े बुननेकी मशीनकी पूर्ति की। सम्राट् नेपोलियन उसके परिश्रमके फलोंसे बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसने जैकर्डकी कलके समान बहुतसी कलें अपने सर्वोत्तम कारीगरोंसे तैयार कराई।

इसके बाद वह अपने नगर लायोन्सको लौट आया; परन्तु यहाँ उसकी वह दशा हुई, जो बहुधा आविष्कार-कर्ताओंकी होती थी। उस नगरके लोग उसे अपना बैरी समझने लगे, क्योंकि वहाँके कारीगर समझते थे कि जैकर्डकी नई मशीन उनके धंधेका सर्वनाश कर देगी और उनको जीविकासे वंचित कर देगी। उन्होंने एक बड़ी जोशदार सभा की और उसकी मशीनोंको नष्ट कर देनेका संकल्प कर लिया; परन्तु राजकीय सेनाने आकर उन्हें इस कामसे रोक दिया। एक बार तो वे लोग जैकर्डकी एक मशीन घसीट कर ले ही गये और उसे सबके सामने चकनाचूर कर दिया! फिर और भी कई बड़े बड़े उपद्रव हुए और लोग जैकर्डको नदीमें डुबानेके लिए उसे उसके घरसे घसीट लाये। जैसे तैसे जैकर्डकी जान बच गई।

परन्तु जैकर्डकी मशीन बड़े कामकी थी; उसके प्रचार होनेमें केवल समयकी देर थी। कुछ अँगरेजोंने जैकर्डसे इंग्लैंड चलनेके लिए और वहाँ रहनेके लिए कहा। यद्यपि उसके देशवासियोंने उसके साथ ऐसा क्रूर और निष्ठुर बर्ताव किया था, तो भी उसमें इतनी देश-भक्ति थी कि उसने इंग्लैंड जाना स्वीकार न किया। कुछ समय बाद जैकर्डकी मशीनका खूब प्रचार हुआ और उसके परिणामोंसे हाथसे काम करनेवाले कारीगरोंका भय बिलकुल मिथ्या सिद्ध हुआ। धंधा कम होना तो दूर रहा किन्तु जैकर्डकी मशीनने उसे दस गुना बढ़ा दिया। मशीनके कारण इतना काम निकल आया कि कारीगरोंकी संख्या पहलेकी अपेक्षा बहुत बढ़ गई।

जैकर्डका शेष जीवन शान्तिपूर्वक व्यतीत हुआ और उन्हीं लोगोंने, जो उसे एक बार डुबानेके लिए घसीट कर ले गये थे, जैकर्डको उसी रास्तेसे जुलूसके साथ लाकर उसका जन्मोत्सव बड़ी धूमधामसे मनाया। सरकारने चाहा कि जैकर्ड अपनी मशीनकी और भी उन्नति करे। जैकर्डने यह स्वीकार कर लिया और वह ऐसे नम्र स्वभावका था कि उसने इस कामके लिए अपनी इच्छानुसार बहुत थोड़ा वेतन स्वीकार कर लिया। उसका इस बीचमें बड़ा सम्मान किया गया। सन् १८३४ ईस्वीमें उसका देहान्त हुआ और एक मूर्ति उसके स्मरणार्थ स्थापित कर दी गई।

तीसरा अध्याय।

धैर्यकी महिमा।

"संसारकी समरस्थलीमें धीरता धारण करो।
चलते हुए निज इष्ट पथमें संकटोंसे मत डरो॥"

—मैथिलीशरण गुप्त।

"धैर्य या धीरज वीरताका अति उत्तम, मूल्यवान् और दुष्प्राप्य अंग है। धीरज सर्व आनन्दोंका एवं शक्तियोंका मूल है। आशासे भी, यदि उसके साथ अधीरता हो तो, कदापि सुख नहीं मिलता।"—जान रस्किन।

समस्त जीवनचरितोंमें जो धैर्यके अत्यंत महत्त्वपूर्ण उदाहरण मिलते हैं उनमेंसे कुछको हम कुम्हारोंके इतिहासमें पाते हैं। इनमेंसे हम तीन सबसे विचित्र विदेशी उदाहरण लेते हैं जो फ्रांसनिवासी **बरनर्ड पैलिस्सी**, जर्मनीनिवासी **फ्रैडरिक बूटघर** और इंग्लैंडनिवासी **जोजिआ वैजबुडके** जीवनचरितोंमें मिलते हैं।

यद्यपि अधिकांश प्राचीन जातियाँ चिकनी मिट्टीके साधारण बरतन बनानेकी कला जानती थीं, परन्तु मिट्टीके बरतनों पर ओप या चमकदारलेप चढ़ाना बहुत कमको मालूम था। इट्रूरियाके प्राचीन निवासी इस प्रकारके लेपदार अथवा लूकदार बरतन बनानेकी कलासे परिचित थे और उनके बरतनोंके नमूने अब भी प्राचीन-पदार्थ-संग्रहोंमें मिलते हैं। परन्तु इस कलाको लोग बीचमें भूल गये थे; इसका उद्धार अभी थोड़े ही वर्षोंसे हुआ है। प्राचीन कालमें इट्रूरियाके बरतन बहुत दामोंमें आते थे; यहाँ तक कि सम्राट् आगस्टसके समयमें एक बरतनका मूल्य उसीके बराबर तौलकर सोना देना पड़ता था! मूअर लोगोंको यह कला मालूम थी और वे मैजौरिका द्वीपमें ऐसे बरतन बनाया करते थे। जब सन् १११५ ईस्वीमें पिसावालोंने मैजौरिका ले लिया तब वे लूटकी और चीजोंके साथ मूअर लोगोंके बनाये हुए कुछ बरतन भी ले गये और उन्होंने इन बरतनोंको पिसा नगर (इटली देश) के प्राचीन गिरजोंमें लगा दिया, जहाँ वे अबतक लगे हैं। दो शताब्दियोंके पश्चात् इटलीवाले इन बरतनोंकी नकल करके लेपदार बरतन बनाने लगे।

इटलीमें इस कलाका उद्धार अथवा अनुसंधान करनेवाला एक लूका नामका संगतराश था। वह बिनाथके और धैर्यपूर्वक मेहनत करता था। दिनभर अपनी छैनीसे काम करता था और रातको चित्रकारी सीखता था। इतना परिश्रम करने पर भी वह संगतराशी करके अपना निर्वाह करनेके लिए काफी रुपया न कमा सकता था। उसने सोचा कि किसी ऐसी चीजका काम सीखना चाहिए जो पत्थरसे अधिक मुलायम और सस्ती हो। बस वह चिकनी मिट्टीके बरतन बनाने लगा और उसने उन पर ऐसा लेप चढ़ाने और उनको पकानेका प्रयत्न किया कि जिससे वे बहुत दिनोंतक चल सकें। कई बार प्रयत्न करनेपर उसने अंतमें एक ऐसी विधि निकाली, जिससे वह बरतनों पर एक ऐसी चीजका लेप कर देता था जो मिट्टी पर रखकर पकाये जानेसे मिट्टी पर जम जाती थी और फिर कभी नष्ट न होती थी। उसने फिर इस लेपमें रंग मिलानेकी विधि भी निकाली, जिससे बरतन बहुत ही सुन्दर बनने लगे।

लूकाकी ख्याति समस्त योरुपमें फैल गई और उसकी बनाई हुई चीजोंके नमूने सर्वत्र पहुँच गये। बहुतसे बरतन फ्रांस और स्पेनमें भी पहुँचे, जहाँ पर उनकी कदर की गई। उस समय फ्रांसमें मिट्टीके भद्दे घड़े और हाँड़ियाँ केवल ये ही दो प्रकारके बरतन बनते थे। पैलिसीके समय तक ऐसा ही रहा। पैलिसी ने ऐसी वीरताके साथ बड़े बड़े संकटोंका सामना किया कि उसके विचित्र जीवनकी घटनाओंमें कल्पित कथाओंकी सी झलक मालूम होती है।

बरनर्ड पैलिसीका जन्म दक्षिणी फ्रांसमें सन् १५१० ईस्वीमें हुआ था। उसका पिता शीशेका काम किया करता था और यही काम उसने अपने पुत्रको सिखाया था। वह ऐसा गरीब था कि अपने पुत्रको स्कूलमें न पढ़ा सकता था। बरनर्ड पैलिसीने बादको कहा था कि "मेरे पास केवल पृथ्वी और आकाश ये ही पुस्तकें थीं, जो सबोंके लिए खुली पड़ी हैं।" मगर उसने शीशे पर चित्रकारी करना सीख लिया और बादमें चित्र बनाना और पढ़ना लिखना भी सीख लिया।

जब पैलिसी १८ वर्ष का हुआ तब शीशेका व्यापार नष्ट हो गया, इसलिए वह अपने पिताके घरको छोड़कर पीठ पर झोला लादे चल दिया और

संसारमें अपना ठिकाना ढूँढ़ने लगा। उसने पहले गैसकनीकी ओर यात्रा की। वहाँ उसको काम मिल गया। वह कभी कभी समय निकाल कर भूमिको मापनेका काम भी सीखा करता था। फिर वह उत्तरकी तरफ चला गया और कई जगह जा-जाकर रहा।

पैलिसी इस प्रकार दश बर्ष तक मारा मारा फिरता रहा। इसके बाद उसने अपना विवाह कर लिया, घूमना बंद कर दिया और सैनटीज नामक नगरमें रहकर शीशे पर चित्रकारी और भूमिकी माप करनेका काम करने लगा। उसके तीन बच्चे हुए, जिनके पालन पोषणका भार उस पर आपड़ा और इसके साथ ही उसका खर्च बहुत बढ़ गया। शक्ति भर काम करने पर भी उसकी आमदनी उसकी जरूरतसे बहुत कम होती थी। अतएव उसको अपनी दशा सँभालना जरूरी हो गया। उसने कुछ और अच्छा काम करनेका विचार किया और इसलिए उसने मिट्टीके बरतनों पर चित्र बनाने और लेप चढ़ानेके काम पर ध्यान दिया। परन्तु वह इस कामको बिलकुल न जानता था, क्योंकि उसने इससे पहले किसीको मिट्टीके बरतन पकाते हुए न देखा था। अतएव उसको सब कुछ अपने आप ही सीखना पड़ा। उसका कोई सहायक न था, परन्तु वह सफलताकी आशासे परिपूर्ण था और सीखनेका इच्छुक था। उसमें निस्सीम धीरज और अनंत संतोष था।

इटलीके बने हुए एक सुन्दर कटोरेको देखकर—कदाचित् वह लूकाका ही बनाया हुआ होगा—पैलिसीने बरतनों पर लेप चढ़ानेकी नई कला पर पहले पहल विचार करना शुरू किया। उस कटोरेको देखना ऐसी तुच्छ बात थी कि उससे किसी सामान्य मस्तिष्कवाले मनुष्य पर कुछ असर न होता, बल्कि स्वयं पैलिसी पर भी किसी साधारण समयमें उसका कुछ असर न पड़ता; परन्तु यह घटना उस समय हुई जब वह कोई दूसरा धंधा करनेका विचार कर रहा था; अतएव उसके मनमें उस बरतनकी नकल करनेकी इच्छा भड़क उठी। उस कटोरेको देखनेसे उसके जीवनमें खलबली मच गई और उसके ऊपर जो लेप था उसके विषयमें जाननेका उसे रोग होगया। यदि वह अविवाहित होता, तो इस कलाकी खोजमें इटलीका जाता; परन्तु वह अपनी स्त्री और बच्चोंके कारण बँधुआ बन रहा था और उन्हें छोड़कर कहीं न जा सकता था; अतएव वह उन्हींके पास रहा और

मिट्टीके बरतन बनाने और उन पर लेप करनेकी विधि जाननेकी आशामें भटकने लगा ।

पहले तो उसने जिन चीज़ोंका लेप बना हुआ था उनको केवल अटकलसे जानना चाहा; और उनको जाननेके लिए उसने तरहतरहकी परीक्षाओंका करना आरंभ किया । उसने उन सब चीज़ोंको–जिनसे उसकी समझमें लेप बन सकता था–चूर करके एक मसाला तैयार किया । फिर वह साधारण मिट्टीके बरतन मोल लाया और उनके टुकड़े करके उसने उस चूरेको उनके ऊपर भुरक दिया और एक भट्टी बनाकर उन टुकड़ोंको आगमें रख दिया । उसकी परीक्षायें निष्फल हुईं और बरतन, ईंधन, मसाला, समय और परिश्रम नष्ट होनेके सिवाय कुछ हाथ न आया । स्त्रियाँ ऐसी परीक्षाओंको सहज ही पसंद नहीं करतीं । क्योंकि इनका स्पष्ट परिणाम यह होता है कि बच्चोंके लिए भोजन और वस्त्र मोल लेनेके साधन भी नष्ट हो जाते हैं । यद्यपि पैलिसीकी स्त्री और और बातोंमें अपने पतिकी आज्ञाका पालन करती थी, तो भी वह इस बात पर राजी न हुई कि मिट्टीके और बरतन खरीदे जायँ । क्योंकि वह समझती थी कि वे तोड़नेके ही लिए खरीदे जाते हैं । परन्तु उसे अपने पतिकी बात माननी पड़ी, क्योंकि पैलिसीने लेपका रहस्य जाननेका दृढ संकल्प कर लिया था और वह उस कामको छोड़ना न चाहता था ।

महीनों और वर्षोंतक पैलिसी निरंतर परीक्षायें करता रहा । पहली भट्टीसे जब काम न चला, तब उसने एक और भट्टी घरके बाहर बनाई । उसमें उसने और अधिक लकड़ियाँ जलाईं, अधिक मसाला और बरतन नष्ट किये और अधिक समय गवाँया, जिससे वह और उसका कुटम्ब गरीबीके चुंगलमें फँस गया । उसने बादमें कहा था कि "इसी तरह मैंने कष्टपूर्वक कई वर्ष व्यर्थ खो दिये, क्योंकि मुझे अपने मनोरथमें कुछ भी सफलता न हुई ।" बीच बीचमें वह अपना पहला धन्धा अर्थात् शीशेपर चित्र खींचना, तसवीरें बनाना और भूमिकी माप करनेका काम करता रहा; परन्तु इन कामोंसे उसकी आमदनी बहुत थोड़ी होती थी । निदान ईंधनके खर्चके कारण वह अपनी भट्टीमें काम न कर सका; परन्तु उसने मिट्टीके और बरतन मोल लिये और पहलेकी तरह उनके तीन चार सौ टुकड़े किये और उनके ऊपर मसाला डालकर वह उन्हें एक भट्टे पर पकानेके लिए ले गया, जहाँ पर

खपैरलके खपरे पकाये जाते थे और जो उसके घरसे दो कोससे भी अधिक दूर था। टुकड़े पक जाने पर निकाले गये और वह उन्हें देखने गया; परन्तु उसे फिर असफलता हुई। यद्यपि वह निराश हो गया तो भी परास्त न हुआ; उसने उसी जगह फिर नये सिरेसे काम शुरू करनेका संकल्प कर लिया।

वह कुछ समय तक यह काम न कर सका। क्योंकि वह भूमि मापनेके कोई सरकारी कामके करने पर मजबूर किया गया और इस कामकी उसे मजदूरी भी खूब मिली। इस कामसे छुट्टी पाते ही वह अपने पुराने काममें दूने उत्साहके साथ लग गया। उसने तीन दर्जन मिट्टीके बरतन और मोल लेकर तोड़े, उनके टुकड़ों पर उसने कई तरहके मसाले बना कर डाले और फिर उन्हें पकानेके लिए वह एक पासकी भट्टी पर ले गया, जहाँ शीशा या काच गलाया जाता था। इस बार उसे कुछ कुछ आशा हुई। शीशेकी भट्टीकी तेज गर्मीसे कुछ मसाले पिघल गये, परन्तु उनका सफेद लेप न बना।

वह दो वर्ष तक और परीक्षायें करता रहा, परन्तु कोई संतोषप्रद परिणाम न हुआ। इसी बीचमें भूमि मापनेसे उसे जो मजदूरी मिली थी वह सब खर्च हो गई और वह पुनः निर्धन हो गया। परन्तु उसने एक बार और भी जी-तोड़कर कोशिश करनेका संकल्प कर लिया और इस बार उसने सब दफेसे अधिक बरतन तोड़े। उसने तीन सौसे भी अधिक टुकड़े शीशेकी भट्टी पर भेज दिये और वहाँ पर स्वयं उनके पकनेका फल देखनेको गया। चार घंटे तक वह देखता रहा और फिर भट्टी खोली गई। तीन सौ ठिकरोंमेंसे केवल एक ठिकरेका मसाला पिघला और वह निकाल कर ठंडा किया गया। ठंडा होने पर मसाला कड़ा हो गया और वह सफेद-सफेद तथा चिकनासा दिखने लगा। उस ठिकरे पर सफेद लेप चढ़ गया और पैलिसीने उसे अपूर्व सुन्दर ठहराया। इतना कष्ट उठाने पर उसे वह अवश्य ही सुन्दर मालूम हुआ होगा। वह उसे लेकर अपनी स्त्रीको दिखानेके लिए घर दौड़ा और उससे कहा कि " मुझे मालूम होता है कि अब मैं एक नया मनुष्य होगया हूँ।" परन्तु उसका मनोरथ अभी सफल न हुआ था; अभी तो वह उससे कोसों दूर था। इस चेष्टामें, जिसको वह अन्तिम समझता था; कुछ सफलता हो जानेसे उसने और भी परीक्षायें कीं और उसको फिर अनेक बार असफलतायें हुईं।

उसने समझा कि अब आविष्कार होनेको ही है और इस लिए उसे पूरा करनेके लिए उसने अपने घरके पास एक अपनी ही भट्टी बनानेका संकल्प किया, जहाँ वह अपना काम गुप्त रीतिसे कर सके। उसने अपने हाथोंसे भट्टी बनाना शुरू कर दिया। इसके लिए वह अपनी पीठ पर ईंटें लादके लाता था। ईंटें चिननेवाला, मजदूरका काम करनेवाला और सब कुछ वही था। इस काममें सात आठ महीने और निकल गये। अन्तमें भट्टी बन गई और कामके लायक हो गई। इसी बीचमें पैलिसीने मिट्टीके बहुतसे बरतन बना लिये थे, जिन पर वह लेप चढ़ाना चाहता था। उनको एक बार कुछ पकाकर उसने उन पर लेप चढ़ाया और फिर पकनेके लिए भट्टीमें रख दिया। यद्यपि उसके पास खर्च बहुत कम था, तो भी उसने कुछ समयसे अपनी अन्तिम चेष्टाके लिए ढेरका ढेर ईंधन इकट्ठा कर लिया था और वह इसको काफी समझता था। अब उसने भट्टी सुलगाई और काम शुरू किया। दिन भर वह भट्टीके सामने बैठा रहा और ईंधन झोंकता रहा। फिर रातभर भी बैठा रहा, उसी तरह टकटकी लगाये देखता रहा और ईंधन झोंकता रहा; परन्तु लेप न पिघला। मेहनत करते करते सूर्योदय हो गया। उसकी स्त्री वहीं पर कुछ कलेवा ले आई—क्योंकि वह भट्टीके पाससे हिलना न चाहता था। वह निरन्तर ईंधन डालता रहा। एक दिन और भी निकल गया, परन्तु लेप न पिघला। सूर्य अस्त हुआ और रात भी निकल गई। पैलिसी पीला और दुबला पड़ गया, परन्तु वह परास्त न हुआ। वह अपनी भट्टीके सामने बैठा रहा और लेपके पिघलनेकी बाट देखता रहा। तीसरा दिन और रात भी इसी तरह निकल गई—चौथे, पाँचवें यहाँ तक कि छट्ठे रातदिन भी,—हाँ, हाँ, छः बड़े बड़े दिन और रातें असमसाहसी पैलिसीको प्रतीक्षा करते हुए, परिश्रम करते हुए और ढारस बाँधते हुए निकल गईं; और फिर भी लेप न पिघला।

फिर उसको खयाल हुआ कि मसालेकी चीजोंमें कुछ दोष रह गया होगा—कदाचित् गलानेवाली चीजोंमें कुछ कसर रह गई होगी; इसलिए उसने नई चीजें पीसकर और मिलाकर एक बार और जाँच करनेके लिए दूसरा मसाला तैयार किया। इस प्रकार दो तीन सप्ताह और निकल गये। परन्तु वह और बरतन कहाँसे खरीदे? क्योंकि पहले बरतन जो उसने अपने हाथसे

बनाये थे कई दिनोंतक आगमें पकनेसे अब बिलकुल निकम्मे होगये थे। वह अपना रुपया तो सब खर्च कर चुका था; परन्तु उधार ले सकता था। उसकी साख अब भी अच्छी थी। उसने एक मित्रसे अधिक ईंधन और बरतन मोल लेनेके लिए काफी रुपया उधार ले लिया और वह एक बार और परीक्षा करनेके लिए तयार हो गया। बरतनों पर नये मसालेका लेप चढ़ा कर उनको भट्टीमें रख दिया गया और आग फिर सुलगाई गई।

यह परीक्षा अन्तिम थी और सब परीक्षाओंसे अधिक साहसपूर्ण थी। आग दहकने लगी; गर्मी प्रचंड हो गई; परन्तु फिर भी लेप न पिघला। ईंधन निबटने लगा। अब आग कैसे जले? बागका हाता लकड़ियोंका बना था। ये लकड़ियाँ जल सकती थीं। इनको अवश्य बलिदान कर देना चाहिए; इधरकी दुनिया उधर हो जाय, परन्तु महती परीक्षाका काम न बिगड़ने पाय। ये लकड़ियाँ भी खींचखाँचकर तोड़ ली गईं और भट्टीमें झोंक दी गईं। वे भी जल गईं और कुछ न हुआ। लेप अभी तक न पिघला। यदि दश मिनट और गर्मी लगे तो शायद पिघल जाय। चाहे सर्वस्व जाता रहे, परन्तु ईंधन कहींसे अवश्य लाना चाहिए। अब केवल घरका लकड़ीका असबाब और आलमारियाँ बाकी थीं। घरमें चड़चड़ानेका शब्द सुनाई दिया। स्त्री और बच्चे, जो समझते थे कि पैलिसी पागल होगया है, चिल्लाते रह गये और पीलसीने मेजोंको तोड़-ताड़कर भट्टीमें झोंक दिया। परन्तु फिर भी लेप न पिघला। अभी आलमारियाँ बाकी थीं। घरमें लकड़ियोंके चड़चड़ानेका शब्द फिर सुनाई दिया; आलमारियाँ भी तोड़कर भट्टीमें झोंक दी गईं। उसकी स्त्री और बच्चे घरसे निकल कर भागे और पागलोंकी तरह नगरमें यह चिल्लाते हुए फिरने लगे कि "बेचारा पैलिसी बावला हो गया है और ईंधनके लिए घरका असबाब तक नष्ट किये डालता है!"

पूरे एक महीनेसे पैलिसीने अपने शरीरपरसे कुर्ता भी न उतारा था। वह सूखकर बिलकुल काँटा हो गया था—परिश्रम, चिन्ता, निरीक्षण और भूखसे तंग आगया था। वह ऋणी हो गया था और विनाशोन्मुख मालूम होता था। परन्तु उसने अन्तमें गुप्त रहस्य जान लिया, क्योंकि गर्मीकी अंतिम प्रचंडतासे लेप पिघल गया। जब साधारण मटमैले घड़े भट्टीके ठंडे पड़ जाने पर उसमेंसे निकाले गये, तब उन पर सफेद चमकदार लेप चढ़ गया था।

इसीके लिए उसने तिरस्कार निन्दा और घृणा सहन की और संतोषपूर्वक वह उन अच्छे दिनोंकी प्रतीक्षा करता रहा, जब उसे अपने अनुसंधानसे काम लेनेका अवसर मिले।

पैलिसीने फिर एक कुम्हारको नौकर रक्खा जिससे अपने ढंगके बरतन बनवाये और वह स्वयं भी कुछ पात्र बनाने लगा, जिन पर उसने लेप चढ़ानेका निश्चय किया। परन्तु जब तक बरतन बनकर बिक्रीके लिए तयार न हो जायँ तबतक वह अपना और अपने कुटम्बका निर्वाह कैसे करे? सौभाग्यवश उस नगरमें एक ऐसा आदमी था, जिसको पैलिसीकी ईमानदारी पर विश्वास था। वह एक भटियारा था। उसने उसको छः महीनेतक जबतक उसका काम चल न निकले अपने यहाँ रखना और भोजन देना स्वीकार कर लिया। परन्तु उस कुम्हारके विषयमें जिसको उसने नौकर रक्खा था, पैलिसीको शीघ्र ही अनुभव हो गया कि मैं उसको नियत मजदूरी न दे सकूँगा। पैलिसी अपने घरको तो पहले ही उजाड़ चुका था, अब वह अपने आपको उजाड़ सकता था; और सचमुच ही उसने कुम्हारको उस समय तककी मजदूरीके बदले अपने कपड़े देकर बिदा कर दिया।

पैलिसीने फिर एक भट्टी पहलेसे अच्छी तैयार की; परन्तु उसने दुर्दैवसे उसके भीतरकी ओर कुछ चकमक पत्थर लगा दिये। अब भट्टीमें आग जलाई गई तो वे चकमक पत्थर भड़क कर फट गये और उनके छोटे छोटे टुकड़े उचट कर बरतनों पर चिपक गये। यद्यपि लेप ठीक चढ़ा, परंतु बरतन बहुत खराब हो गये और इस प्रकार छः महीनेका परिश्रम फिर भी निष्फल गया। बरतनोंके बिगड़ जाने पर भी लोग उन्हें कम दाम देकर खरीदनेको राजी थे, परन्तु पैलिसीने उनको बेचना न चाहा, क्योंकि उसने सोचा कि ऐसा करनेसे उसके नाममें बट्टा लग जायगा और इस लिये उसने सब बरतन तोड़ डाले। उसने लिखा है कि, "इस पर भी आशा मुझमें जान फूँकती रही और मैंने पुरुषार्थ न छोड़ा। कभी कभी जब लोग मुझसे मिलने आते तो मैं प्रसन्न होकर उनकी आव भगत करता, परन्तु वास्तवमें मैं दुखी रहता था। बुरासे बुरा कष्ट जो मैंने सहन किया वह यह था कि मेरे घरवाले मुझे चिढ़ाते थे और मेरे पीछे पड़े रहते थे। वे लोग ऐसे अन्यायी हो गये थे कि कुछ साधन न होनेपर भी आशा करते थे कि मैं काम करूँ। वर्षों तक

मेरी भट्टियाँ बिना छत या छप्परके रहीं। जब मैं उनपर जाकर काम करता था, तब मुझे रातोंमें आधी और मेहके थपेड़े खाने पड़ते थे। न कोई सहायता करनेवाला था और न कोई धीरज बँधानेवाला था, सिवाय इसके कि मेरे एक तरफ बिल्लियाँ रोया करती थीं और दूसरी तरफ कुत्ते भूँका करते थे। कभी कभी ऐसी जोरोंकी आँधियाँ चलती थीं कि मुझे काम छोड़कर घरमें छिपना पड़ता था। मैं मेहसे ऐसा तर-बतर हो जाता था कि मानों कीचमें लोटा हूँ। वहाँसे मैं आधी रातको या पौ फटने पर सोनेके लिए घर जाता था; परन्तु वहाँ घरमें उजेला न होनेके कारण इस तरह ठोकरें खाता था और इधरसे उधर जाता था कि मानों मैं शराब पीकर नशेमें घूम रहा हूँ। उस समय मैं थका हुआ और अपने परिश्रमके निष्फल जानेसे शोकातुर रहता था। परन्तु हाय! घरमें भी शरण न मिलती थी, क्योंकि एक तो वह पानीसे भर जाता था और दूसरे मुझे वहाँ पर और भी, बड़ी बलाका—घर-गिरिस्तीकी झंझटोंका—सामना करना पड़ता था, जिनको याद करके मैं अब भी आश्चर्य करता हूँ कि उस समयके मेरे बहुतसे कष्ट मुझे सर्वथा ही क्यों न खा गये।"

जब यह नौबत पहुँच गई, तब पैलिसी बड़ा उदास हुआ और आशासे हाथ धो बैठा। उसका और सब कुछ हो गया, बस केवल दम बाकी रहा। वह रंजके मारे नगरके पास खेतोंमें झख मारता फिरने लगा। उसके कपड़े चिथड़े हो गये थे, उनकी धज्जियाँ उसके साथ लटकती फिरती थीं, और वह स्वयं सूख कर काँटा हो गया था। अपनी पुस्तकके एक विचित्र अंशमें उसने वर्णन किया है कि "मेरी टाँगोंमें पिंडलियोंका पता न रहा। वहाँ पर बन्धन लगाने पर भी मोजे न टिक सकते थे; वे चलनेके समय गिरकर एड़ियों पर आ जाते थे!" उसके घरवाले पैलिसीको उसके अल्हड़पनके कारण निरंतर बुरा भला कहते थे और पड़ौसी उसकी मनमानी मूर्खताके कारण उसको लज्जासे पानी पानी किये देते थे, इस लिए वह कुछ समयके लिए फिर अपना पुराना धंदा करने लग गया। इस बीचमें उद्योगपूर्वक परिश्रम करके उसने अपने कुटुम्बियोंका निर्वाह किया और वह अपने पड़ौसियोंकी निगाहमें भी कुछ अच्छा बन गया; परन्तु लगभग एक वर्षके बाद ही उसने फिर अपने प्यारे कामको उठा लिया! यद्यपि वह लेपकी खोजमें अबतक दश वर्ष व्यतीत कर

चुका था, तो भी उसको उस कलामें निपुणता प्राप्त करनेके लिए परीक्षाओंमें आठ वर्ष तक और सिर मारना पड़ा। उसने धीरे धीरे अनुभवद्वारा हस्त-कौशल्य और निश्चय फल प्राप्त करना सीख लिया और असफलताओंसे बहुत कुछ व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त कर लिया। हर एक निष्फलतासे उसे एक नवीन शिक्षा मिलती थी। लेप और मिट्टीके स्वभाव और गुणोंके विषयमें और भट्टियाँ बनाने और उनसे काम लेनेके सम्बंधमें उसे हर बार एक न एक नई बात मालूम हो जाती थी।

निदान सोलह वर्ष तक परिश्रम करनेके बाद पैलिसीके जीमें जी आया और उसने अपने आपको 'कुंभकार' या 'कुम्हार' कहा। इन सोलह वर्षोंमें वह उस कलाको सीखता रहा। उसे अपने आपको स्वयं शिक्षा देनी पड़ी और बिलकुल नये सिरेसे काम करना पड़ा। वह अब अपने बरतनोंके बेचनेके योग्य हो गया, जिनकी आमदनीसे वह अपने कुटुम्बका सुखपूर्वक निर्वाह करने लगा। परन्तु उसने जो कुछ किया या उसी पर वह संतोष करके न बैठ रहा। वह उन्नतिकी एक सीढ़ीसे दूसरी पर कदम रखने लगा। वह सदैव बड़ीसे बड़ी प्रवीणता पर लक्ष्य रखता था। उसने नमूने प्राप्त करनेके लिए प्रकृतिकी चीजोंका ऐसी सफलतापूर्वक अध्ययन किया कि एक प्रसिद्ध विद्वानने उसके विषयमें कहा है कि, "वह ऐसा बड़ा पदार्थशास्त्रज्ञ था कि जिसे केवल प्रकृति ही उत्पन्न कर सकती है।" प्राचीन पदार्थ-संग्रहकर्ता अब उसके अलंकृत पात्रोंको दुष्प्राप्य रत्न समझते हैं और वे इतने मूल्य पर बिकते हैं कि वह कल्पित सा प्रतीत होता है *।

परन्तु पैलिसीके कष्टोंका अभी अन्त न आया था। उस समयमें धार्मिक विप्लवका बड़ा जोर था। जिस संप्रदायका राजा होता था, यदि कोई मनुष्य उसी संप्रदायका न होता, तो उसको दंड दिया जाता था। हजारों आदमी इसी अपराधमें जीवित जला दिये जाते थे। पैलिसी प्रोटेस्टेण्ट (Protestant) सम्प्रदायका था और वह अपने विचारोंको भयहीन होकर प्रकट करता था। अतएव उसको पकड़नेके लिए सरकारी कर्मचारी उसके घरमें

* लंडनमें जब मिस्टर बर्नलकी प्राचीन चीजें बिकीं, तब उनमें पैलिसीकी बनाई हुई एक छोटीसी रकाबी थी, जिसका व्यास एक फुट था और जिसके बीचमें एक छिपकली बनी थी। वह २४३०) रुपयेमें बिकी!

चले आये और उसके बरतन भाँड़े चकनाचूर कर दिये गये। उन लोगोंने उसे रातमें ही एक अँधेरे कारागारमें ले जाकर बंद कर दिया और वे उसके फाँसी पर चढ़ाये जाने अथवा जलाये जानेकी घड़ीकी प्रतीक्षा करने लगे। उसको जला देनेका हुक्म जारी हो गया, परन्तु एक शक्तिशाली जमींदारने उसे बचा लिया–इस लिए नहीं कि उसे पैलिसीसे विशेष प्रेम था, किन्तु इस लिए कि ईकोइन नगरमें जो विशाल भवन बन रहा था उसका लेपदार फर्श लगानेके लिए और कोई शिल्पकार न मिल सकता था। इसी लिए वह मुक्त कर दिया गया।

अपने दो पुत्रोंकी सहायतासे बरतन बनानेके कामके अतिरिक्त पैलिसीने अपने जीवनके अंतिम भागमें बरतन बनानेकी कलाके विषयमें कई पुस्तकें लिख कर इस लिए प्रकाशित कीं कि उनसे उसके देशवासियोंको शिक्षा मिले और वे उन त्रुटियोंसे बच सकें जो उसने स्वयं की थीं। उसने कृषि-विद्या, गृह-निर्माण-विद्या और प्राकृतिक इतिहास पर भी पुस्तकें लिखीं। वह फलित ज्योतिष, कीमिया (रसायन), जादू इत्यादिका कट्टर विरोधी था। इस कारण उसके बहुतसे शत्रु पैदा हो गये, उसे धर्मच्युत कह कर उसकी निंदा करने लगे और वह अपने धर्मके कारण फिर कैद कर दिया गया। यद्यपि वह अब ७५ वर्षका बूढ़ा था, और अपना एक पैर कब्रमें लटका चुका था, परन्तु उसका हृदय पहलेके समान ही वीर था। उसे मृत्युका भय दिखाया गया; परन्तु उसने अपना धर्म छोड़ना स्वीकार न किया। वह अपने धर्ममें वैसा ही दृढ़ रहा जैसा कि लेपकी खोजमें रहा था। फ्रांस देशके सम्राट् हेनरी तृतीय भी कैदखानेमें उसके पास इस लिए गये कि उसे धर्म बदलने पर राजी करें। सम्राटने कहा—"भले आदमी, तूने मेरी माताकी और मेरी अबतक ४५ वर्ष सेवा की है। खेद है कि तू अपना हठ नहीं छोड़ता है। हम तुझे अब तक क्षमा करते रहे हैं। अब मेरी प्रजा और अन्य लोग मुझे दबाते हैं, अत एव मैं मजबूर हूँ कि तुझे तेरे शत्रुओंके हाथमें छोड़ दूँ। यदि अब भी तू अपना धर्म न बदलेगा तो कल जीता जला दिया जायगा।" उस अजेय बूढ़े मनुष्यने उत्तर दिया,—"राजन्, मैं ईश्वर (धर्म) के नाम पर जान तक देनेको तैयार हूँ। आपने कई बार कहा है कि हमको तुझ पर दया आती है; परन्तु अब मुझे आप पर दया आती है, क्योंकि आपने ये शब्द कहे हैं कि

'मैं मजबूर हूँ।' राजन्, ये राजाकेसे शब्द नहीं हैं। इन शब्दोंका प्रयोग आप और वे लोग—जो आपको मजबूर करते हैं—मेरे ऊपर नहीं कर सकते। क्योंकि मैं जानता हूँ कि मरते किस तरह हैं।" पैलिसीने वास्तवमें कुछ काल पीछे अपने धर्मके लिए प्राण न्योछावर कर दिये, परन्तु वह जलाया नहीं गया। वह लगभग एक वर्ष तक कैद रहकर कैदखानेमें ही मर गया। वहीं पर एक ऐसे जीवनका शांतिपूर्वक अंत हो गया जो अपने अथक परिश्रम, असाधारण सहनशीलता, अटल सत्यशीलता और अन्य दुष्प्राप्य सद्गुणोंके लिए विख्यात था।

चीनीके बरतनोंका आविष्कारकर्ता जान फ्रैडरिक बूटघरका जीवन पैलिसीके जीवनसे सर्वथा भिन्न है। बूटघरका जन्म सन् १८८५ ईस्वीमें हुआ था। वह १२ वर्षकी अवस्थामें बर्लिन नगरमें एक अत्तारके यहाँ नौकर हो गया था। उसे शुरूसे ही रसायन-विद्याका बड़ा शौक था। कई वर्ष बाद बूटघरने यह खबर उड़ा दी कि मैंने रसायनका अनुसंधान कर लिया और उसके द्वारा सोना भी बना लिया है। उसने किसी न किसी चालाकीसे अपने मालिकके सामने ऐसा ही कर दिखाया और उसके मालिक और अन्य दर्शकोंको विश्वास हो गया कि बूटघरने सचमुच ताँबेका सोना बना दिया।

फिर तो यह खबर चारों ओर फैल गई और उस अद्भुत सोना बनानेवालेको देखनेके लिए दूकानके सामने लोगोंके ठठके ठठ लगने लगे। राजाने भी उसको देखने और उससे बातें करनेकी इच्छा प्रकट की। जब प्रशियाके सम्राट् फ्रैडरिक प्रथमको सोनेका वह टुकड़ा दिखलाया गया, जो बूटघरका बनाया हुआ कहा जाता था, तब उसको बेहद सोना पानेकी ऐसी चाट लगी—क्योंकि उसके देशमें उस समय रुपयेकी बड़ी जरूरत थी—कि उसने बूटघरको नौकर रखकर एक सुरक्षित किलेके भीतर सोना बनानेका संकल्प कर लिया। परन्तु बूटघरको इस बातकी शंका हो गई और उसको यह भी भय हुआ कि मेरी कलई खुल जायगी; इस लिए वह देशकी सीमाको पार करके सैक्सनी देशमें पहुँच गया।

बूटघरको पकड़नेके लिए ढाई हजार रुपयेका इनाम नियत हुआ, पर कुछ भी न हुआ। बूटघरने विटैनबर्ग नगरमें पहुँचकर सम्राट् आगस्टस प्रथमसे सब हाल कहकर रक्षाकी बिनती की। आगस्टसको स्वयं उस समय रुपयेकी

जरूरत थी, इस लिए वह बूटघरके द्वारा मनमाना सोना प्राप्त कर लेनेकी खुशीमें फूला न समाया। उसने समझा कि मेरे हाथ सोनेकी चिड़िया लग गई। उसने अपने कर्मचारियोंको आज्ञा दी कि बूटघरको गुप्तरीतिसे ड्रैसडन नगरमें ले जाकर रक्खो। वे लोग बूटघरको लेकर गये ही थे कि सम्राट् फ्रैडरिकके सैनिक वहाँ आगये और कहने लगे कि बूटघरको हमारे हवाले करो। परन्तु उनके आनेमें देर हो गई; बूटघर ड्रैसनमें पहुँच चुका था। वहाँ वह एक महलमें ठहराया गया। उसको बड़ा सुख दिया गया, परन्तु उसकी बड़ी चौकशी रक्खी गई और उस महल पर कड़ा पहरा लगा दिया गया।

आगस्टस कुछ समय तक वहाँ न आसका, क्योंकि उसे उसी समय पोलैंडमें एक राज-विद्रोहको शांत करने जाना पड़ा। परन्तु वह सोनेके लिए बेचैन था; इसलिए उसने बूटघरको एक पत्र भेजा जिसमें लिखा कि मुझे सोना बनानेकी तरकीब लिख भेजो, मैं बना लूँगा। बूटघरने एक शीशी भेज दी जिसमें एक तरहका लाल रस भरा था और यह लिख भेजा कि यदि किसी धातुको पिघलाकर यह रस उस पर डाल दिया जाय, तो उसका सोना होजायगा। इस महत्त्वपूर्ण शीशीको सम्राटके पास स्वयं राजकुमार एक बड़ीभारी सेनाके सहित ले गया। सम्राटको ज्यों ही यह शीशी मिली उसने उसी दम उसकी परीक्षा करनी चाही। राजा और राजकुमार दोनों महलके भीतर अकेले ताला लगाकर बैठ गये! उन्होंने पहले ताँबा पिघलाया और फिर उस पर यह लाल रस डाला; परन्तु कुछ न हुआ, सब कुछ करनेपर भी ताँबाका ताँबा ही रहा आया। राजाने बूटघरका पत्र फिर पढ़ा। उसमें लिखा था कि इस अर्कको 'पवित्र मनसे' डालना चाहिए; परन्तु राजा उस दिन शामको दुराचारियोंकी संगतमें रहा था; इस लिए उसने सोचा कि इसी कारणसे मुझे असफलता हुई। दूसरे दिन उसने फिर परीक्षा की, परन्तु इस बार भी कुछ न हुआ। तब तो राजाके क्रोधका कुछ ठिकाना न रहा, क्योंकि इस बार परीक्षा करनेके पहले वह पादरीके सामने अपने पापोंका प्रायश्चित्त ले चुका था!

आगस्टसने अब इरादा कर लिया कि बूटघरसे यह गुप्त रहस्य जबरदस्ती पूछूँगा; क्योंकि निर्धनतासे बचनेका यही एक उपाय है। बूटघरने सम्राटके इस इरादेका हाल सुनकर फिर भाग जानेकी कोशिश की। वह किसी तरह

निकल भागा और तीन दिन तक यात्रा करके आस्ट्रिया देशमें पहुँच गया और वहाँ उसने अपने आपको सुरक्षित समझा। परन्तु आगस्टसके नौकर उसका पीछा किये चले आये। वे उसका पता लगाते लगाते वहाँ आगये जहाँ वह ठहरा था और उसे पकड़कर फिर ड्रैसडन ले गये। इस बार उसकी खूब चौकशी की गई और कुछ दिन बाद वह एक किलेमें भेज दिया गया। उससे कहा गया कि राजाका खजाना बिलकुल खाली पड़ा है और तेरे सुवर्णमेंसे सेनाके सिपाहियोंका पिछला वेतन चुकाना है। राजा उसके पास स्वयं आया और क्रुद्ध होकर बोला, "अगर तू इसी वक्त सोना बनाना शुरू न करेगा, तो फाँसी पर लटका दिया जायगा!"

वर्षों हो गये, बूटघरने सोना न बनाया; परन्तु उसको फाँसीकी सजा न दी गई। उसको तो ताँबेका सोना बनानेसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण अनुसंधान करना था, अर्थात् वह चीनी मिट्टीके वर्तन बनानेके लिए पैदा हुआ था। चीनीके कुछ बरतन पुर्तगालवाले चीनसे लाये थे, जो तौलमें अपनेसे भी अधिक सोनेमें बिके थे। बूटघरका ध्यान इस ओर वाल्टरने आकर्षित किया, जो स्वयं बड़ा विद्वान् और प्रसिद्ध था। उसने बूटघरसे–जिसे अब भी फाँसीका डर लगा था–कहा–"यदि तुम सोना नहीं बना सकते तो कुछ और ही करो, चीनी बनाओ।"

बूटघरने उसकी बात मान ली और वह दिन रात परीक्षा करनेमें लग गया। बहुत दिन हो गये, परन्तु उसका सब परिश्रम निष्फल हुआ। निदान घरिया बनानेके लिए उसके पास कुछ लाल मिट्टी आई, जिससे वह ठीक मार्ग पर लग गया। उसने देखा कि यह मिट्टी अग्निमें खूब तपानेसे काँच बन जाती है, अपना आकार नहीं बदलती और रंगके सिवाय और सब बातोंमें चीनीके समान हो जाती है। उसने अकस्मात् लालचीनीका अनु-संधान कर लिया, और वह उसके बरतन बना कर उन्हें चीनीके कहकर बेचने लगा।

परन्तु बूटघर जानता था कि असली चीनीका रंग सफेद होना चाहिए; इस लिए उसने इस गुप्त रहस्यका अनुसंधान करनेके लिए परीक्षायें शुरू कीं। इसी तरह कई वर्ष निकल गये, परन्तु सफलता न हुई। निदान पुनः एक दैवी घटना हुई, जिससे उसने सफेद चीनी बनानेकी रीति जान ली।

उन दिनों यूरोपियन देशोंमें लम्बे लम्बे बनावटी बालोंकी टोपी पहननेका रिवाज था। सन् १७०७ ईस्वीमें एक बार बूटघरको अपनी बालदार टोपी अधिक भारी मालूम हुई। उसने नौकरसे इसका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया कि, "इसका कारण वह पौडर है, जो बालोंमें लगाया जाता रहा है।" यह पौडर एक प्रकारकी सफेद मिट्टीसे बनाया जाता था। बूटघरने शीघ्र ही अपना विचार दौड़ाया। उसने सोचा कि कदाचित् यह वही मिट्टी हो जिसकी मैं खोजमें हूँ। बूटघरने उसकी परीक्षा की और उसका अनुमान ठीक उतरा।

इस बातका मालूम हो जाना पारस पत्थरके मालूम होनेसे भी कहीं जियादा महत्त्वका था। क्यों कि इससे हमारे बहुत काम निकलते हैं। अक्टूबर सन् १७०७ में उसने चीनीका पहला बरतन बनाकर सम्राट् आगस्टसको दिखाया। वे उसे देख कर बड़े खुश हुए और बूटघरको उसके इस आविष्कारकी पूर्तिके लिए सहायता देनेको तैयार हो गये। बूटघरने एक चतुर कारीगरको बुलवाकर चीनीके बरतन बड़ी सफलतापूर्वक बनाना शुरू कर दिये। उसने अब रसायनको सर्वथा छोड़कर चीनीके बरतन बनानेका काम उठा लिया और अपने कारखानेके द्वार पर यह लिखवा दियाः—"सर्व शक्तिमान् ईश्वरने, जो महान् विधाता है, एक सुवर्णकार (सुनार) को कुम्भकार (कुम्हार) बना दिया है।"

अब भी बूटघरकी बड़ी चौकसी की जाती थी, क्योंकि यह भय था कि शायद वह अपने रहस्यको दूसरोंके सामने प्रकाश कर दे, अथवा स्वयं चम्पत हो जाय। नये कारखाने और भट्टियाँ जो उसके लिए बनाई गई थीं, उन पर रात दिन फौजोंका पहरा रहता था और छः उच्चपदाधिकारी उसकी देख भालके लिए उत्तरदाता बना दिये गये थे।

बूटघरको और परीक्षाओंमें—जो नई भट्टियोंमें की गई थीं—बड़ी सफलता प्राप्त हुई और जो चीनीके बरतन उसने बनाये उनका बहुत मूल्य मिलने लगा। अतएव अब एक राजकीय कारखाना स्थापित करनेका प्रयत्न किया गया। इस बातकी सम्राट्ने घोषणा कर दी और कारखानेमें काम करनेके लिए आदमी बुलवाये। बूटघर कारखानेका प्रबंधकर्ता बनाया गया। परन्तु उसके ऊपर सम्राट्ने अपने दो कर्मचारी नियत कर दिये और इस तरह बूट-

घर कैदी ही बना रहा। जब मैसिन नगरमें कारखाना बनाया जाने लगा, तब बूटघरको ड्रैसडनसे वहाँतक सैनिक ले गये। काम समाप्त होने पर भी वह रातको तालेमें बंद कर दिया जाता था। इन सब बातोंसे उसे बड़ा दुःख हुआ और उसने सम्राट्को बंधन कम कर देनेके विषयमें अनेक बार पत्र लिखे। कुछ पत्र तो बड़े ही करुणाजनक थे। एक पत्रमें उसने लिखा कि मैं पहले आविष्कारकोंकी अपेक्षा अधिक कर दिखाऊँगा, यदि मुझे स्वतंत्रता दे दी जाय!

इन निवेदनोंके लिए राजा बहरा बन गया। वह रुपया खर्च करने और अनुग्रह करनेको तैयार था; परन्तु स्वतंत्रता देनेवाला न था। वह बूटघरको अपना दास समझता था। इस तरह वह कैदी कुछ समयतक तो काम करता रहा, परन्तु साल दो सालके बाद सुस्त पड़ गया। वह संसारसे और अपने आपसे तंग आगया और उसने शराब पीनेकी आदत डाल ली। उसकी देखादेखी सभी कारीगर शराब पीने लग गये; उदाहरणका ऐसा प्रभाव होता है! अब तो उन लोगोंमें ऐसे लड़ाई झगड़े होने लगे कि बहुधा फौजें आकर उनको शान्त करती थीं। कुछ समय बाद वे सब, जिनकी संख्या तीनसौसे भी अधिक थी, अन्यत्र कैदखानेमें कैद कर दिये गये।

निदान बूटघर बहुत पीड़ित हो गया और मई सन् १७१३ में यही मालूम होने लगा कि वह अब मरा और अब मरा। राजाको भय हुआ कि कहीं सोनेकी चिड़िया हाथसे न जाती रहे, अतएव उसने बूटघरको पहरेके साथ गाड़ीमें हवा खानेकी आज्ञा दी और जब वह कुछ अच्छा हुआ, तो उसको कभी कभी ड्रेसडन जानेकी भी आज्ञा दी जाने लगी। अप्रैल सन् १७१४ ईस्वीमें सम्राट्ने उसे एक पत्र लिखा जिसमें उसने बूटघरको सम्पूर्ण स्वतंत्रता देनेका वायदा किया; परन्तु अब क्या होता था। काम करते रहनेसे, शराब पीनेसे, निरंतर रोगी रहनेसे और कठिन कैद भुगतनेसे बूटघरका शरीर और मस्तक निकम्मा हो गया था। कुछ वर्ष और काटनेके बाद सन् १७१९ ईस्वीमें मृत्युने उसे सब कष्टोंसे मुक्त कर दिया। सैक्सनीके महान् उपकारकके साथ ऐसा वर्त्ताव किया और उसकी ऐसी दुःखपूर्ण मृत्यु हुई! चीनीके बरतनोंके बनानेसे आगस्टसके खजानेकी इतनी वृद्धि हुई कि अधिकांश यूरोपियन सम्राटोंने भी आगस्टसका अनुसरण किय। फ्रांसमें तो अब इस कारीगरीका

कहना ही क्या है । वहाँ पर इसके द्वारा बड़ी भारी आय होती ह और वहाँके चीनीके बरतन निःसंदेह सर्वोत्तम होते हैं।

अँगरेजी कुंभकार **जोजिया वैजवुडका** जीवन पैलिसी अथवा बूटवरके जीवनसे कम विचित्र और अधिक सफल है। वह अच्छे युगमें उत्पन्न हुआ था। अठारहवीं शताब्दिके मध्य तक इंग्लैंड कलाकौशल्यके विषयमें यूरुपके बहुतसे उत्तम श्रेणीके देशोंसे पिछड़ा हुआ था। उस समय भी इंग्लैंडमें यद्यपि बहुतसे कुम्हार थे, परन्तु वे बहुत ही भद्दे बरतन बनाते थे। अतएव वहाँ अच्छे बरतन विदेशोंसे आते थे। अभीतक इंग्लैंडमें चीनीके ऐसे बरतन न बने थे जिनको कड़ी चीजसे भी खुरचनेसे उनपर दाग न पड़ सकें। स्टैफर्डशरमें जो बहुत समयतक ' सफेद बरतन ' बनते रहे हैं वे सफेद न थे किन्तु मैले रंगके थे। जब वैजवुड सन् १७३० ईस्वीमें पैदा हुआ उस समय बरतन बनानेकी यह दशा थी। परन्तु जब वह ६४ वर्ष बाद मरा तब यह दशा बिलकुल पलट गई। उसने अपने उद्योग चातुर्य और प्रतिभासे इस व्यवसायकी जड़ नई और मजबूत कर दी।

कभी कभी सामान्य श्रेणीमें भी ऐसे मनुष्य उत्पन्न हो जाते हैं, जो अपने उद्योगशील चरित्रके द्वारा केवल काम करनेवालोंको परिश्रमकी आदत डालनेकी व्यावहारिक शिक्षा ही नहीं देते, किन्तु श्रम और धैर्यका उदाहरण दिखलाकर सर्व साधारणकी सब तरहकी कार्यकुशलता पर बड़ा गहरा प्रभाव डालते हैं और जातीय चरित्रगठनमें अच्छा योग देते हैं। वैजवुड ऐसा ही मनुष्य था। उसके तेरह भाई थे और उनमें वह सबसे छोटा था। उसके पितामह और पिता दोनों कुम्भकार या कुम्हार थे। वह बालक ही था, तब उसके पिता तीन सौ रुपया छोड़कर मर गये। वह ग्रामीण पाठशालामें लिखना पढ़ना सीखता था; परन्तु पिताकी मृत्यु होने पर उसका पाठशाला जाना बंद करा दिया गया और वह अपने बड़े भाईको बरतन बनानेके काममें सहायता देने लगा। उस समय उसकी अवस्था ग्यारह वर्षकी थी। कुछ दिनों बाद उसकी ऐसी प्रचंड शीतला निकली कि उसके असरसे उसे जीवनपर्यंत दुःख होता रहा, क्योंकि उससे उसके दाहिने घुटनेमें एक ऐसी बीमारी हो गई, जो अक्सर उठ आती थी और वह बहुत वर्षों पीछे पैरके काटेजाने पर ही गई। एक महाशयने कुछ वर्ष हुए कहा था कि, " जो रोग उसे हो

गया था वही बहुत करके उसकी निपुणताका कारण हुआ। उसने सोचा कि मैं वैसा बलवान् और उद्योगी कारीगर नहीं बन सकता जिसके सब हाथ पैर दुरुस्त हों और जो उनका प्रयोग भलीभाँति जानता हो; परन्तु क्या मैं और किसी तरहका हो सकता हूँ, और क्या मैं अधिक गौरववान् हो सकता हूं? इस विचारने उसके मस्तकमें खलबली मचा दी और वह अपने शिल्पके नियमों और गुप्त रहस्यों पर विचार करने लगा।"

जब वैजवुड अपने भाईके साथ काम सीख चुका, तब वह एक और कारीगरके साथ साझी हो गया और चाकूके दस्ते, सन्दूक और घरमें काम आनेवाली अन्य चीजोंका छोटासा व्यापार करने लगा। फिर उसने एक और आदमीसे साझा कर लिया और मामूली चीजें बनाता रहा; परन्तु जबतक उसने सन् १७५९ ईस्वीमें अपना न्यारा व्यापार न शुरू किया, तबतक उसने बहुत कम उन्नति की। अपने व्यापारमें उसने बड़ा परिश्रम किया। वह नई नई चीजें बनाने लगा और धीरे धीरे उसने अपने व्यापारकी अच्छी उन्नति कर ली। उसने अपना ध्यान विशेषकर ऐसे बरतनोंके बनानेमें लगाया जैसे उस समय स्टैफर्डशरमें बना करते थे; साथ ही उसने उनकी खूबसूरती रंग, चमक और मजबूतीमें और भी उन्नति करनी चाही। इस कामको अच्छी तरह समझनेपर उसने रसायनशास्त्रका अध्ययन आरंभ किया और तरह तरहकी धातुओंको गलाकर प्रवाही करनेके लिए जिस पदार्थका उपयोग होता है उस पर, बरतनों पर काच जैसी चमक लानेके लिए जो तरह तरहकी ओप चढ़ाई जाती है उस पर, और तरह तरहकी मिट्टियों पर सैकड़ों परीक्षायें करके देखीं। उसकी निरीक्षण-शक्ति बड़ी तेज थी। उसके साथ एक मिट्टीका वर्तन लग गया। उसमें सिलिका नामक चकमककी मिट्टी मिली हुई थी। उस पर प्रयोग करके देखनेसे मालूम हुआ कि यह मिट्टी पहले काले रंगकी होती है; परन्तु तेज आँच लगनेसे सफेद हो जाती है। इस बात पर उसने खूब विचार किया। उसे विश्वास हो गया कि बरतन बनानेमें मैं जिस लाल मिट्टीको काममें लाता हूँ यदि उसमें चकमक मिलाई जावे तो उसके बरतन सफेद हो जायँगे और यदि इस मिश्र मिट्टीके बरतन घड़कर उन पर काच सरीखी चमकदार जिला चढ़ाई जावे तो वे बरतन कुंभकारकलाके बहुत बढ़िया नमूने बन जायँगे।

वैजवुडको कुछ समयतक अपनी भट्टियोंके कारण बड़ा कष्ट उठाना पड़ा; परन्तु यह कष्ट पैलिसीके कष्टसे बहुत कम था। तो भी उसने अपनी कठिनाइयोंका उसी तरह सामना किया जिस तरह पैलिसीने किया था। बारबार परीक्षायें करनेमें और अटल–अडिग धैर्य रखनेमें उसने भी हद कर दी। उसने पहले पहल जो रसोईके कामके लिए चीनीके बरतन बनानेकी चेष्टायें कीं उनमें लगातार असफलतायें हुईं। महीनोंका परिश्रम बहुधा एक दिनमें नष्ट हो जाता था। बहुतसी परीक्षायें करनेके बाद, जिनसे उसका बहुत समय, रुपया और परिश्रम नष्ट हुआ, उसे जैसी चाहिए वैसी जिलाका पता लगा। बरतन बनानेकी–शिल्पको उन्नत बनानेकी उसे धुन हो गई और इससे उसने एक क्षणभर भी उपेक्षा न की। जब वह कठिनाइयोंको दूर करके धनी हो गया, तब भी अपने शिल्पमें निपुणता प्राप्त करता रहा। उसके उदाहरणका प्रभाव सर्वत्र फैल गया, उस जिले भरके लोगोंमें कार्यकुशलताका संचार हो गया, और अँगरेजी व्यवसायकी एक बड़ी शाखा दृढ नीव पर स्थापित हो गई। उसका लक्ष्य सदैव सर्वोच्च उत्तमता पर रहता था और वह कहा करता था कि, "किसी चीजको खराब बनानेसे यही अच्छा है कि वह बिलकुल ही न बनाई जाय।"

बहुतसे श्रेष्ठ और शक्तिशाली मनुष्योंने वैजवुडको हार्दिक सहायता दी। सच्चे दिलसे काम करनेवालेको सहायकों और उत्साहदाताओंकी कमी नहीं रहती। उसने रानी शार्लटके लिए रसोईके बरतन बनाये जो इंग्लेंडमें बने हुए सबसे पहले राजकीय बरतन थे और इससे वह 'राजकीय कुंभकार' बना दिया गया। उसे चीनीके बढ़िया बरतन नकल करनेके लिए दिये गये और इस काममें उसको प्रशंसनीय सफलता हुई। उसने बड़े बड़े प्राचीन और सुन्दर बरतनोंकी नकल ज्योंकी त्यों उतार दी।

वैजवुडने रसायनशास्त्र पुरातत्त्व और चित्रविद्यासे भी सहायता ली। उसने फ्लैक्स मैन नामक चित्रकारको ढूँढ निकाला और उसकी चित्रकुशलताका उपयोग अपने बरतनोंके काममें किया। इसीकी सहायतासे उसने सर्वप्रिय उत्तम बरतन बनाये और उनके द्वारा प्राचीन चित्रविद्याको सर्वसाधारणमें फैलाया। उसने सावधानीसे प्रयत्न व अध्ययन करके यह पता लगा लिया कि इट्रुरियाके प्राचीननिवासी मिट्टी और चीनीके बरतनों पर और उन्हींके

समान अन्य चीजों पर किस तरह चित्रकारी किया करते थे। इस कलाको बीचमें लोग बिलकुल भूल गये थे। उसने विज्ञानमें भी अनेक आविष्कार करके ख्याति प्राप्त की। वह सार्वजनिक हितका बड़ा पोषक था। उसके प्रयत्नसे ही एक नहर बनवाई गई। उसने अपने जिलेमें एक अच्छी सड़क बनाई। उसने और भी बहुतसे काम किये जिनसे उसकी ख्याति बहुत ही बढ़ गई। उसके स्थापित किये हुए कारखाने देखनेके लिए यूरुपके प्रायः सारे देशोंके प्रसिद्ध प्रसिद्ध मनुष्य आने लगे।

वैजबुडके परिश्रमका यह फल हुआ कि बरतन बनानेकी कला जो बहुत ही गिरी हुई दशामें थी इंग्लेंडकी एक प्रधान कला हो गई। वैजबुडके समयके पहले वहाँ दूसरे देशोंसे बरतन आते थे; परंतु अब इसके विपरीत वहाँके बने हुए बरतन अन्य देशोंको जाते हैं और बहुत जियादा महसूल देकर भी वे विदेशोंमें धड़ाधड़ बिकते हैं। वैजबुडके समयमें ही कई हजार आदमी बरतन बनानेका काम करने लगे थे। इस काममें यद्यपि उस समय बहुत उन्नति हो गई थी, तो भी वैजबुडका मत था कि यह शिल्प अभी बाल्यावस्थामें ही है और जो उन्नति मैंने की है वह बहुत थोड़ी है। कारीगरोंके निरन्तर परिश्रमसे, उनकी बुद्धिमत्तासे और इस देशकी प्राकृतिक सुगमताओं तथा राजकीय महत्त्वसे इस शिल्पकी बहुत कुछ उन्नति हो सकती है। इस समयसे अब तक जो उन्नति हो चुकी है वह इस मतका समर्थन करती है। सन् १८५२ ईस्वीमें इंग्लेंडमें जो बरतन वहाँके निवासियोंके कामके लिए बनाये गये उनके अतिरिक्त लगभग एक करोड़ बरतन विदेशोंको गये! केवल यही बात नहीं है कि इंग्लेंडमें बरतन बहुत बनने लगे हैं और उनका मूल्य बहुत होता है किन्तु उस देशके कुम्हारोंकी दशा भी सुधर गई है। जिस जिलेमें वैजबुडने अपना काम शुरू किया था वहाँके लोग अर्धसभ्य थे। वे निर्धन और अशिक्षित थे और उनकी संख्या कम थी। जब वैजबुडका काम जम गया तब वहाँ पहले जितनी आबादी थी उससे तिगुने मनुष्योंके लिए अच्छी मजदूरीका काम निकल आया; और उनकी संसारिक उन्नतिके साथ साथ मानसिक तथा नैतिक उन्नति भी अच्छी होने लगी।

ऐसे पुरुषोंको सभ्य संसारके 'औद्योगिक वीर' कहनेमें कुछ अत्युक्ति न होगी। इनके लिए यह विशेषण सर्वथा उचित है। आपत्तियों और कठिना-

इयोंके समयमें वे जो संतोषपूर्ण आत्मनिर्भरता और उचित उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए जो शौर्य और धैर्य दिखलाते हैं वह उन जल और स्थलकी सेनाके सिपाहियोंसे कम नहीं होता जो सच्चे बहादुर होते हैं और संसारमें अपूर्व आत्मत्यागके उदाहरण छोड़ जाते हैं।

अध्याय चौथा।

अखंड उद्योग और आग्रह।

"संकट देख सामने अपने कभी न कहना 'हाय,'
धीरज धरके उसे झेलना साहस उरमें लाय।
भग्न-मनोरथ होकर भी तू श्रम करना मत छोड़;
सारी विषय-वासनाओंसे अपना मुख ले मोड़॥

—रामदयालु।

"धनवान् उसे ही कहना चाहिए जो उद्योगी है। उद्योगी मनुष्य प्रत्येक पलको अपना समझता है। समय प्रकृतिका खजाना है। इस खजानेको ऐसे मनुष्य अपने ही अधिकारमें रखते हैं। कालके हाथमें कांचकी रेतसे भरी हुई शीशी है। उद्योगी वीर उसमेंके एक एक कणको गगनका चमकता हुआ तारा या अमूल्य हीरा समझकर लगातार परिश्रम करके संग्रह करते रहते हैं।"

डावनांट।

"हर कामके करनेके पहले यह निश्चय करो कि वह काम उचित है या नहीं। यदि वह करनेके योग्य है तो उसमें दृढताके साथ लग जाओ। फिर कैसा ही संकट आये, परन्तु अपने निश्चितको कभी मत छोड़ो।"

जीवनके बड़े बड़े काम बहुधा सरल उपायों और साधारण योग्यतासे हो जाते हैं। मनुष्यको, जीवनमें जो चिन्तायें लगी रहती हैं, आवश्यकतायें पड़ती हैं और काम करने पड़ते हैं उनके कारण उसे सर्वोत्तम अनुभव प्राप्त करनेके अनेक अवसर मिलते हैं। जो काम बार बार करने पड़ते हैं उनमें सच्चे काम करनेवालेके लिए उद्योग और उन्नति करनेके बहुत मौके मिलते रहते

हैं। यह बात सदासे चली आई है कि मनुष्य दृढ़तापूर्वक अच्छे काम करनेसे ही अपना कल्याण कर सकता है; और वे ही लोग सबसे अधिक सफलता प्राप्त करते हैं जो सबसे अधिक दृढ़ बने रहते हैं और सच्चे हृदयसे काम करनेमें सबसे बढ़े रहते हैं।

लोग कहा करते हैं कि तकदीर अंधी होती है; परन्तु सच तो यों है कि तकदीर इतनी अंधी नहीं है जितने मनुष्य। जिन लोगोंको जीवनका कुछ अनुभव है वे जानते हैं कि जिस तरह हवा और लहरें अच्छे मल्लाहोंके पक्षमें रहती हैं उसी तरह तकदीर भी उद्यमी मनुष्योंका साथ देती है। बड़ेसे बड़े कामोंमें भी समझदारी, ध्यानशीलता, उद्योग, आग्रह इत्यादि साधारण गुण भी परम उपयोगी सिद्ध हुए हैं। बहुतसे कामोंमें प्रतिभाकी आवश्यकता भी नहीं होती, परन्तु बड़े बड़े प्रतिभाशाली मनुष्य भी इस साधारण गुणोंसे काम लेना बुरा नहीं समझते। कुछ मनुष्य तो यह भी नहीं मानते कि प्रतिभा कोई विलक्षण वस्तु है। एक प्रसिद्ध अध्यापकका कथन है कि उद्योग करने की शक्ति ही प्रतिभा है।

प्रसिद्ध वैज्ञानिक न्यूटनकी बुद्धि बड़ी विलक्षण थी, तो भी जब लोगोंने उनसे पूछा कि—"आपने अपने अद्भुत अनुसंधान किस तरह किये?" तो उन्होंने नम्रतासे उत्तर दिया, "उन पर सदैव विचार करनेसे।" एक दूसरे अवसर पर उन्होंने अपने अध्ययनकी रीति इस प्रकार वर्णन की थी— "मैं अपने विषयको निरंतर अपने सम्मुख रखता हूँ और उस समयकी प्रतीक्षा करता हूँ जबतक मैं पहलेकी अधूरी समझी हुई बातोंको धीरे पूर्णतया न समझ जाऊँ।" अन्य मनुष्योंके समान धुन बाँधकर लगे रहनेसे ही न्यूट-नने ऐसा यश प्राप्त किया। जब वे विश्राम करना चाहते थे, तब एक विष-यको छोड़कर दूसरा विषय पढ़ने लग जाते थे। अपने एक मित्रसे उन्होंने कहा था कि "यदि मैंने संसारकी कोई सेवा की है, तो वह केवल परिश्रम और धैर्यपूर्वक विचारके द्वारा की है।"

केवल उद्योग और आग्रहके द्वारा ऐसे ऐसे अद्भुत कार्य हुए हैं कि बहुतसे नामी नामी मनुष्योंको इस बात में संदेह हो गया है कि प्रतिभा कोई विल क्षण वस्तु है। प्रसिद्ध विद्वान् वाल्टेरका मत है कि प्रतिभाशाली मनुष्यों और साधारण मनुष्योंमें बहुत ही थोड़ा अंतर होता है। बैकेरिया कहा करता

था कि सभी मनुष्य कवि और वक्ता हो सकते हैं। रेनोल्ड्सका कथन है कि प्रत्येक मनुष्य चित्रकार और मूर्तिकार हो सकता है। प्रसिद्ध दार्शनिक लौक, हैल्वीटिअस, और डिडीरोटका मत है कि सब मनुष्योंमें प्रतिभाशाली बननेकी एक सी शक्ति मौजूद है और यदि कुछ मनुष्य अपनी मानसिक शक्तियोंको काममें लाकर किसी कार्यको कर सकते हैं तो कोई कारण नहीं है कि और लोग वैसे ही सुयोग और साधन पाकर उस कार्यको न कर सकें। यद्यपि यह सच है कि परिश्रमसे अद्भुत अद्भुत कार्य हुए हैं और बड़े बड़े प्रतिभाशाली मनुष्योंने अटूट परिश्रम किया है, तो भी यह स्पष्ट है कि मौलिक मानसिक शक्ति और उत्तम भावोंके बिना चाहे कितना ही परिश्रम कितनी ही उचित रीतिसे क्यों न किया जाय, तो भी तुलसीदास, वराहमिहर, वाग्भट अथवा तानसेनका प्रादुर्भाव नहीं हो सकता।

संसारके महापुरुषोंने बहुधा यह कहा है कि हमने प्रतिभासे नहीं, किन्तु निरन्तर परिश्रम करनेसे सफलता प्राप्त की है। महात्माओंके जीवनचरित देखनेसे भी हमको यही मालूम होता है कि सुप्रसिद्ध आविष्कारकर्ताओं, शिल्पकारों, विचारवानों और सब प्रकारके कार्यकर्ताओंको बहुत करके अटूट परिश्रम करने और काममें निरन्तर लगे रहनेसे ही सफलता प्राप्त हुई है। इन महात्माओंने सब चीजोंको यहाँतक कि समयको भी सुवर्णके समान बहुमूल्य समझा था। एक महात्माका वचन है कि सफलता प्राप्त करनेका गुप्त रहस्य अपने विषयपर अधिकार प्राप्त करना है और यह अधिकार निरन्तर लगे रहने और अध्ययन करनेसे प्राप्त होता है। यही कारण है कि जिन लोगोंने संसारमें सबसे अधिक हलचल मचाई है उनमें प्रतिभाकी मात्रा (यदि हम उसको प्रतिभा कह सकें) इतनी न थी जितनी कि उनमें मध्यम श्रेणीकी योग्यता और अटूट परिश्रम करनेका गुण था। उनमें स्वाभाविक सद्गुण इतने न थे जितना कि वे अपने काममें मेहनतके साथ निरन्तर लगे रहते थे। एक विधवाने अपने बुद्धिमान परन्तु लापरवाह लड़केके विषयमें कहा था कि "अफसोस! उसमें अटूट परिश्रम करनेका गुण नहीं है।" जीवनकी दौड़में ऐसे बुद्धिमान मनुष्योंसे, जो ज़म कर काम नहीं कर सकते, परिश्रमी और मंदगामी मनुष्य भी बाजी ले जाते हैं। इटली भाषाकी एक कहावत है जिसका आशय यह है कि जो धीरे धीरे परन्तु निरन्तर चला करते

है वे बहुत आगे बढ़ जाते हैं। संस्कृतमें भी ऐसाही वचन है–"शनैर्ग्रन्थाः शनैः पन्थाः।"

अतएव मनुष्यका एक बड़ा उद्देश यह होना चाहिए कि वह काम करनेका अभ्यास करे। जब यह गुण आजायगा तब जीवनके सारे काम सुगम मालूम होने लगेंगे। कामका निरंतर अभ्यास करना चाहिए। सुगमता परिश्रमसे आजाती है। इसके बिना अत्यंत साधारण काम भी नहीं हो सकता। इससे सब कठिनाइयाँ दूर होजाती हैं। महारानी विक्टोरियाके प्रधान सचिव सर राबर्ट पील बाल्यकालमें अभ्यास करने और बार बार प्रयत्न करनेसे ही राज्यके रत्न बन गये थे। जब वे बालक थे, तब उनके पिता उन्हें मेजके पास खड़ा करके पहलेसे तैयारी किये बिना ही व्याख्यान देनेका अभ्यास कराया करते थे और इतवारके दिन गिरजेमें सुने हुए धर्मोपदेशको बारबार दुहरानेका अभ्यास कराते थे। पहले तो इस कार्यमें थोड़ी ही उन्नति हुई; परन्तु पीछे निरंतर लगे रहनेसे चित्तकी एकाग्रताका अभ्यास प्रबल हो गया और वे धर्मोपदेशको लगभग शब्दशः सुना जाने लगे। आगे प्रौढ अवस्थामें उनकी स्मरणशक्ति ऐसी अनूठी होगई थी कि ये राज–सभामें अपने प्रतिद्वंदियोंकी सब युक्तियोंका बिना भूले क्रमशः उत्तर देते चले जाते थे। यह उसी शिक्षाका फल था जो उन्होंने अपने पितासे बचपनमें पाई थी।

परन्तु याद रक्खो कि सर्वोत्तम उन्नति धीरे धीरे होती है। बड़े बड़े फल तुरंत ही प्राप्त नहीं हो जाते। हमारी उन्नति यदि धीरे धीरे हो रही हो तो हमें उसपर सन्तोष करना चाहिए। एक महाशयका कथन है कि जो लोग प्रतीक्षा करना जानते हैं, वे सफलताके गुप्त रहस्यको समझते हैं। काटनेके पहले हमको बोना पड़ता है और इस बीचमें हमको आशा बाँधे हुए लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। अच्छे फल बहुधा देरमें पकते हैं। एक कहावत है जिसका आशय यह है कि धीरजके साथ बाट देखनेसे और समय बीतनेसे शहतूतकी पत्तियोंका रेशम बन जाता है।

जो मनुष्य हँसी–खुशीसे काम करते हैं वे धीरजके साथ प्रतीक्षा कर सकते हैं। काम करनेके लिए चित्तकी प्रसन्नताकी बहुत आवश्यकता है। इससे बड़ी सहनशीलता आती है। काम करनेके लिए जिस चतुराईकी आवश्यकता होती है वह मुख्यकर प्रसन्नता और परिश्रमसे ही प्राप्त होती है। इन दोनों

बातोंको सफलता और सुखकी जान समझना चाहिए। जीवनमें सबसे अधिक आनन्द शायद उसी समय मिलता है जब हम सफाईके साथ उत्तम रीतिसे और जी लगा कर कोई काम करते हैं।

विशेष कर उन लोगोंको जो सार्वजनिक उपकारमें लगे हुए हैं बहुत समयतक और धीरतासहित काम करना पड़ता है। उनको तुरंत ही फल न मिलनेसे बहुधा निरुत्साह सा हो जाता है। ऐसे मनुष्य कम हैं जो अपने कार्य अथवा विचारके फलको जीवनमें ही देख लेते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती अपने कार्यका फल अपने जीवनमें न देख सके; उनके बाद अब हम उस फलको देख रहे हैं। ब्रह्मसमाजके संस्थापक राजा राममोहन रायके विषयमें भी यही कहा जा सकता है।

आशा मनुष्यका सर्वस्व है। आशाके न रहने पर उसकी कमीको कोई चीज पूरा नहीं कर सकती। आशा न रहनेसे मनुष्यका जीवन एकदम पलट जाता है। एक बड़े परंतु दुखी विचारवान्ने एक बार कहा था–" जब मेरी सारी आशा पर पानी फिर गया, तब मैं कैसे काम कर सकता हूँ–कैसे प्रसन्नचित्त हो सकता हूँ ? " आशामें बड़ी प्रबल शक्ति है ! इस बातके बहुत उदाहरण मिले हैं कि सर्वथा निराश मनुष्योंने थोड़ी सी भी आशा मिलने पर बड़े बड़े कार्य कर डाले हैं। मुग्धबोधव्याकरणके रचयिता बोपदेव पहले बड़े मन्दबुद्धि थे। बचपनमें जब वे पढ़नेको बैठे थे, तब उन्हें व्याकरण याद करनेमें बड़ी कठिनाई होती थी। वे अपना पाठ बारंबार याद करते थे, परन्तु याद न होता था। उनके गुरु उनको बहुत समझाते थे, परन्तु वे कुछ भी न समझते थे। वर्षों तक परिश्रम करने पर भी बोपदेवको कुछ न आया; पर उनके सब साथी लिख पढ़कर विद्वान् हो गये। बोपदेवने समझ लिया कि अब मैं व्याकरण कदापि नहीं सीख सकता। जब वर्षोंके परिश्रमका भी कुछ फल न हुआ, तब सफलताकी आशा करना दुराशा मात्र है। बोपदेवको सब ओरसे निराशाकी भयंकर सूरत दिखाई देने लगी। एक दिन गुरुने बोपदेवका बड़ा तिरस्कार किया। बोपदेवको बड़ी लज्जा आई; वे उसी दिन पढ़ना लिखना छोड़कर पाठशालासे चल दिये और बहुत दिनों तक इधर उधर मारे मारे फिरा किये। चलते चलते वे एक सरोवरके निकट पहुँचे जिस पर एक पत्थरका घाट बना हुआ था। उस सरोवरमें एक स्त्री स्नान कर रही थी और

उसने अपना घड़ा पानीसे भरकर घाट पर रख दिया था। जब वह स्नान करके अपना घड़ा लेकर चली गई, तब बोपदेवने देखा कि जिस स्थान पर घड़ा रक्खा था वहाँ गड्ढा पड़ गया है। बोपदेवने सोचा कि जब पत्थर जैसी कड़ी चीज भी मिट्टीके घड़ेकी रगड़से घिस जाती है तब क्या मेरी मंदबुद्धि निरंतर परिश्रम करनेसे तीव्र नहीं हो सकती? उनके हृदयमें उसी समय नवीन आशाका संचार हो गया। उन्होंने तुरंत ही गुरुके पास जाकर सारा वृत्तांत कह सुनाया और पुनः विद्योपार्जनकी इच्छा प्रकट की। गुरुने अत्यंत प्रसन्न होकर उनको फिर पढ़ाना आरंभ किया। अब तो बोपदेवने पढ़नेमें ऐसा जी लगाया और ऐसा परिश्रम किया कि वे कुछ ही समयमें व्याकरणके पंडित हो गये और उन्होंने स्वयं एक संस्कृत व्याकरण लिखा जिसका नाम मुग्धबोध है। यह व्याकरण पाणिनीके व्याकरणसे बहुत सुगम है और इसका बहुत प्रचार है।

स्काटलेंडका राजा राबर्ट ब्रूस अनेक बार परास्त होकर एक दिन बड़ी ही निराशामें बैठा था। उसने उसी समय देखा कि एक मकड़ी एक स्थानसे दूसरे स्थान पर कूद कर जाना चाहती है। मकड़ीने अनेक बार चेष्टा की; पर उसे सफलता न हुई। परन्तु वह निराश होकर बैठ न रही; उसने एक बार और प्रयत्न किया और इस बार उसको अपने काममें सफलता प्राप्त हुई। मकड़ीकी यह उद्योगलीला देखते ही राबर्ट ब्रूस उठ बैठा। उसे फिर आशाके दर्शन हुए; वह फिर उत्साहसे भर गया। सेना लेकर उसने एक बार और आक्रमण किया और अपने दुर्जय बैरियों पर विजय पा ली।

ईसाई धर्मोपदेशक केरेके विषयमें प्रसिद्ध है कि जब वे बालक थे तब एक दिन एक वृक्ष पर चढ़ते समय उनका पैर फिसल गया। वे भूमि पर गिर पड़े और उनकी एक टाँग टूट गई। कई सप्ताह तक वे चारपाई पर बीमार पड़े रहे। जब अच्छे हो गये और बिना सहारेके चलने फिरने लगे तब सबसे पहला कार्य उन्होंने यही किया कि उसी वृक्ष पर जाकर फिर चढ़े! प्रत्येक काममें ऐसे ही उत्साही पुरुषोंकी आवश्यकता है। केरे कभी निराश न हुए। उन्होंने अनेक देश देशान्तरमें जाकर और बड़ी आपत्ति उठाकर ईसाईधर्मका प्रचार किया। वे भारतमें भी आये थे। वे सदैव अपने कामकी ही धुनमें रहते थे।

प्रसिद्ध दार्शनिक डाक्टर यंग कहा करते थे कि " एक मनुष्यने जो काम किये हैं, वे चाहे कैसे ही कठिन क्यों न हों उन्हें दूसरे मनुष्य भी अवश्य कर सकते हैं । " और यह बात संदेहरहित है कि उन्होंने स्वयं जिस कामके करनेका संकल्प किया उससे वे कभी विचलित न हुए—उसे करके ही छोड़ा। उनके संबंधमें कहा जाता है कि जब वे घोड़े पर पहली बार चढ़े तब अपने एक मित्रके साथ थे। उनके आगे एक और सवार था। वह अपने घोड़े समेत मेंड़ (दीवार) को फलाँग गया। यंगने भी उसकी नकल करनी चाही; वे लाँघनेमें अपने घोड़े परसे गिर गये। परंतु उन्होंने उफ तक न की; वे घोड़े पर चढ़कर मेंड फलाँगनेकी दूसरी बार चेष्टा करने लगे। वे फिर असफल रहे, परन्तु इस बार अधिक आगे न गिरकर वे घोड़ेकी गरदन पर ही गिरे और उससे चिपट रहे। उन्होंने तीसरी बार भी चेष्टा की; इस बार वे सफल हुए और मेंड़को फलाँग गये !

अमेरिकाके एक पक्षिविद्याविशारदने वर्षों तक बनमें रहकर बड़े परिश्रमसे नये नये पंक्षियोंके दोसौ चित्र बनाये थे। उसने इन चित्रोंके विषयमें अपने जीवनकी एक घटनाका उल्लेख किया है जिसका सारांश यह है:—" मुझे कार्यवश एक दूसरे स्थान पर जाना पड़ा। जानेके पहले मैंने चित्रोंको साव-धानीसे एक लकड़ीके संदूकमें रक्खा और उसे अपने एक मित्रके सुपर्द कर दिया। मित्रको यह अच्छी तरहसे समझा दिया कि चित्रोंको कुछ हानि न पहुँचने पावे। जब मैंने कई महीनेके बाद लौटकर अपनी संदूक माँगी या यों कहो कि अपनी बहुमूल्य संपत्ति माँगी तब मेरे मित्र संदूक ले आये और मैंने उसे खोला। परन्तु पाठको ! मुझे उस समय जो दुःख हुआ उसका वर्णन नहीं हो सकता। दो चूहोंने चित्रों पर अपना अधिकार जमा लिया था, उन्हें कुतरकर टुकडे़ टुकडे़ कर डाला था और उन टुकड़ोंमें कई बच्चे जन दिये थे ! उस समय मेरे चित्त पर जो चोट लगी उसे मैं अपने स्वास्थ्यको हानि पहुँचाये विना सहन न कर सका। वे चित्र मेरे सर्वस्व थे; बड़े ही परिश्रम और उद्योगसे मैंने उन्हें तैयार किया था। इससे मेरे दिन बड़ी निराशा और दुःखमें कटने लगे। परन्तु कुछ दिनोंमें मेरे हृदयमें फिर बलका संचार हुआ और मैं अपनी बंदूक और कागज पैन्सिल लेकर बनको इस तरह प्रफुल्लित होकर गया कि मानो कुछ हुआ ही न था। मुझे हर्ष हुआ कि इस बार मैं पहलेकी अपेक्षा अच्छे चित्र बना सकूँगा !

हुआ भी यही; मैंने तीन वर्षमें फिर सब चित्र बना लिये। " धैर्यका यह कैसा सुन्दर उदाहरण है।

सर आइजक न्यूटनके पास एक छोटासा प्यारा कुत्ता था, जिसको वह 'डाइमन्ड' कह कर पुकारा करता था। एक दिन रातके समय न्यूटन किसी कामके लिए बाहर चला गया और मेज पर मोमबत्ती जलती हुई छोड़ गया। कुत्ता कमरेमें अकेला रह गया। कुछ समय बाद उसके जीमें न मालूम क्या आया कि वह एकाएक ऐसे जोरसे मेज पर झपटा कि जलती हुई बत्ती लौट गई और सब कागज जिनको लिखकर तैयार करनेमें न्यूटनको कई वर्ष लगे थे, जलकर भस्म हो गये! न्यूटन जब लौटकर आया और उसने यह सब हाल देखा तब उसे बड़ा ही दुःख हुआ, परन्तु उसने क्रोधमें आकर कुत्तेको मारा नहीं। उसने धैर्यसे काम किया और वह केवल इतना ही कह कर रह गया कि " डाइमन्ड, मेरी जो हानि हुई है उसकी तुझको क्या खबर है ? " कहा जाता है कि इन कागजोंके जल जानेसे न्यूटनको इतना दुःख हुआ कि उसके स्वास्थ्यको बहुत हानि पहुँची और उसकी बुद्धि ठिकाने न रही।

प्रसिद्ध इतिहासज्ञ मिस्टर कार्लाइलको भी एक ऐसी ही घटनाका सामना करना पड़ा था। कार्लाइलने फ्रान्सके राजपरिवर्तन पर एक पुस्तक लिखी थी। उसने उस पुस्तकके लिखे हुए कागज अपने एक मित्रको पढ़नेके लिए दे दिये। उसके मित्रने ये हस्तलिखित कागज अपने कमरेके फर्श पर पड़े हुए छोड़ दिये और वह उनकी याद भूल गया। कई सप्ताह हो जाने-पर कार्लाइलने अपने कागज माँगे; क्योंकि छापेखानेवाले जल्दी मचा रहे थे। अब उन कागजोंकी तलाश होने लगी और यह मालूम हुआ कि मित्रकी नौकरानी, यह समझकर कि फर्श पर रद्दी कागज पड़े हैं, उनको आग जलानेके काममें ले आई! मित्रने यही उत्तर कार्लाइलको सुना दिया। खयाल करो कि यह सुनकर कार्लाइलकी क्या दशा हुई होगी। परन्तु अब वह कर ही क्या सकता था, सिवाय इसके कि जी मारकर काम करने बैठ जाता और पुस्तकको फिर लिखता। उसने किया भी ऐसा ही। उसको वे सब बातें, विचार और वाक्य, जिनको वह भुला चुका था फिर सोचने पड़े। जब उसने पहली बार पुस्तक लिखी थी तब आनंदपूर्वक लिखी थी, परन्तु उसका यह दूसरी बार लिखना बड़े ही कष्टका कार्य था। परन्तु उसने धैर्यको हाथसे न जाने दिया और पुस्तक फिर लिख डाली।

बड़े बड़े आविष्कारकर्ताओंके जीवनचरितोंमें धैर्यके उदाहरण खूब मिलते हैं। रेलके अंजनका आविष्कारकर्ता **स्टीफिन्सन** जब युवा मनुष्योंके सामने व्याख्यान देता था तब कहता था,–"जैसा मैंने किया है वैसा ही तुम भी करो–धैर्यसे काम लो।" स्टीफिन्सन अंजन बनानेमें स्वयं पंद्रह वर्ष तक लगा रहा था। **वाट** अपने भाफके अंजन बनानेमें तीस वर्ष तक परिश्रम करता रहा था। और लोगोंमें भी धैर्यके अद्भुत उदाहरण मिलते हैं। प्राचीन शिलालेखोंके पढ़ने और समझनेमें अनेक मनुष्योंने ऐसा घोर और अश्रान्त परिश्रम किया है कि सुनकर दाँतोंतले उँगली दबानी पड़ती है। उसके द्वारा संसारको उन भाषाओंका ज्ञान प्राप्त हो गया है जिनको लोग कभीके भूल चुके थे और जिनके पढ़े जाने की कोई आशा न थी। पंडित **भगवानलाल इन्द्रजी**ने इस विषयमें बड़ा परिश्रम किया था।

साहित्यसेवियोंके चरितोंमें भी धैर्यशक्तिके अनेक उदाहरण मिलते हैं। बाबू **प्रतापचन्द्रराय**ने 'महाभारत' का एक अँगरेजी अनुवाद प्रकाशित करनेका निश्चय किया था। यह निश्चय इतना दृढ़ था कि बाह्य साधन न होने पर भी सफल हुए बिना न रहा। उन्होंने इस काममें अपने एक मित्र केसरीमोहन गांगुलीसे सहायता ली थी। ये महाशय संस्कृत अच्छी जानते थे। पुस्तक थोड़ी थोड़ी करके सौ भागोंमें प्रकाशित की गई। परन्तु जब इस पुस्तकका ८४ वाँ भाग निकला तब प्रतापचंद्रका देहान्त हो गया। उन्होंने इस पुस्तकके प्रकाशित करनेमें बारह वर्षतक कठिन परिश्रम किया और आर्थिक सहायता पानेके लिए भारतवर्षमें चारों ओर भ्रमण किया। उनको केवल भारतवासियोंने ही नहीं किन्तु यूरुप और अमेरिकावालोंने भी धन दिया। प्रतापचंद्र स्वयं धनाढ्य न थे; परन्तु उन्होंने इस पुस्तकके प्रकाशनमें अपनी गाँठका भी रुपया लगा दिया। सन् १८८५ ई० में उनको भ्रमण करनेसे बुखार आगया और इसीने उनके जीवनका अंत कर दिया। मृत्युशय्या पर पड़े हुए भी वे अपनी पुस्तकके विषयमें सोचते थे। क्या अब पुस्तकके संपूर्ण होनेकी कुछ आशा है? क्या मेरे जीवनका एक मात्र कार्य अधूरा ही रह जायगा? यही चिन्ता मरते दम तक उनको मानसिक कष्ट देती रही। उनकी प्रबल इच्छा थी कि पुस्तक संपूर्ण हो जाय। उन्होंने अपनी प्रियपत्नी सुंदरीबालाको बुलाया और कहा,–"पुस्तकको संपूर्ण करना।

मेरे श्राद्धमें धन मत लगाना; क्योंकि उस धनकी पुस्तकके प्रकाशनमें जरूरत पड़ेगी। जहाँ तक हो सके तुम साधारण जीवन व्यतीत करना और पुस्तकके लिए रुपया बचाना।" उनकी मृत्युके पश्चात् सुंदरीबालाने अपनी पतिकी आज्ञा पालन करना अपना धर्म समझा; केसरी मोहन गांगुलीने भी सहायता देनेसे मुहँ न मोड़ा और एक वर्षमें पुस्तकका शेषांश प्रकाशित हो गया।

प्राच्यविद्यामहार्णव श्रीयुत नगेन्द्रनाथ बसुका जीवन बड़ा ही शिक्षाप्रद है। उक्त महाशयने बंगभाषामें विश्वकोश नामका एक बृहद् ग्रन्थ लिखनेका संकल्प किया और उसे उन्होंने बड़ी योग्यतापूर्वक २८ वर्ष तक निरंतर कठिन परिश्रम करके संपूर्ण किया। यह पुस्तक २२ जिल्दोंमें संपूर्ण हुई है और सब तरहके ज्ञानका भंडार है। जिस समय नगेंद्र बाबूने यह काम आरंभ किया था उस समय उनकी अवस्था केवल इक्कीस वर्षकी थी। इतने बड़े कामके लिए उनके पास धन न था। उनका वेतन बहुत थोड़ा था जिससे वे अपने कुटुम्बका निर्वाह करते थे। पहले विश्वकोशकी ग्राहकसंख्या बहुत ही थोड़ी थी, परन्तु जब इसके कुछ अंक निकले तब लोग नगेन्द्र बाबूकी योग्यता पर मुग्ध होकर उनके ग्रंथको आश्रय देने लगे। सरकारने भी उनकी सहायता करनेके लिए कुछ प्रतियाँ मोल लेना स्वीकार कर लिया। बीचमें नगेन्द्र बाबू कई बार बीमार हो गये और कई आपत्तिविपत्तियोंमें फँस गये; परन्तु उन्होंने अपने प्रिय कार्यको त्याग देनेका विचार अपने जीमें कभी न आने दिया। एक बार वे बहुत ही बीमार हो गये थे। उस समय उनकी दशा बड़ी ही निराशाजनक थी। उस समय उन्होंने कहा था—"मुझे इस बातका बड़ा शोक है कि मैं विश्वकोशको संपूर्ण किये बिना जाता हूँ।" परन्तु अन्तमें यह कोश संपूर्ण हो गया। कहते हैं कि इसके लिखनेमें नगेन्द्र बाबूको पचास हजार पुस्तकें देखनी पड़ीं और लगभग डेढ़लाख रुपया खर्च करना पड़ा। यह ग्रंथ बंग-साहित्यमें एक रत्न है और संसारके सभी विद्वानोंने इसकी मुक्तकंठसे प्रशंसा की है। नगेन्द्र बाबूसे पहले और भी दो महाशयोंने विश्वकोशके लिखनेका प्रयत्न किया था, परन्तु उन्हें सफलता न हुई। कुछ ही काम करने पर उनके धैर्यने जबाब दे दिया। यह नगेन्द्र बाबूका ही धैर्य था जो उन्होंने इतने समय तक सरतोड़ परिश्रम करके असुविधाओंका

सामना करते हुए इस महान् कार्यको कर डाला। इस समय नगेन्द्रबाबू अपने विश्वकोशको हिन्दीमें प्रकाशित कर रहे हैं।

बहरामजी मेरवानजी मलबारी भी इसी गुणसे अलंकृत थे। उनमें कार्य करनेकी अद्भुत शक्ति थी। उनके पिता बड़ोदेमें केवल बीस रुपया मासिक पर नौकर थे। वे बहरामजीको केवल छः वर्षका छोड़कर परलोकवास कर गये, इससे बहरामजीके ऊपर आपत्तिका पहाड़ टूट पड़ा। उनकी माता उन्हें लेकर एक और जगह रहने लगी और किसी तरह अपना निर्वाह करने लगी। बहरामजी बचपनमें बड़ा उपद्रव किया करते थे। उन्होंने आसपासक लोगोंका नाकोंदम कर रक्खा था। यद्यपि वे एक पाठशालामें भरती करा दिये गये, तो भी उनकी चंचलतामें कमी न आई। इसके पश्चात् उनको बढ़ईका काम सिखाय गया; परन्तु उन्होंने वह भी न सीखा। निदान वे दूसरी बार पाठशालामें भेजे गये, परन्तु फिर भी अपना पहला स्वभाव न छोड़ सके। शरारत करनेके अतिरिक्त उनको कोई धुन ही न थी। जब वे बारह वर्षके हुए, तब उनकी माता भी चल बसी। अब बहरामजीको किसका सहारा था ? बस इसी दुर्घटनाने उनके जीवनको परिवर्तित कर दिया। पढ़ने लिखने और बढ़ईके कामसे जी चुरानेवाला बालक अब विद्याप्रेमी और गम्भीर बन गया ! इस नवीन कष्टसे बहरामजी निराश न हुए। उनमें न मालूम कहाँसे शक्ति आगई। वे सूरत पहुँचे और वहाँ पर एक स्कूलमें पढ़ने लगे। खानेके लिए उनके पास कुछ न था, इस लिए वे स्कूलसे अवकाश मिलने पर अपनी उस थोड़ीसी विद्यासे–जो उपद्रव और ऊधम करते समय आगई थी–लड़कोंको घर पर पढ़ाने लगे और इससे जो कुछ मिलने लगा उसीसे अपना निर्वाह करने लगे। इस प्रकार कष्ट उठाते हुए उन्होंने थोड़े ही कालमें अँगरेजीकी अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। परन्तु वे गणितमें कच्चे थे, इस लिए मैट्रिक्यूलेशनकी परीक्षामें उत्तीर्ण न हो सके। यह परीक्षा उन्होंने चार बार दी, किन्तु सफलता न हुई। परन्तु वे निराश होनेवाले न थे; धैर्यको उन्होंने हाथसे न जाने दिया। परीक्षा देनेकी उन्होंने एक बार और भी चेष्टा की और इस बार वे उत्तीर्ण होगये। इसके बाद बहरामजीने गुजराती और अँगरेजीमें कई पुस्तकें लिखीं, जिनसे उन्हें बड़ा यश मिला। राजराजेश्वरी महारानी

विक्टोरियाने भी उनकी एक पुस्तकको पढ़ा और उनकी बड़ी प्रशंसा की। गुर्जर-साहित्यमें उनकी पुस्तकोंका अब तक बड़ा सम्मान है।

कुछ काल बाद बहरामजीने 'इन्डियन स्पेक्टेटर' नामक पत्रको अपने अधिकारमें ले लिया और उसका संपादन करना शुरू कर दिया। वे केवल पत्रका संपादन ही नहीं; किन्तु उसके संबंधी सभी काम करते थे। इस पत्रमें समाज-सुधारके विषयमें बड़े उत्तम हास्यपूर्ण लेख निकला करते थे। इस पत्रके चलानेके लिए बहरामजीके पास यथेष्ट धन न था; इस लिए एक बार उन्हें अपनी स्त्रीके आभूषण तक बेच देने पड़े। परन्तु वे घबड़ाये नहीं; धैर्यपूर्वक निरंतर परिश्रम करते रहे। थोड़े ही कालमें उनके पत्रका इस देशमें और विदेशोंमें खूब सत्कार होने लगा। उसके ग्राहकोंकी संख्या बहुत बढ़ गई। भारतके गवर्नर जनरल भी उसे बड़े चावसे पढ़ने लगे। उन्होंने दो पत्र और चलाये। उनमें से एक 'ईस्ट ऐंड वेस्ट' उनकी मृत्युके पश्चात् अब तक निकल रहा है और उत्तम श्रेणीका पत्र समझा जाता है। बहराम-जीने सामाजिक सुधारके लिए बहुत श्रम किया। विधवाओंकी दशा सुधार-नेकी उन्होंने अनेक बार चेष्टायें कीं। इस काममें लोगोंने बहुत बाधायें डालीं और उनको बहुत बुरा भला कहा; परन्तु उन्होंने किसीकी एक न सुनी। वे अपनी धुनके पक्के थे। लोग कहते थे कि वे केवल नामके लिए यह काम करते हैं और इस तरह वे उन्हें बदनाम करके निरुत्साह करना चाहते थे; परन्तु उन्होंने संदेहको अपने पास भी न फटकने दिया। उन्होंने भारतीय स्त्रियोंको रोगियोंकी सेवा-शुश्रूषाका काम सिखलानेका प्रबंध किया। उनमें शिक्षाका भी प्रचार किया। शिमलाके निकट धर्मपुरमें जो प्रसिद्ध चिकित्सालय क्षय-रोगके रोगियोंके लिए बना है वह आपके ही परिश्रमका फल है। सरकारने उन्हें अनेक उपाधियाँ देनी चाहीं, परन्तु उन्होंने स्वीकार न कीं। वे नाम नहीं चाहते थे; उनको काम प्यारा था। बहरामजीका स्वर्ग-वास सन् १९१२ में हुआ। इस प्रकार एक सर्वथा निराश्रय बालकने अपने ही बल पर काम करते हुए और अनेक कठिनाइयोंको झेलते हुए केवल यश ही प्राप्त न किया, किन्तु देशकी बहुत बड़ी सेवा की। उनका इस तरह निरं. तर असफल होने पर भी विद्योपार्जन करना, अपने ही परिश्रमसे विद्योपार्जन करते हुए उदरनिर्वाह करना, अनेक असुविधाओंका सामना करके अपने पत्रों

और पुस्तकोंके द्वारा सर्वसाधारणमें समाज–सुधारका बीज अंकुरित करना, बाधाओंको सहन कर विधवाओंकी दशा सुधारनेकी चेष्टा करना, पारसी होकर भी हिन्दू जातिके पुरुष और स्त्रियोंकी सहायता करना, विरोधियोंकी बातें सुन कर भी अपने जी पर मैल न लाना; ये सब बातें मानवी धैर्य–शक्तिका एक बहुत ही उत्साहजनक उदाहरण हमारे सामने रखती हैं।

सैमुएल ड्रयूका जीवन भी धैर्य-शक्तिका विचित्र उदाहरण है। उसके पिता एक मजदूर थे। दरिद्र होने पर भी वे अपने दो लड़कोंको एक छोटी पाठशालामें भेजते रहे। बड़े लड़केको पढ़नेमें रुचि थी इसलिए उसने अच्छी उन्नति कर ली; परन्तु छोटा लड़का सैमुएल पढ़नेमें बड़ा मट्टा था और उपद्रव करनेमें तथा कामसे जी चुरानेमें प्रसिद्ध था। जब वह आठ वर्षका हुआ तब एक खानमें मजदूरी करने लगा और डेढ़ आना रोज कमाने लगा। इसके बाद जब वह दश वर्षका हुआ तब एक मोचीके यहाँ काम सीखने पर बिठा दिया गया। इस काममें उसने बहुत दुःख भोगे। इन दुःखोंके मारे वह बहुधा भाग जानेका और डाँकू बन जानेका विचार किया करता था। वह ज्यों ज्यों बड़ा होता गया, त्यों त्यों अल्हड़ होता गया। बागोंके फलोंको लूटनेमें वह अग्रसर रहता था। जब वह बड़ा हुआ तब उसे चोरीकी चाट पड़ गई। मोचीका काम सीख चुकनेके पहले ही, जब उसकी अवस्था १७ वर्षकी थी, वह एकदिन इस इरादेसे भाग गया कि मैं किसी लड़ाईके जहाज पर नौकरी कर लूँगा। परन्तु रातको वह एक खेतमें सो रहा और सर्दी खा गया जिससे फिर अपने काम पर लौट आया।

इसके बाद वह एक गाँवमें जा रहा और वहाँ जूते सीनेका धंधा करने लगा। इसी समय कौसेण्डमें उसने पटेबाजीमें इनाम पाया; इस काममें वह बड़ा निपुण हो गया था। एक बार उसने एक मनुष्यको महसूली मालको चोरीसे ले जानेमें सहायता दी। इस कार्यमें उसकी जानतक गई होती। वह इस काममें औरोंके साथ इस लिए शरीक हो गया था कि एक तो उसको ऐसे कामोंका शौक था, और दूसरे उसकी आमदनी काफी न थी इसलिए उसे रुपयोंका भी लालच था। एक बार उस समस्त नगरमें यह बात मशहूर कर दी गई कि महसूली मालको चोरीसे ले जानेवाला एक मनुष्य समुद्रके किनारेके पास है और अपना माल जहाजमेंसे उतारनेको तैयार है। यह सुन-

कर उस नगरके सब पुरुष-जो प्रायः सभी महसूली मालको चोरीसे ले जाया करते थे-समुद्रके किनारे पर गये। उस मनुष्यने, जो महसूल बचानेके लिए अपने मालको चोरीसे ले जाना चाहता था, अपना जहाज किनारेसे कुछ दूर खड़ा कर दिया। उसके सहायकोंमेंसे कुछ लोग तो चट्टानों पर संकेत करने और मालको छिपानेके लिए खड़े रहे और कुछ जहाज परसे नावोंमें माल भरकर किनारे पर लानेके लिए नियत हुए। सैमुएल ड्यू इन्हीं नाववालोंमें था। रात बड़ी अँधियारी थी। थोड़ा ही माल उतरने पाया था कि आँधी चली और समुद्र फुफकारने लगा। जो लोग नावों पर थे उन्होंने धीरज धारण किया और माल उतारनेके लिए जहाजसे जमीनके किनारे तक कई चक्कर लगाये। जिस नावमें ड्यू था उसी नावमें बैठे हुए एक आदमीकी टोपी हवासे उड़ गई और ज्यों ही उसने अपनी उड़ती हुई टोपीको पकड़नेकी चेष्टा की, त्यों ही उसकी झोंकसे नाव औंधी हो गई। तीन आदमी तो तुरंत ही डूब गये। जो शेष रहे वे कुछ देर तक तो नावसे चिपटे रहे, परन्तु जब उन्होंने देखा कि नाव किनारेकी ओर न जाकर समुद्रमें और भी आगे बहती जाती है तब तैरना शुरू कर दिया। वे जमीनसे दो मीलके फासले पर थे और अँधेरी रात थी। इन्हीं तैरकोंमें ड्यू भी था। वह बड़ी ही कठिनाईसे तैर कर अपने दो एक साथियों सहित किनारे पर पहुँच गया और वहाँ सवेरे तक सर्दीसे सिकुड़ा हुआ पड़ा रहा। सबेरा होने पर जब लोगोंने उन्हें देखा तब वे उन्हें बस्तीमें ले गये। वे सबके सब अधमरे हो रहे थे। जब कुछ शराब पिलाई गई तब उनकी जानमें जान आई। शरीरमें कुछ बल आजाने पर ड्यू अपने घरको चला गया जो दो मीलकी दूरी पर था।

युवाकालके शुरूमें ही इस प्रकारके कामोंमें पड़जानेसे उसके सुधरनेकी आशा न थी; परन्तु आश्चर्यकी बात है कि वह सुधर गया। उसी ड्यूने जो बड़ा अल्हड़, बागोंका लुटेरा, मोची, पटेबाज और महसूली मालको चोरीसे ले जानेवाला था, आगे चलकर धर्मका प्रचार करनेमें और पुस्तकें लिखनेमें बड़ा नाम पाया। सौभाग्यसे बहुत बिगड़नेके पहले ही उसने अपना ध्यान और उद्योग दूसरी ओर लगा दिया जिससे कि वह उतना ही अच्छा और उपयोगी हो गया, जितना पहले खराब और निकम्मा हो गया था। ऊपर लिखे अनुसार नया जन्म पाने पर उसका पिता उसे अपने घर लिवा ले गया

और इसके बाद वह एक दूकान पर जूता बनानेके काम पर नौकर रह गया। ड्यू मरते मरते बचा था, शायद अब इसी कारण वह गम्भीर हो गया और उपद्रव करनेकी प्रवृत्ति उसकी कम हो गई। कुछ समय पीछे धर्मोपदेशक डाक्टर ऐडम क्लार्कके उपदेशोंने ड्यू पर बड़ा गहरा प्रभाव डाला और इसी समय उसके पिताका देहान्त हो गया इस कारण तो वह और भी अधिक गम्भीर हो गया। उसका स्वभाव बिलकुल बदल गया। उसने फिर से पढ़ना लिखना शुरू कर दिया, क्योंकि वह इस बीचमें प्रायः सब ही कुछ भूल चुका था। उसके एक मित्रके कथनानुसार उसके हस्ताक्षर इस समय ऐसे मालूम होते थे जैसे किसी मकड़ीने अपनी टाँगोंको स्याहीमें डुबाकर और कागज पर फिरकर एक अजीब तरहके चिह्न बना दिये हों। ड्यूने अपनी उस समयका स्थितिके सम्बन्धमें पीछे पीछे कहा था कि " जितना ही मैं पढ़ता था उतना ही मुझे अपनी अनाभिज्ञताका अनुभव होता था; और मुझे अपनी अनभिज्ञताका जितना पता लगता था, उतनी ही मैं उसे दूर करनेकी चेष्टा करता था। अवकाश मिलने पर मैं अपने हरएक क्षणको कुछ न कुछ पढ़नेमें लगाता था। मुझको अपना निर्वाह करनेके लिए मजदूरी करनी पड़ती थी इस कारण पढ़नेके लिए बहुत थोड़ा समय मिलता था, और इसीसे मैं अपनी इस समयकी कमीको पूरा करनेके लिए भोजन करनेके समय अपने सामने किताब खोलकर रख लेता था और कमसे कम ५–६ पृष्ठ पढ़ लेता था।" लाक नामक लेखकके निबंधोंको पढ़कर उसका ध्यान आत्मज्ञानकी ओर आकर्षित हुआ। उसने कहा कि " इन निबंधोंको पढ़कर मेरी मानसिक निद्रा जाग गई और मैंने अपने नीच विचारोंके छोड़ देनेका पक्का संकल्प कर लिया।"

इसके बाद ड्यूने थोड़ेसे रुपयोंसे निजी व्यवसाय शुरू कर दिया। उस समय उसकी कार्यतत्परताको देखकर एक पड़ौसी चक्कीवालेने उसको कर्ज दे दिया और इससे उसका व्यापार अच्छा चलने लगा। इस उद्योगमें ऐसी सफलता हुई कि उसने एक ही वर्षके पश्चात् सारा कर्ज चुका दिया। परन्तु इसके बाद उसने कर्ज लेनेसे कान पकड़ लिया। कर्जदार बननेसे उसे इतनी घृणा हो गई थी कि वह कई बार विपत्तिमें फँस कर भी अपने संकल्पसे च्युत न हुआ। कभी कभी वह इस लिए भूखा सो रहता था कि मुझे सबेरे कर्जदार होकर न उठना पड़े। वह परिश्रम और मितव्ययका अवलम्बन करके

स्वतंत्र होना चाहता था। उसे इस प्रयत्नमें धीरे धीरे सफलता भी हुई। निरन्तर शारीरिक परिश्रम करते हुए भी उसने अपनी मानसिक उन्नति करनेके लिए खगोल, इतिहास और आत्मज्ञान या अध्यात्मका अध्ययन किया। उसे आत्म-ज्ञानका विशेष अध्ययन करनेका सुभीता इस कारण मिला कि इस विषयमें शेष दो विषयोंकी अपेक्षा कम पुस्तकें देखनेकी आवश्यकता थी।

जूता बनाने और आत्मज्ञानका अध्ययन करनेके साथ साथ वह धर्मोपदेश देनेका काम भी करने लगा। उसे राजनीतिसे भी प्रेम हो गया; उसकी दूकान पर उस ग्रामके राजनीतिके प्रेमी लोगोंकी भीड़ होने लगी। जब वे न आते थे, तब वह स्वयं उनके पास सार्वजनिक विषयों पर बातचीत करने चला जाता था। इस काममें उसका इतना समय चला जाता था कि उसको कभी कभी दिनमें खोये हुए समयकी कमीको पूरा करनेके लिए आधी राततक काम करना पड़ता था। गाँवके सब लोग उसके राजनैतिक जोशकी चर्चा किया करते थे। एक बार जब ड्यू रातको एक जूतेका तला बना रहा था तब एक लड़का उसके कमरेके भीतर रोशनी देखकर बंद दरवाजेके समीप आया और अपना मुँह एक छिद्र पर लगाकर जोरसे बोला—"मोची मोची, रातको तो काम करता है और दिनमें इधर उधर गप्पे हाँका करता है!" यह बात ड्यूने कुछ समय बाद अपने एक मित्रसे कही। मित्रने पूछा—तुमने उस बदमाशकी पीठ पर चमड़ेके कोड़ेके दोचार सपाटे क्यों न जमा दिये? ड्यूने उत्तर दिया—"नहीं, यदि कोई मेरे कानके बिलकुल पास लाकर बंदूककी आवाज करता तो भी मुझे उससे इतना भय अथवा घबड़ाहट न होती, जितनी उस लड़केके उन थोड़ेसे शब्दोंसे हुई! मैंने उसी वक्त अपना काम छोड़ दिया और अपने जीमें कहा, 'सच है! सच है! परन्तु लड़के! तुझे मुझसे फिर ऐसा कहनेका अवसर न मिलेगा।' मुझे उस लड़केके शब्द ऐसे मालूम हुए कि मानो वह देववाणी थी। उसकी बात पर मैंने अपने जीवन भर ध्यान रक्खा है। मैंने उससे यह शिक्षा पाई है कि आजका काम कल पर न छोड़ना चाहिए, अथवा काम करनेके समयको व्यर्थ न खोना चाहिए।"

बस, उसी वक्तसे ड्यू राजनीतिकी चर्चा छोड़कर अपने धंधेमें लग गया। वह अवकाश मिलने पर पढ़ता भी था, परन्तु अपने धंधेका हरज न होने देता था। कुछ समय पीछे उसने अपना विवाह कर लिया। उसका साहित्य

प्रेम पहले पहल एक कविताके रूपमें प्रकट हुआ । उसकी कविताके कुछ अंश जो अबतक मौजूद हैं यह सूचित करते हैं कि आत्माके अमूर्तिक और अविनाशी होनेके सम्बंधमें उसके विचार कविता करते ही उत्पन्न हुए थे । उसके पढ़नेका स्थान रसोईघर था । वहाँ वह चूल्हा सुलगानेकी धोंकनी पर किताब रखकर पढ़ा करता था । बच्चे शोर मचाते रहते थे और धूमधाम करते रहते थे तो भी वह अपने लेख लिखा करता था । उस समय पेन नामक लेखककी ' बुद्धिका युग ' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई थी । लोग उसे बड़े चावसे पढ़ते थे । इस पुस्तकके प्रतिवादमें ड्र्यूने एक छोटीसी पुस्तक लिखी, जो प्रकाशित हो गई । वह अकसर कहा करता था कि पेनकी पुस्तकने ही मुझे लेखक बनाया । फिर तो कुछ समय पश्चात् ही उसने जल्दी जल्दी कई छोटी छोटी पुस्तकें लिख डालीं । कुछ वर्षोंके बाद उसने ' मनुष्यका आत्मा अमर है और अमूर्त है' इस नामकी प्रसिद्ध पुस्तक लिखी, प्रकाशित कराई और उसको ३२० रु० में बेच दिया । इस रकमको वह उस समय बहुत जियादा समझता था। इस पुस्तककी कई आवृत्तियाँ हो चुकी हैं और अब भी उसकी कदर की जाती है । बहुतसे युवा लेखक अपनी थोड़ीसी सफलता पर भी भूल जाते हैं— अभिमान करने लगते हैं; परन्तु ड्र्यूको किञ्चित् भी घमंड न हुआ। प्रसिद्ध लेखकोंमें गणना हो जानेपर भी अपने घरके द्वारके आगेकी गलीको झाड़ा करता था और अपने शिष्योंको जाड़ेके लिए कोयला लानेमें सहायता दिया करता था। उसने कुछ समय तक तो साहित्यको, अपना रोजगार भी न बनाया था; वह मोचीका काम करके ही ईमानदारीसे उदरनिर्वाह करता था और उससे जो समय बचता था उसे पुस्तक लिखनेमें लगाता था । परन्तु पीछे वह अपना सारा ही समय साहित्यसेवामें लगाने लगा । उसने एक मासिकपत्रका संपादन करना शुरू किया और पुस्तकोंके प्रकाशनका भी वह प्रबंध करने लगा । उसने कई पुस्तकें लिखीं । अपने जीवनके अन्तिम दिनोंमें उसने कहा—" मैं जिस समय पैदा हुआ उस समय मनुष्यसमाजकी सबसे नीचेकी सीढ़ी पर था । नीचकुलसे ऊपर चढ़कर मैंने ईमानदारीके साथ, परिश्रम करके, मितव्ययका अवलम्बन करके और सदाचार पर खूब लक्ष्य रखके अपने कुटुम्बको आदरणीय बनानेकी जीवनभर चेष्टा की है । दैवकी कृपासे मेरा परिश्रम सफल हुआ और मेरे मनोरथ सिद्ध हो गये । "

पाँचवाँ अध्याय।

साधनोंकी सहायता और सुयोग।

" खाली हाथ अथवा कोरी बुद्धिसे कोई महत्त्वका काम नहीं हो सकता। काम यंत्रों और साधनोंसे होते हैं। बुद्धि (मानसिक शक्ति) और हाथ (शारीरिक शक्ति) दोनोंको ये साधन एक समान आवश्यक हैं।"—बेकन।

" सुयोगके सिरमें केवल आगेकी ओर बाल होते हैं, पीछेकी ओर वह गंजा रहता है। यदि तुम उसके आगेके बालोंको पकड़ लो तो वह तुम्हारे हाथ आजायगा। परन्तु यदि तुम उसे आगेसे निकल जाने दोगे तो फिर संसारमें कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो उसे पकड़ सके।"—लैटिनसे।

किसी आकस्मिक घटना या दैवकी लीलाके भरोसे जीवनमें कोई बड़ा काम नहीं होता। यह ठीक है कि कभी कभी रास्ता चलते चलते रुपयोंकी थैली हाथ लग जाती है, या ऐसा ही और कोई अनचीता लाभ हो जाता है; परन्तु इस तरहके लाभकी आशामें बैठे रहना मूर्खता है। दृढ निश्चयके साथ निरन्तर परिश्रम करते रहना—उद्योगमें लगे रहना ही सबसे अच्छा और सुरक्षित मार्ग है।

चित्तको एक ही तरफ—अपने कामहीकी तरफ लगा देना और लगातार परिश्रम करना ये दो सच्चे काम करनेवालेके लक्षण हैं। सबसे बड़े मनुष्य वे ही हैं जो छोटे छोटे कामोंसे घृणा नहीं करते, किन्तु उन्हें अत्यन्त सावधानीके साथ बढ़ाते हैं। एक मूर्तिकारने अपने मित्रसे कहा—" इससे पहले जब आप यहाँ आये थे तबसे अब तक मैंने अपनी इस मूर्तिमें कई सुधार किये हैं:—इस भागमें थोड़ासा परिवर्तन करके कुछ खूबसूरती ला दी है, उस भागको साफ करके चिकना किया है, मुखमुद्रामें कुछ भव्यता और ला दी है, भुजाके इस भागमें कुछ गुलाई ला दी है और होठ ऐसे बना दिये हैं कि मानों इनमेंसे अभी शब्द निकलेंगे।" मित्रने कहा " परन्तु यह तो छोटी छोटी बातें हैं।" मूर्तिकारने उत्तर दिया, " यह ठीक है; परन्तु याद रक्खो कि छोटी छोटी बातोंसे ही निपुणता आती है—छोटी छोटी बातोंके

एकत्र स्वरूपको ही निपुणता कहते हैं और सम्पूर्णता कोई छोटी बात नहीं है" । एक चित्रकारका सिद्धान्त था कि–' यदि कोई काम, करनेके योग्य है, तो वह भले प्रकार करनेके योग्य है–उसमें लापरवाही न करना चाहिए।'

कहा जाता है कि कुछ अनुसंधान दैवयोगसे हुए हैं; परन्तु यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो मालूम होगा कि ऐसा कहना भूल है। जिन बातोंको हम समझते हैं कि दैवयोगसे मालूम हुई हैं वे जियादातर सुयोगों (मौकों) से बुद्धिपूर्वक लाभ उठानेसे मालूम हुई हैं। दैव कोई चीज ही नहीं है। बहुधा कहा जाता है कि जब न्यूटनने वृक्षसे सेबको गिरते हुए देखा, तब उसने गुरुत्वाकर्षणकी शक्तिका पता लगाया और यह केवल एक आकस्मिक घटना थी–दैवलीला थी । परन्तु ऐसा कहना ठीक नहीं; इसके पहले ही न्यूटन आकर्षण शक्तिके विषयमें वर्षों विचार व परिश्रम कर चुका था। सेबके गिरनेसे तो उसने अपनी बुद्धिसे तुरंत ही उसका कारण समझ लिया और इस तरह उसने अपना प्रसिद्ध अनुसंधान किया। अर्थात् गुरुत्वाकर्षणका पता किसी दैवी घटनाका नहीं किन्तु न्यूटनके वर्षोंके परिश्रमका फल था। यद्यपि लोग समझते हैं कि बड़े आदमी बड़ी बातों पर ही ध्यान देते हैं, परन्तु असली बात यह है कि वे अत्यन्त साधारण और प्रतिदिनके व्यवहारकी चीजोंकी भी छान बीन किया करते हैं। उनमें बड़ापन बस यही है कि वे बुद्धिमत्ताके साथ हर बातको समझ लेते हैं।

मनुष्योंमें जो भेद दिखलाई देता है वह अधिकतर निरीक्षण-शक्तिके न्यूनाधिक होनेसे होता है। कोई कोई मनुष्य जितना देश देशान्तरोंमें फिरकर सीखते हैं उससे अधिक कुछ मनुष्य केवल नाटकोंको देख कर ही सीख लेते हैं। और आँख मस्तिष्क ये दोनों देखनेका काम करते हैं। जहाँ विचाररहित निरीक्षक कुछ नहीं देख पाते, वहाँ विवेकदृष्टिवाले मनुष्य बातकी तह तक पहुँचकर ध्यानपूर्वक भिन्नताओंको देखते हैं, दूसरी चीजोंके साथ उसका मिलान करते हैं और उसके असली अभिप्रायको पा लेते हैं। गेलिलियोके पहले बहुत लोगोंने लटकी हुई चीजोंको क्रमपूर्वक हिलते हुए देखा था; परन्तु इस बातका रहस्य पहले पहल गेलिलियोंकी ही समझमें आया। पिसाके गिरजेके एक सेवकने एक लेम्पमें जो छतमें लटका हुआ था, तेल भर

कर उसे इधरसे उधर झूलने दिया और गेलिलियोने—जो उससमय केवल १८ ही वर्षका था—उसे ध्यानपूर्वक देखा और उसकी गतिसे समयके माप करनेकी कल्पना उसके ध्यानमें जम गई। इसके बाद जब उसने ५० वर्ष तक अध्ययन और मनन किया तब कहीं वह लोलक या पैंडयूलमका आविष्कार कर पाया जिससे घड़ियोंमें और खगोलसम्बन्धी गणितमें अपूर्व सहायता मिली है। इसी तरह गेलिलियोने जब एक बार यह सुना कि किसी ऐनकसाजने एक राजाके लिए एक ऐसी ऐनक (चश्मा) बनाई है कि जिससे दूरकी वस्तु पास दिखलाई देती है, तब उसने इस बातकी ओर अपना ध्यान लगाया और अन्तमें वह दूरबीनका आविष्कार करनेमें समर्थ हुआ। यदि गेलिलियो लेम्पको झूलते हुए देख कर या ऐनककी बात सुनकर ही रह जाता तो ऐसे अद्भुत अनुसंधान कदापि न हो सकते।

कप्तान ब्रौन पुल बनानेकी विद्याका अध्ययन किया करता था। एक नदी पर—जो उसके घरके पास थी—वह एक सस्ता पुल बनाना चाहता था। वह एक दिन एक बागमें घूमने जा रहा था कि मार्गमें उसने एक छोरसे दूसरे छोरतक मकड़ीका जाला पुरा हुआ देखा। उसके विचारमें तुरन्त ही यह बात आई कि लोहेकी जंजीरों अथवा तारोंसे इसी तरहका पुल बनाया जा सकता है और इसका परिणाम यह हुआ कि उसके द्वारा झूलेदार पुलका आविष्कार हो गया। ब्रूनेलने घुनके कीड़ेको एक जहाजकी लकड़ीमें छिद्र करते हुए देखा। वह कीड़ा पहले एक ओर थोड़ी सी लकड़ी खा लेता था और फिर दूसरी ओर खाने लगता था। इस तरह करते करते उसने लकड़ीके आरपार छेद कर दिया जिससे उसका एक तरहका महराबदार घर सा बन गया। इसके बाद उसने उस काटी हुई जगहको एक बूकारके चिकने चैपसे पोत दिया। इसे देख कर ब्रूनेलने बिलकुल इसी तरह टैम्ज नदीके नीचे काम आरंभ कर दिया और नदीके नीचे नीचे रेलके आने जानेका मार्ग बना दिया!

सावधान निरीक्षककी विवेकी आँख ही ऐसी छोटी छोटी बातोंके मूल्यको समझ सकती है। कोलम्बसने भारतवर्षको समुद्रके मार्गसे खोजना चाहा। परन्तु वह यूरुपसे पश्चिमको (अमेरिकाकी ओर) चल दिया। अंतमें वह अमेरिका जा पहुँचा और उसीको उसने भारतवर्ष समझ लिया। उस समय

तक युरुपवालोंको अमेरिकाका पता भी न था। इस सफरमें कोलम्बसको एक मासले भी अधिक समय लगा। जब उसको जहाजमें चलते चलते बहुत दिन बीत गये, तब उसके साथी निराश हो गये। उन्होंने समझ लिया कि अब स्थल कभी न आवेगा। उन्होंने निश्चय कर लिया कि अब कोलम्बसको समुद्रमें ढकेल कर घरको लौट चलना चाहिए। उसी समय कोलम्बसने समुद्रमें तैरती हुई घास देखी। उसको देखकर वह समझ गया कि भूमि निकट है और तब उसने अपने साथियोंको भी समझाया। वे मान गये और शान्त हो गये। कोई चीज इतनी छोटी नहीं है जिसकी तरफसे हम उपेक्षा कर सकें और कोई बात ऐसी तुच्छ नहीं है जिसका अभिप्राय मालूम होने पर वह किसी काममें उपयोगी न हो सके।

छोटी छोटी चीजोंका ध्यानपूर्वक निरीक्षण करना, व्यवसाय, शिल्प, विज्ञान और जीवनके हर काममें सफलता प्राप्त करनेका गुप्त रहस्य है। मानव जातिका ज्ञान छोटी छोटी बातोंसे ही मिलकर बना है। ये बातें पीढ़ियोंकी परम्परासे इकट्ठी हो रही हैं। ज्ञान और अनुभवके छोटे छोटे अंश बड़ी साव-धानीसे इकट्ठे किये गये हैं और अब उनका बहुत बड़ा समूह हो गया है। यद्यपि ऐसी बहुतसी छोटी छोटी बातें पहले पहल महत्त्वहीन ही मालूम हुई होंगी तो भी पीछेसे वे बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई होंगी और तदनुसार उन्हें ज्ञानभंडारमें उचित स्थान मिल गया होगा। बहुतसे विचार जो व्यवहारसे सर्वथा अतीत जैसे मालूम होते थे स्पष्टतया व्यवहारोपयोगी फलोंके बीजरूप सिद्ध हुए हैं। जब फ्रैंकिलनने मालूम किया कि आसमानी बिजली और घर्ष-णसे उत्पन्न हुई विद्युत् एक ही वस्तु है तब लोग उनका उपहास करते थे और कहते थे कि "ये दोनों बिजलियाँ एक जातिकी हैं यदि यह जान भी लिया तो इससे क्या लाभ हुआ? यह किस कामकी बात है?" इसका उत्तर फ्रैंकिलन यह देते थे कि "एक छोटासा बालक किस कामका होता है? तुम्हें सोचना चाहिए कि वही बालक एक दिन बालकोंका बाप हो सकता है!" जब गैलवनीने यह मालूम किया कि मेंढककी टाँगके साथ भिन्न भिन्न धातुओंको रख देनेसे उसकी टाँग खिच आती है, तब यह किसको खयाल था कि यह बात, जो देखनेमें तुच्छ जान पड़ती थी, ऐसे महत्त्वपूर्ण परिणाम पैदा करेगी। परन्तु इसीसे तार द्वारा समाचार भेजनेके उपायका

विकास हुआ, जिसके द्वारा संसारके समस्त देशोंके समाचार इधरसे उधर जाया करते हैं। इसी प्रकार पृथ्वीके नीचे दबे हुए पशु और वनस्पतियोंके छोटे छोटे अंशोंका बुद्धिमानीसे अभिप्राय समझनेसे भूस्तरविद्याका विकास हुआ और खान खोदनेका काम निकला, जिसमें अब करोड़ों रुपया लगाया जाता है और करोड़ों मनुष्योंके लिए उपयोगी धंधा निकल आया है।

पानीकी बूँदोंमें उष्णता लगनेसे भाफका पैदा होना साधारण बात है। हम अपने रसोईघरोंमें यह बात प्रतिदिन देखते हैं। इसी भाफको जब हम चतुराईसे बनाई हुई कलोंके द्वारा काममें लाते हैं, तब इसकी शक्ति करोड़ों घोड़ोंकी शक्तिके बराबर हो जाती है। वह अपने बलसे समुद्रकी लहरोंको फटकारती है और बड़े बड़े तूफानोंका सामना करती है। खानोंमेंसे पानी निकालनेमें पेच और कारखानोंके चलानेमें और जहाज व रेलके हाँकनेमें जिन मशीनोंका प्रयोग किया जाता है, वे भाफकी ही शक्ति पर अवलम्बित हैं। यही शक्ति जब पृथ्वीके भीतर काम करती है तब पर्वतोंमेंसे ज्वाला निकलती है और भूकम्पके रूपमें पृथ्वीको कम्पायमान कर देती है जिससे संसारके इतिहासमें बड़े बड़े भारी परिवर्तन हो जाते हैं।

कहा जाता है कि पहले पहल मारक्विस आफ वोरस्टरका ध्यान भाफकी शक्तिकी ओर आकर्षित हुआ था। वह लंडनके टवर (बंदीग्रह) में कैद था। वहाँ पर एक बड़ा भारी बरतन चूल्हे पर चढ़ा हुआ था। उसमें पानी खौल रहा था। बरतनके मुँह पर कड़ा ढक्कन लगा हुआ था। उसने एकाएक देखा कि भाफके जोरसे वह ढक्कन उचट कर दूर जा पड़ा। इससे उसे भाफकी शक्तिका ज्ञान हुआ और फिर उसने अपने इस अनुभवका फल एक पुस्तकमें प्रकाशित करा दिया, जिसकी सहायतासे अनेक लोग भाफकी शक्तिकी खोजमें लग गये। इसके बाद सेवेरी, न्यूमेन आदिने भाफको व्यवहारमें लाकर एक अंजन तैयार किया, जिसको वाटने उन्नति दी। वाटने अपना सारा जीवन भाफके अंजनकी पूर्ति करनेमें ही लगा दिया।

सुयोगों और संयोगोंसे लाभ उठाना, और उनको किसी कार्यकी सिद्धिमें लगाना सफलताका बड़ा भारी रहस्य है। जो मनुष्य कोई न कोई काम निकालने का संकल्प कर लेते हैं, उनको मनमाने सुयोग मिल जाते हैं; और यदि सुयोग पहलेसे मौजूद नहीं रहते तो वे उनको बना लेते हैं। यह मत समझो

कि कालिजों, अजायबघरों, और प्रदर्शनियोंसे लाभ उठानेवालोंने ही विज्ञान और शिल्पसंबंधी सबसे अधिक काम किया है और यह खयाल भी ठीक नहीं है कि जो सबसे अधिक प्रसिद्ध यंत्रकार और आविष्कारक हुए हैं उन्होंने शिल्पशालाओंमें शिक्षा पाई थी। प्रसिद्ध चित्रकार राजा **रविवर्माने** किसी चित्रशालामें कभी शिक्षा नहीं पाई। आवश्यकता आविष्कारोंकी जननी है। अर्थात् आवश्यकताके कारण ही सारे आविष्कार हुए हैं—मनुष्यका जिसके बिना न चला उसीकी वह खोज करता गया। सबसे अधिक फलदायक पाठ-शाला 'कठिनाई' की पाठशाला है। संकटों और कठिनाइयोंसे ही तरह तरहके आविष्कार होते हैं। कुछ सर्वोत्तम शिल्पकारोंने बहुत भद्दे औजारोंसे काम किया है; परन्तु याद रक्खो कि मनुष्य औजारोंके द्वारा नहीं किन्तु अपनी चतुराई और धैर्यके कारण शिल्पकार बनता है। बुरे शिल्पकारके लिए अच्छे भी औजार बुरे हैं। एक चित्रकारने किसीसे कहा कि, "आप अपने रंग मालूम नहीं किस विचित्र रीतिसे मिलाते हैं?" उसने उत्तर दिया, "महाशय! मैं उन्हें अपने मस्तकके द्वारा मिलाता हूँ।" हरएक प्रसिद्ध कार्यकर्ताके विषयमें यही बात समझना चाहिए। **फरगुसनने** अनेक अद्भुत चीजें-जैसे लकड़ीकी घड़ी, जो ठीक घंटे बताती थी—एक साधारण चाकूसे बनाईं। चाकू एक ऐसा औजार है, जो हर मनुष्यके पास होता है; परन्तु प्रत्येक मनुष्य फरगुसन नहीं होता। पानीका एक तसला और दो तापमापक यंत्र, केवल इन्हीं औजारोंसे डाक्टर ब्लैकने अप्रकट तापका अनुसंधान किया यह सिद्ध किया कि सृष्टिकी तमाम चीजोंमें छुपी हुई गर्मी रहती है। डाक्टर **वोले-स्टनने** बहुतसे महत्त्वपूर्ण वैज्ञानिक अनुसंधान केवल चायकी एक पुरानी रकाबी, घड़ीके शीशे, कागज, एक छोटीसी तराजू और एक फूँकनीसे किये थे।

कटक (उड़ीसा) निवासी महामहोपाध्याय पं० **चन्द्रशेखर सिंहने** ज्योतिषसंबन्धी अनेक अनुसंधान साधारण यंत्रोंसे कर डाले थे। उनके पास एक जलघड़ी, एक दृग्चक्र, एक खगोल, एक शंकु और एक स्वयं वह यंत्रके सिवाय कुछ न था। और ये यंत्र भी उन्होंने प्राचीन भारतीय ज्योतिष पुस्तकोंको स्वयं पढ़ पढ़कर बना लिये थे। आज कलके पश्चिमी यन्त्रोंका तो उन्होंने बहुत समय तक नाम भी न सुना था। केवल प्राचीन संस्कृत ग्रंथोंके आधार पर पुराने ढंगसे ज्योतिष विद्या सीखी थी; बहुत दिनों तक तो नये

पश्चिमी ज्योतिष-शास्त्रकी उन्हें हवा तक न लगी थी। चंद्रशेखरसिंहको बाल्यकालमें संस्कृत पढ़ाई गई थी। उनको शुरूसे ही ग्रह नक्षत्र इत्यादि देखनेका और ज्योतिषशास्त्र जाननेका बड़ा शौक था। उनके चाचाने उनको दो चार तारे आकाशमें बतला दिये थे; इससे अधिक वे कुछ न बतला सके थे। चन्द्रशेखरसिंहने जब कोई सहारा न देखा तब स्वयं ही संस्कृतके ज्योतिषग्रन्थोंके पढ़ने और समझनेका प्रयत्न किया और इस कार्यमें उन्हें बड़ी सफलता हुई। उनका जीवन स्वावलम्बनका एक बढ़िया उदाहरण है। उन्होंने प्राचीन संस्कृत ग्रंथोंको पढ़ा; फिर उनमें लिखी हुई बातोंकी सत्यताकी परीक्षा करनेके लिए प्रयत्न किया और जब प्रत्यक्ष आकाशसे उन बातोंसे मिलान न खाया तब ग्रन्थोंका बारबार अध्ययन और मनन किया। इतने पर भी जब अन्तर दूर न हुआ तब उन्होंने यन्त्र बनाये और उनके द्वारा वे वर्षोंतक निरंतर परीक्षायें करते रहे।

कटक-कालिजके अध्यापक बाबू योगेशचन्द्रकी भेट जब पहली बार चंद्रशेखरसे हुई तब उन्हें उनकी विद्वत्ताको जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ। एक साधारण ग्राममें रहकर केवल संस्कृतग्रंथोंकी सहायतासे इतना ज्ञान प्राप्त कर लेना कोई छोटी बात न थी। योगेश बाबूने परीक्षा लेनेके लिए उनसे कई प्रश्न पूछे और उनका सन्तोषजनक उत्तर पाया। एक दिन रात्रिके समय उन्होंने शुक्र और मंगलका अंतर पूछा। इस पर चन्द्रशेखरने तुरंत ही लम्बी तिरछी लकड़ियाँ लगा-कर एक मान-दंड तैयार किया और उससे दोनों ग्रहोंका अन्तर माप कर ठीक ठीक बता दिया। बिना दूरबीनके केवल लकड़ियोंसे ऐसा ठीक ठीक माप करना योगेशचन्द्रको बड़ा कुतूहलजनक मालूम हुआ। फिर योगेशचन्द्रने उनको दूरबीन दिखाई जिसे देखकर उन्हें बड़ा आनन्द हुआ।

चंद्रशेखरने संस्कृतमें कविता करना भी सीख लिया और २३ वर्षकी अवस्थामें 'सिद्धान्तदर्पण' नामक एक छन्दोबद्ध संस्कृत ग्रन्थ लिख डाला। इसके लिखनेमें उन्होंने बहुत परिश्रम किया। इसमें उन्होंने अपने कियेहुए अनेक अनुसंधान लिखे। सन् १८८८ इस्वीमें बाबू योगेशचन्द्रने इस ग्रंथको अपनी लिखी हुई एक लम्बी चौड़ी अँगरेजी भूमिकासहित प्रकाशित किया। इस ग्रंथने चन्द्रशेखरका यश दूर दूर तक फैला दिया और हमारी सरकारने उनकी

योग्यता पर मुग्ध होकर उनको महामहोपाध्यायकी उपाधिसे विभूषित किया। यूरुपके बड़े बड़े ज्योतिर्विद्याविशारद भी इस ग्रंथको देखकर दाँतोंके तले उँगली दबाते हैं। भारतवर्षमें भी आपका बड़ा सम्मान हुआ। यहाँके पंडि-तोंने मिलकर एक सभा की और इसमें आपके सिद्धान्तोंके अनुसार पञ्चाङ्ग बनानेका निश्चय किया। इस पञ्चाङ्गका बंगालमें खूब ही प्रचार है।

स्टोथर्डने रंग मिलानेकी कला तितलियोंके पंखोंको ध्यानपूर्वक देखकर सीखी थी। वह बहुधा कहा करता था कि "कोई नहीं जानता कि मैं इन छोटे छोटे कीड़ोंका कितना ऋणी हूँ।" चित्रकार विल्की खलिहानके दरवाजेसे कागजका और जली हुई लकड़ीसे पैन्सिलका काम निका-लता था! बालक रविवर्मा कोयलेसे दीवारों पर चित्र बनाया करता था। वैविक भी इसी तरह पहले खड़ियासे दीवारों पर चित्र बनाता था। फरगुसन खेतोंमें कम्बल ओढ़कर पड़ा रहता था और एक डोरेमें जिसमें मनियाँ पिरोये हुए थे, सितारोंका नक्शा बनाया करता था। अर्थात् वह एक एक तारेकी जगह अपने धागेमें एक एक मनिया अटका देता था। फ्रेंक्लि-नने पहले पहल अपनी पतंगमें एक रेशमी रूमाल और दो आड़ी लकड़ियोंको लगा कर उसे आकाशमें उड़ाया और उसके द्वारा गरजते हुए बादलोंमेंसे बिजली खींची। गिफर्ड जब कि वह एक चमारके यहाँ नौकर था, चमड़ेके छोटे छोटे चिकने किये हुए टुकड़ों पर गणितके सवाल लिखा करता था। ज्योतिषी रिटिन हौस ग्रहणोंका हिसाब अपने हल पर लगाया करता था।

अत्यन्त साधारण अवसरों पर भी मनुष्यको उन्नति करनेके मौके अथवा साधन मिल सकते हैं, यदि वह उनसे लाभ प्राप्त करनेके लिए तत्पर हो। अध्यापक लीका ध्यान, जब वे बढ़ईका काम करते थे, हिब्रू भाषामें लिखी हुई बाइबिलको देखकर हिब्रू भाषाके सीखनेकी ओर आकर्षित हुआ। उन्होंने एक पुराना व्याकरण मोल ले लिया और उस भाषाको वे स्वयं सीखने लगे। जब एडमन्डस्टोनसे, जो एक गरीब मालीका लड़का था, एक महाशयने पूछा कि, "तुम लैटिन भाषाकी पुस्तकें पढ़नेके योग्य कैसे हो गये?" तो उसने उत्तर दिया कि "यदि मनुष्य केवल वर्णमालाके सब अक्षर सीख ले, तो वह जो कुछ चाहे सीख सकता है।" लगातारके प्रयत्न तथा धैर्यसे और सुयोगोंका श्रमपूर्वक सदुपयोग करनेसे सारे काम सिद्ध हो जाते हैं।

इँग्लैंडका प्रसिद्ध कवि, उपन्यास-लेखक और इतिहासज्ञ सर **वाल्टर स्काट** हर काममें आत्मोन्नतिके मौके ढूँढ लेता था और संयोगोंसे भी लाभ उठा लिया करता था। उसने एक लेखकके यहाँ नौकरी करके हाईलेन्ड्स देश देखा, वहाँ पर सन् १७४५ के विद्रोहसे बचे हुए वीरोंसे मित्रता की, और उनसे अपने भावी ग्रंथोंके लिए सामग्री प्राप्त कर ली। इसके कुछ काल बाद उसे संयोगवश एक घोड़ेने लात मार दी, जिससे वह कुछ दिनोंतक चलने फिरनेसे असमर्थ हो गया और घरके भीतर पड़े रहनेको मजबूर हो गया। परन्तु वह आलस्यका कट्टर बैरी था, इसलिए उस समय अपने मस्तकसे काम करना शुरू कर दिया। तीन दिनमें उसने अपनी सबसे प्रथम और प्रसिद्ध कविताका प्रथम सर्ग लिख डाला और थोड़े ही दिनोंमें उसे समाप्त कर दिया।

इन सब उदाहरणोंसे मालूम होता है कि संसारमें दैवयोग मनुष्यका उतना सहायक नहीं है जितना उद्देश व निरंतरका परिश्रम है। निर्बल, आलसी और उद्देशरहित मनुष्योंके लिए सर्वोत्कृष्ट सुयोग भी किसी कामके नहीं हैं। वे उन्हें निरर्थक समझकर उन पर ध्यान तक नहीं देते। परन्तु यह जानकर आश्चर्य होता है कि यदि हम कार्य और प्रयत्न करनेके सुयोगोंको–जो हमको सदैव मिलते रहते हैं–जाने न दें और उन्नति करें, तो कितना कार्य हो सकता है। **वाट** गणितसम्बन्धी औजारोंके बनानेका व्यापार करते हुए भी रसायनशास्त्र और यंत्रविद्याका अध्ययन करता था और स्विटजरलैंडके एक रँगरेजसे जर्मन भाषा सीखा करता था। गतिवान् अंजनका आविष्कारकर्ता **स्टीफिन्सन** दिनमें अंजनकी नौकरी करता था, रातको अंकगणित और माप-विद्या सीखा करता था और दिनमें भोजनके लिए उसे जितने समयकी छुट्टी मिलती थी उसमेंसे कुछ मिनट निकाल कर कोयलेकी गाड़ियों पर खड़ियासे गणितके सवाल किया करता था। श्रीयुत **हेमचन्द्र** राली ब्रदर्सके यहाँ नौकर थे। वे दिनभर अपने स्वामीका काम किया करते थे; परन्तु फिर भी कुछ समय बचाकर कृषिसम्बन्धी बातें सीखा करते थे। इस तरह उन्होंने बहुत दिनोंतक परिश्रम करके कलकत्तेके पास एक कृषिशाला स्थापित की, जिसके द्वारा देशका बहुत बडा उपकार हो रहा है। **जी. एस. परांजपे** पहले बड़े निर्धन थे। वे एक महाशयके यहाँ नौकरी करके उनके साथ जापान चले गये। वहाँ अपने मालिकके कामसे

अवकाश पाकर वे रसायन-विद्याका अभ्यास करते थे। कुछ दिनोंमें वे साबुन बनाना सीख गये और तब स्वतन्त्र होकर निजी काम करने लगे। कुछ समयके बाद उन्होंने 'डायमन्ड सोप वर्क्स' नामक साबुन बनानेका कारखाना खोल दिया जो अब भी बड़े मजेसे चलता है। परिश्रम करना डानका स्वभाव था। उसने अपने बाल्य-कालसे ही परिश्रम करना आरंभ कर दिया था। जब वह लगभग बारह वर्षका था, तब एक ग्रामीण पाठशालाके लड़कोंको पढ़ाया करता था—जाड़ेकी ऋतुमें लड़कोंके पढ़ानेका काम करता था और गर्मीकी ऋतुमें अपने पिताके खेतका काम किया करता था। वह कभी कभी अपने आपको और अपने साथियोंको रुपयेकी बाजी लगाकर पढ़नेके लिए मजबूर किया करता था। एक बार एक सवालके निकाल देनेसे उसने इतना रुपया जीत लिया कि उससे उसने जाड़ेकी ऋतु भरके लिए मोमबत्तियाँ खरीद लीं। वह नभो-विद्यासंबंधी निरीक्षण करता रहा और अपने समस्त जीवनमें उसने लगभग दो लाख निरीक्षण किये।

समयके छोटे छोटे अंशोंमें भी धैर्यपूर्वक काम करनेसे अत्यंत बहुमूल्य परिणाम निकल सकते हैं—बहुत बड़े बड़े लाभ हो सकते हैं। फिजूल कामोंमेंसे यदि एक घंटा समय प्रतिदिन बचा लिया जाय और इस एक घंटेको किसी अच्छे काममें लगाया जाय, तो साधारण योग्यतावाला मनुष्य भी किसी विद्याका बहुत ज्ञान प्राप्त कर सकता है। ऐसा करनेसे एक अशिक्षित मनुष्य दश वर्षसे भी कम समयमें अच्छा विद्वान् हो सकता है। समयको उससे लाभ प्राप्त किये विना न जाने देना चाहिए। कोई जानने योग्य बात सीखनी चाहिए, कोई उत्तम नियम स्थापित करना चाहिए, अथवा किसी अच्छी आदतको पुष्ट करना चाहिए। डाक्टर मेसनगुड गाड़ीमें बैठकर लंडनकी सड़कों पर अपने रोगियोंको देखने जाया करते थे। मार्गमें जो समय मिलता था, उसीमें उन्होंने एक पुस्तकका अनुवाद कर डाला। डाक्टर डार्विनने भी अपने सब ग्रंथ इसी तरह लिखे हैं। वे टमटममें बैठकर लोगोंके घर जाया करते थे और मार्गमें कागजके छोटे छोटे टुकड़ों पर अपने विचार लिखते जाते थे। हेलने एक ग्रंथ दौरा करनेके समय लिखा था। डाक्टर बर्नें जब अपने शिष्योंके यहाँ घोड़े पर चढ़कर जाया करते थे तब मार्गमें फ्रेंच और इटैलियन भाषा सीखते जाते थे। कर्कव्हाइटने दफ्तरसे घर तक आने जानेमें ग्रीक भाषा सीखी थी।

फ्रांसके प्रसिद्ध अध्यक्ष डागेसोने समयके छोटे छोटे अंशोंको काम
लाकर एक बड़ा और योग्यतासम्पन्न ग्रंथ लिखा था। भोजनकी प्रतीक्षा क
नेमें उसे जो समय मिलता था उसीमें वह लिखा था। मेडेम डी. जैनलि
ने अपने ग्रंथ उस समयमें लिखे जब वह राजकुमारीके आनेकी–जिसको
पढ़ाने जाती थी–प्रतीक्षा किया करती थी। ऐलिहू बुरिटने लुहारके काम
अपना निर्वाह करते हुए १८ नवीन तथा प्राचीन भाषायें और यूरुपकी
बोलचालकी भाषायें सीखीं।

कुछ मनुष्योंने अपने कामोंमें जो क्लेश उठाया है वह अद्भुत है; परन्तु
इस क्लेशको ही अपनी सफलताका मूल समझते थे। ऐडीसनने
'स्पेक्टेटर' (द्रष्टा) नामक पत्रके सम्पादनमें हाथ लगाया तब उसे पह
पहल उसको तीन बार लिखना पड़ा, तब कहीं अच्छा लिखा गया। न्यूटन
अपनी एक पुस्तक जब पन्द्रह बार लिख ली, तब उसे संतोष हुआ
गिबनने अपनी पुस्तक नौ बार लिखी। हैलने बहुत वर्षोंतक प्रतिदिन
घंटेके हिसाबसे पढ़ा। जब वह कानून पढ़ते पढ़ते थक जाता था, तब विश्र
लेनेके लिए दर्शनशास्त्र पढ़ने लगता था, और जब इससे भी थक जाता
तब गणितका अध्ययन करने लगता था। पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासाग
दिनरातमें केवल दो घंटे सोते थे और शेष समयमें या तो पढ़ा करते थे
भोजन बनाना आदि अन्य आवश्यकीय काम किया करते थे। ह्यूमने 'इं
डका इतिहास' १३ घंटे रोज परिश्रम करके लिखा था। मौनटैसक्
अपने लेखोंके एक भागके सम्बन्धमें अपने एक मित्रसे कहा था कि "
तो इसे कुछ ही घंटोंमें पढ़ लोगे, परन्तु मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैंने इस
लिखनेमें इतने समय तक परिश्रम किया है कि मेरे बाल सफेद पड़ गये हैं

विचारवान् और अध्ययनशील मनुष्य अपने विचारों और देखी हुई बातें
लिख लेनेका अभ्यास बहुत रखते हैं। इससे उनका उन पर सदैवके लि
अधिकार हो जाता है–वे उन्हें भूल नहीं सकते। लार्ड बेकन बहुतसी हस
लिखित पुस्तकें छोड़ गये हैं जिनका शीर्षक है, 'प्रयोगके लिए लिखे ग
आकस्मिक विचार'। इर्सकिन, बर्क नामक प्रसिद्ध लेखककी पुस्तकमेंसे अ
अच्छे महत्त्वके वाक्य चुनकर अलग लिख लिया करते थे। एल्डलने ए
प्रसिद्ध पुस्तकको दो बार अपने हाथसे लिखा जिससे वह पुस्तक उसके मस

कमें अच्छी तरह जगह पा गई। डाक्टर पाईस्मिथ, अपने पिताके साथ पुस्तकोंकी जिल्द बाँधनेका काम किया करते थे। उस समय वे जितनी पुस्तकें पढ़ते थे उन सबका हाल अनेक स्मरणलेखों, उद्धृत किये हुए वाक्यों और समालाचनाओं सहित लिख लिया करते थे। उन्होंने इस तरहकी सामग्री इकट्ठा करनेमें अपने जीवनभर अश्रान्त परिश्रम किया था। उनके जीवनचरित-लेखकने लिखा है कि " वे सदैव काम करते रहते थे, सदैव आगे बढ़ते रहते थे और सदैव सामग्री इकट्ठी करते रहते थे।" बादमें इस सामग्रीसे उनको बहुत सहायता मिली।

जान हंटर भी ऐसा ही करते थे। उन्होंने चिकित्सासम्बन्धी अनेक कार्य किये थे। वे रातको केवल चार घंटे सोते थे और दिनमें भोजनके पश्चात् एक घंटा और सोते थे। जब उनसे एक बार पूछा गया कि " आपने अपने कार्योंमें किस उपायसे सफलता प्राप्त की है?" तो उन्होंने उत्तर दिया— " मेरा सिद्धान्त यह है कि मैं किसी कामको शुरू करनेके पहले अच्छी तरह सोच समझ लेता हूँ कि वह हो भी सकता है या नहीं। यदि वह हो सकता है, तो मैं उसे पूरा परिश्रम उठाकर करने लगता हूँ। एकबार शुरू करके मैं किसी कामको पूरा किये बिना कभी नहीं छोड़ता। इसी सिद्धान्त पर चलनेसे मुझे सारी सफलतायें प्राप्त हुई हैं।"

हार्वे बड़ा परिश्रमी था। वह थकता न था। आठ वर्ष तक निरंतर खोज करनेके बाद उसने रक्त बहनेके सम्बन्धमें अपने विचार प्रगट किये। उसने अपनी परीक्षाओंको बार बार दुहराया और जाँचा। वह पहलेसे ही जानता था कि जब मैं अपने अनुसन्धानको प्रकाशित करूँगा तब मुझे अपने सहयोगियोंका सामना करना पड़ेगा। जिस पुस्तकमें उसने अपने विचार प्रकाशित किये हैं वह अत्यंत विनयपूर्वक लिखी गई थी और सरल, सुबोध तथा प्रमाणपूर्वक थी। इस पर भी लोगोंने उस पुस्तककी हँसी उड़ाई और उसके लेखकको सिड़ी व धूर्त समझा। कुछ समय तक उसके मतको किसीने भी ग्रहण न किया और उसको फटकार और गालियोंके अतिरिक्त कुछ न मिला। उसने प्राचीन मनुष्योंके आदरणीय प्रमाणोंका खंडन किया था; इस लिए लोगोंका यहाँतक विश्वास हो गया था कि उसके विचार धर्मपुस्तकोंके प्रमाणोंको नष्ट करनेवाले और सदाचार व धर्मकी जड़को उखाड़ डालनेवाले हैं।

चिकित्साके द्वारा उसको जो थोड़ीसी आजीविका होती थी वह भी जाती रही और वह मित्रहीन हो गया। कुछ वर्षोंतक यही हाल रहा। परन्तु वह सिद्धान्त, जिस पर हार्वे इतने कष्ट सहन करने पर भी बराबर डटा रहा, धीरे धीरे आगामी निरीक्षणोंसे सिद्ध होता गया और पच्चीस वर्षके बाद तो सर्वसाधारणने उसे एक वैज्ञानिक सिद्धान्त मानकर ग्रहण कर लिया।

चेचक (शीतला) से बचनेके लिए टीकेके अनुसंधानको प्रकाशित करने और स्थापित करनेमें डाक्टर जैनरको जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा था वे भी हार्वेकी कठिनाइयोंसे कम न थीं। उनसे पहले बहुत मनुष्योंने गोथन-शीतला देखी थीं और ग्वालाओंकी यह चर्चा सुनी थी कि जो कोई गायके थनकी शीतलासे पीड़ित हो जाता है वह चेचकसे बचा रहता है। इस बातको लोग एक तुच्छ गप्प जानकर सर्वथा निरर्थक समझते थे और उस समय तक कोई भी इसकी खोज करना सार्थक न समझता था जबतक कि संयोगवश जैनरका ध्यान इसकी ओर न गया। यह युवक उस समय विद्यार्थी था। एक ग्रामीण लड़की अपने मालिककी दूकान पर दवा लेने आई थी। उस समय उसने जो कुछ कहा उससे जैनरका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। जब चेचकका नाम लिया गया, तब लड़कीने कहा, "मैं इस रोगमें ग्रसित नहीं हो सकती; क्योंकि मैं गोथन-शीतलासे पीड़ित रह चुकी हूँ।" इस बातकी ओर जैनरका ध्यान तुरंत ही आकर्षित हुआ और वह उसी समयसे इस विषयका अन्वेषण करने तथा देखभाल करनेमें लग गया। जब उसने अपने मित्रोंसे गोथन-शीतलाके रोगनाशक गुणोंके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट किये तब वे उसका उपहास करने लगे और उसको अपने समाजसे निकाल देनेका भय दिखाने लगे। सौभाग्यवश जैनर लंडनमें जान हंटरके यहाँ विद्याध्ययन करने लगा। एक दिन जब उसने उनके सामने अपने विचार प्रकट किये तब जान हंटरने योग्यतापूर्ण उत्तर दिया कि "केवल विचार ही न करो, चेष्टा करो; धीरज रक्खो और बारीकीसे ठीक काम करो"। इस सम्मतिसे जैनरको ढाढस बँधा और इससे उसके हाथमें विधिपूर्वक खोज करनेकी सच्ची कला आगई। इसके बाद वह धंधा करने और इस विषयमें निरीक्षण और अनुभव करनेकी इच्छासे अपने घर चला आया। इस कामको वह लगातार बीस वर्ष तक करता रहा। उसको अपने अनुसंधान पर ऐसा

विश्वास था कि स्वयं अपने विचार एक पुस्तकमें प्रकाशित किये और उसमें उन तेईस मनुष्योंको सफलतापूर्वक टीका लगानेका हाल लिखा, जिनको फिर किसी विधिसे चेचकका रोगी बनाना असंभव था। उसकी यह पुस्तक सन् १७७८ ई० में प्रकाशित हुई।

प्रथम तो इस अनुसन्धानकी ओर ध्यान ही न दिया गया और फिर इसका बलपूर्वक विरोध किया गया। डाक्टर जैनर टीका लगानेकी विधि और उसके परिणाम डाक्टरोंको दिखानेके लिए लंडन गये; परन्तु वे एक भी डाक्टरको उस विषयकी परीक्षा करनेके लिए उत्साहित न कर सके और व्यर्थ ही तीन मासतक प्रतीक्षा करके अपने घर लौट आये। लोग कहते थे कि वे गोथनमेंसे रोग उत्पन्न करनेवाली चीजको निकालकर मनुष्योंके शरीरमें प्रवेश कराके उनको पशु जैसे बनाना चाहते हैं। इससे वे उनके तरह तरहके हास्यपूर्ण चित्र बनाते थे और उनको गालियाँ देते थे। पादरी लोग टीका लगानेको शैतानका काम समझते थे। गाँवके लोग तो छाती ठोककर कहते थे कि "जिन बच्चोंको टीके लगे हैं उनके मुँह बैलके मुँहके समान हो जाँयगे और उनके जो फोड़े निकले हैं वे प्रकट करते हैं कि उन स्थानोंसे सींग फूटनेवाले हैं। उनकी सूरत गायके समान और आवाज साँडके डहारनेके समान हो जायगी।" परन्तु टीकेसे वास्तवमें लाभ होता था इसलिए घोर विरोध होने पर भी लोगोंको धीरे धीरे उस पर श्रद्धा होने लगी। एक ग्राममें एक सज्जनने टीकेके कामको आरंभ किया। वहाँ पहले पहल जिन्होंने टीका लगवाया उन पर लोगोंने पत्थर फैंके और कुछ दिनोंतक तो उन्हें घरके बाहर न निकलने दिया। दो अमीर स्त्रियोंने, जिनका हमें आदरके साथ स्मरण करना चाहिए हिम्मत करके अपने बच्चोंके टीके लगवाये और इससे और लोगोंने बहुत कुछ हठ छोड़ दिया। डाक्टरलोग भी धीरे धीरे मान गये और जब टीकेका महत्त्व मालूम होगया तब कई डाक्टरोंने तो जैनरके इस अनुसंधानको अपना ही बतलाना चाहा। परन्तु जैनरकी ही अन्तमें विजय हुई। सर्वसाधारणने उनका आदर किया और उनके कार्यका प्रतिफल दिया। वे अपने ऐश्वर्यके कालमें भी ऐसे ही नम्र रहे, जितने वे अपनी अप्रसिद्धिके समय थे। लोगोंने उनसे अनुरोध किया कि "आप लंडनमें चलकर रहें। वहाँ रहकर आप डेढ़ लाख रुपया वार्षिक पैदा कर सकेंगे।" परन्तु उन्होंने उत्तर दिया

कि " नहीं, मैं अपने जीवनके आरंभमें अप्रसिद्ध और नम्र रीतिसे रहा हूँ, इसलिए अब जीवनके अन्तमें लक्ष्मी तथा ख्यातिका भूखा नहीं बनना चाहता।" जैनरके ही जीवनकालमें संसारके तमाम सभ्य देशोंने टीका लगानेकी रीतिको ग्रहण कर लिया और जब उनका देहान्त हुआ तब सब लोगोंने उनको सारी मानवजातिका उपकारक स्वीकार किया।

ह्यूमिलरकी निरीक्षण शक्ति बड़ी तेज थी। उन्होंने साहित्य और विज्ञान दोनोंका अध्ययन उत्साह और सफलतापूर्वक किया था। जिस पुस्तकमें उन्होंने अपना जीवन-चरित लिखा है वह बड़ी मनोरंजक है और बहुत ही उपयोगी समझी जाती है। वह इस बातका इतिहास है कि दरिद्र अवस्थामें भी मनुष्य श्रेष्ठ व सदाचारी हो सकता है। उससे स्वावलम्बन, आत्मसम्मान और स्वाश्रयकी अत्यंत प्रभावशाली शिक्षायें मिलती हैं। ह्यूके बचपनमें ही उनके पिता डूबकर मर गये, अतएव उनका उनकी विधवा माताने पालन पोषण किया। उन्हें पाठशालामें भी कुछ शिक्षा मिली; परन्तु वास्तवमें पूछा जाय तो वे लड़के जिनके साथ वे खेलते थे, वे मनुष्य जिनके साथ वे काम करते थे और वे मित्र और कुटुम्बीजन जिनके साथ वे रहते थे–ये सब ही उनके सर्वोत्तम अध्यापक थे। वे भिन्न भिन्न विषयोंका अध्ययन करते थे, बहुत पढ़ते थे और नाना स्थानोंसे प्राचीन ज्ञानका संचय किया करते थे। कारीगरोंसे, बढ़इयोंसे, मच्छीमारोंसे, मल्लाहोंसे यहाँ तक कि समुद्रके किनारे पड़े हुए बड़े बड़े पत्थरोंसे भी वे कुछ न कुछ सीखते थे। वे अपने प्रपितामहके बड़े हतौड़ेको लेकर निकल जाते थे और पत्थरोंको फोड़ते रहते थे तथा अबरक, संगमरमर, याकूत इत्यादिके टुकड़े इकट्ठे किया करते थे। कभी कभी वे जंगलमें पूरा दिन बिता देते थे और वहाँ पर भूगर्भ-विद्या सम्बन्धी बातों पर बहुत ध्यान देते थे। जब वे बड़े हुए तब एक संगतराशके यहाँ नौकर हो गये। यह काम उन्हें पसंद था। इसके बाद वे एक पत्थरकी खानमें काम करने लगे। यह खान उनके लिए एक सर्वोत्तम पाठशाला बन गई। वहाँ पर पृथ्वीके भीतरकी जो बनावटें उन्होंने देखीं उनसे उनका कुतूहल बढ़ गया। नीचे गहरे लाल रंगके पत्थरको और ऊपर पीलापन लिये हुए लालरंगकी मिट्टीको उन्होंने ध्यान-पूर्वक देखा। उनको ऐसे नीरस विषयमें भी निरीक्षण करने और विचार करनेकी सामग्री मिल गई। जहाँ अन्य मनुष्य कोई ध्यान

देने योग्य बात न पाते थे, वहाँ वे समानता, भिन्नता और विशेषता देखा करते थे और उन पर विचार किया करते थे। वे केवल अपनी आँखों और मस्तकको खुला रखते थे और स्थिरता, परिश्रम और धीरजके साथ काम करते थे। उनकी मानसिक उन्नतिका यही गुप्त रहस्य था।

उन्हें अपने हतौड़ेसे खोदते खोदते अथवा समुद्रकी लहरोंसे जो पृथ्वीकी मिट्टी उखड़ आती थी उसमें पुरानी मुर्दा मछलियाँ, वृक्ष इत्यादि ऐसी चीजें मिल जाती थीं, जो उस समय देखनेमें न आती थीं। इनको देखकर उनका कौतूहल बहुत बढ़ जाता था। वे अपने विषयसे कभी उपेक्षा न करते थे; किन्तु अनुभव बढ़ाते जाते थे और प्राप्त वस्तुओंका मिलान करते चले जाते थे। बहुत वर्ष पीछे जब वे संगतराशीका काम छोड़ चुके, तब उन्होंने प्राचीन लाल बलुआ पत्थरके विषयमें एक अति मनोज्ञ पुस्तक प्रकाशित की, जिससे वे तुरंत ही भूगर्भशास्त्रवेत्ता प्रसिद्ध हो गये। उनकी पुस्तक वर्षोंके धीरतापूर्वक अनुभव और खोजका फल थी। उन्होंने अपने आत्मजीवनचरितमें नम्रतापूर्वक लिखा है—"इस विषयके सम्बन्धमें यदि मुझमें कोई गुण है, तो वह यह है कि मैंने धैर्यपूर्वक खोज की है और यह ऐसा गुण है जिससे हर एक मनुष्य, जो इच्छा करे, वही मेरी बराबरी कर सकता है अथवा मुझसे भी बढ़ सकता है। यदि धीरजके इस छोटेसे गुणको उचित उन्नति दी जाय तो इससे प्रतिभासे भी अधिक महत्त्वपूर्ण विचारोंका विकास हो सकता है।"

प्रसिद्ध अँगरेज भूगर्भविद्याविशारद जान ब्रौन भी पहले मिलरके समान संगतराश थे। वे गृहनिर्माणका काम निजी तौर पर करते थे और मितव्यय तथा परिश्रमसे इस काममें खूब निपुण हो गये थे। इस कामको करते हुए उनका ध्यान पृथ्वीमें दबे हुए पशुओंकी ठठरियोंकी ओर आकर्षित हुआ। उन्होंने उनका इकट्ठा करना आरम्भ कर दिया और बादमें उनका यह संग्रह इँग्लेंडका एक सर्वोत्तम संग्रह बन गया। उनकी खोजसे हाथियों और गैंडोंकी कुछ महत्त्वकी ठठरियाँ प्राप्त हुईं, जिनमेंसे अच्छी अच्छी उन्होंने अजायब घरमें रखवा दीं। अपने जीवनके अंतिम भागमें उन्होंने उन अत्यंत छोटे छोटे कीड़ोंके विषयमें—जो खड़ियामें मिलते हैं—विशेष ध्यान दिया और उनके विषयमें अनेक मनोरंजक बातोंका पता लगाया। उन्होंने परोपकारी, सुखमय और आदरणीय जीवन व्यतीत किया; उनका देहान्त अस्सी वर्षकी अवस्थामें हुआ।

भूगोल-विद्याप्रकाशक सभाके सभापति सर रोडेरिक मर्चिसनको कुछ वर्ष हुए राबर्ट डीक नामक एक मनुष्य मिला जो एक भट्टे पर काम करता था; परन्तु भूगर्भविद्यामें खूब निपुण था। जब रोडेरिक मर्चिसन उससे भट्टे पर मिले, जहाँ वह ईंटें इत्यादि पकाकर अपनी गुजर किया करता था, तब उसने अपने ग्रामके सम्बन्धमें बहुतसी भूगर्भ तथा भूगोलविद्यासंबंधी बातें बतलाईं और उस समयके बने हुए नक्शोंमें त्रुटियाँ भी बताईं, जो उसने अवकाश मिलने पर ग्राममें घूम घूम कर मालूम की थीं। अधिक पूछने पर सर रोडेरिकको मालूम हुआ कि वह दीन मनुष्य केवल एक निपुण ईंटें पकानेवाला और भूगर्भविद्याविशारद ही नहीं है, किन्तु वनस्पतिशास्त्रका भी उच्च श्रेणीका जानकार है। सर रोडेरिकने कहा है कि "मैं यह जानकर बड़ा लज्जित हुआ कि भट्टा पकानेवाला वनस्पति शास्त्रमें मुझसे कहीं अधिक जानकारी रखता था। उसका ज्ञान मेरे ज्ञानसे दस गुना था और उसके संग्रहमें केवल बीस या तीस फूल ही संग्रह किये बिना रह गये थे। कुछ उसको औरोंसे मिले थे, और कुछ उसने अपने ग्राममें अपने परिश्रमसे इकट्ठे किये थे। ये नमूने अत्यंत सुन्दर रीतिसे व्यवस्थित थे और उन पर उनके वैज्ञानिक नाम लिखे थे।"

छठा अध्याय ।
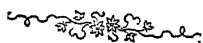
शिल्पकार ।

"यदि तुम किसी दूरकी चीजको महत्त्वपूर्ण समझ कर प्राप्त करो, परन्तु वह हाथमें आने पर महत्त्वहीन सिद्ध हो, तो और आगे बढ़ो; तारीफ तो चेष्टा करनेमें है, न कि सिद्धिमें।"
—आर. एस. मिलनीज ।

"विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः ।
प्रारभ्यमुत्तमजनाः न परित्यजन्ति ।"*—भर्तृहरि ।

जी तोड़कर लगातार परिश्रम किये बिना कुछ भी नहीं हो सकता। चाहे कला कौशल्यका काम हो चाहे और कोई काम हो; बिना कठिन परिश्रमके उसमें 'कीर्ति' नहीं मिल सकती। एक सुन्दर चित्र खींचने

* बार बार विघ्नोंके आने पर भी उत्तम पुरुष काम करना नहीं छोड़ते।

अथवा एक भव्य मूर्ति बनानेके कामको हँसी खेल मत समझो—ये यों ही संयोगसे नहीं बन जाते। चित्रकार अपनी कूँची या कलमसे और मूर्तिकार अपनी छैनीसे जो सुन्दर आकार बनाता है उसमें यद्यपि उसकी स्वाभाविक बुद्धि या प्रतिभा भी कारण है तथापि इसके साथ ही उसे उसके अखंड उद्योग, अश्रान्त परिश्रम और निरन्तरके अभ्यास या मुहावरेका फल समझना चाहिए।

सर जौशुआ रेनाल्ड्सको उद्योगकी शक्ति पर बहुत बड़ा विश्वास था। उनका मत था कि " शिल्पचातुर्य अथवा कलाकुशलता चाहे जैसी प्रतिभा-लब्ध, दैवलब्ध या रुचिलब्ध हो सीखनेसे अवश्य आसकती है।" अपने एक मित्रको उन्होंने लिखा था कि " जो कोई चित्रकारी अथवा किसी और शिल्पमें निपुण होना चाहता है उसको प्रातःकाल उठनेके समयसे रात्रिको सोनेके समयतक अपना संपूर्ण ध्यान उसी एक विषय पर लगाये रखना चाहिए। एक दूसरे अवसर पर उन्होंने कहा था कि " जो निपुण होना चाहते हैं उनको अपने काममें जैसे बने तैसे, सबेरे, दोपहरको, रात्रिको इस तरह आठों पहर चौंसठों घड़ी लगे रहना चाहिए। तब उनको मालूम होगा कि वह खिलवाड़ नहीं है, किन्तु बहुत ही कठिन परिश्रम है।" यद्यपि शिल्पमें तथा कलाकौशलमें सर्वोच्च श्रेणीकी निपुणता प्राप्त करनेके लिए उसमें श्रमपूर्वक लगे रहना निःसंदेह अत्यंत आवश्यक है, तथापि यह अवश्य मानना पड़ेगा कि स्वाभाविक प्रतिभाके बिना कोरा श्रम किसी मनुष्यको शिल्पकार नहीं बना सकता, चाहे वह कितनी ही अधिक मात्रामें, कितनी ही उचित रीतिसे क्यों न की जाय। प्रतिभा स्वाभाविक होती है, परन्तु उसका विकाश आत्मशिक्षाकी सहायतासे या स्वतःलब्ध शिक्षासे होता है जो पाठशालाकी शिक्षासे अधिक महत्त्वकी चीज है।

कई बड़े बड़े शिल्पकारोंने निर्धनता और अनेक बाधाओंका सामना करके अपनी उन्नति की है। ऐसे उदाहरणोंकी संसारमें कमी नहीं है। टिंटेरिटो रँगरेज था। सालवेटर रोजा डाँकुओंके साथ रहता था। गिअट्टो किसा-नका लड़का था। केवींडोनको उसके पिताने घरसे निकाल दिया था। इस तरहके और भी बहुतसे प्रसिद्ध शिल्पकार घोर कठिनाइयोंमें प्रचंड अध्ययन और श्रम करके अपनी कीर्तिको अमर कर गये हैं।

इँग्लेंडके अत्यंत प्रसिद्ध शिल्पकार भी ऐसी स्थितिमें पैदा हुए हैं जो शिल्पविषयक प्रतिभाकी उन्नतिके लिए बिलकुल सामान्य थी। गेन्सबरो और बेकनके पिता जुलाहे थे। वैरी एक मल्लाहका लड़का था। रोमने और जोन्स बढ़ई थे। नार्थकोट घड़ीसाज था। जैक्सन दर्जी था। टर्नर नाईका लड़का था।

इन मनुष्योंने सौभाग्य अथवा दैवसे नहीं; किन्तु उद्योग और परिश्रमसे गौरव पाया है। यद्यपि इनमेंसे कुछने धन प्राप्त किया, तो भी यही उनका एक मात्र लक्ष्य न था, केवल धनका प्रेम ही उनको प्रारम्भिक जीवनमें आत्मसंयम और धुन बाँधकर परिश्रम करनेमें स्थिर न रख सकता। काम करनेका आनंद ही उनके लिए सर्वोत्तम फल था; धन जो उन्हें मिला वह तो केवल संयोगवश मिल गया। बहुतसे शिल्पकार अपने काममें मग्न रहना पसंद करते थे, और अपनी चीजोंके दामोंमें लोगोंसे झिखझिख करना पसंद न करते थे। स्पेंगनोलैट्टोने धनवान् होनेके सब साधन प्राप्त करके भी उनको छोड़ दिया और निर्धन होकर परिश्रम करना पसंद किया। जब माइकल ऐंजीलोसे एक चित्रके संबंधमें, जो एक चित्रकारने बड़े परिश्रमसे अच्छी रकम कमानेके लिए तैयार किया था, पूछा गया, तो उसने कहा कि जब तक वह धनाढ्य होनेकी इतनी अधिक तृष्णा रक्खेगा तब तक मैं समझता हूँ कि वह निर्धन ही रहेगा।"

सर जोशुआ रेनाल्ड्सके समान, माइकल ऐंजीलोकी भी उद्योगशक्तिमें बड़ी श्रद्धा थी। उसका विश्वास था कि यदि हाथ मनकी आज्ञा अनुसार ठीक ठीक काम करें तो मस्तकमें चाहे जैसी विलक्षण कल्पना उठे, उसकी हूबहू प्रतिमा पत्थरपर खींची जा सकती है। वह स्वयं बिना थकावटके परिश्रम करनेवाला था; और अपने सहयोगियोंकी अपेक्षा अधिक समय तक अध्ययन कर सकता था। इसका कारण यह था कि वह बहुत ही साधारण भोजन करता था। जब वह अपने काममें लगा रहता था, तब उसे दिनमें थोड़ी रोटी और शराबकी आवश्यकता होती थी। वह बहुत करके आधी रातसे अपना काम शुरू कर देता था! रातको वह अपनी टोपीमें मोमबत्ती लगा कर काम किया करता था। कभी कभी वह इतना थक जाता था कि उससे कपड़े तक न उतारे जाते थे—कपड़े पहने ही सो रहता था और ज्योंही

नींद लेकर ताजा हो जाता था, फिर काममें लग जाता था। उसके पास एक बूढ़े आदमीकी मूर्ति थी। वह बूढ़ा आदमी एक गाड़ीमें रक्खा था और गाड़ीके ऊपर एक बालूकी घड़ी थी, जिसपर यह लेख था–" अभी मैं सीख रहा हूँ "।

टिशियन भी बिनाथके काम करनेवाला था। उसने एक राजाको एक मूर्ति बनाकर भेजी थी जिसके बनानेमें उसे हर रोज काम करनेपर भी सात वर्ष लगे थे। एक और मूर्ति उसने आठ वर्षमें बनाई थी। उसको अपनी सर्वोत्तम मूर्तियाँ बनानेके लिए जो धैर्यपूर्वक परिश्रम और चिरकालिक अभ्यास करना पड़ा उसका अनुमान बहुत कम लोग कर सकते हैं। एक रईसने उसकी बनाई हुई एक प्रतिमाका मूल्य पूछ कर उससे कहा कि " तुम इस प्रतिमाके पाँचसौ रुपये माँगते हो, जिसके बनानेमें तुम्हें केवल दसदिन लगे हैं। " उसने उत्तर दिया, " महाशय, आप यह नहीं जानते कि मैंने इस प्रतिमाको दस दिनमें बनाना तीस वर्षके कठिन परिश्रमसे सीखा है। " एक चित्रकारने एक चित्रको चालीस बार बनाकर रद कर दिया तब कहीं एकतालीसवें बार वह उसकी तबीयतके माफिक बन सका। इस तरह निरंतर दुहराना शिल्पमें सफलता पानेका एक प्रधान मार्ग है। बारबार प्रयत्न करना, असफल होनेपर भी परिश्रम करनेसे विरक्त न होना, जहाँसे भूल हो वहाँसे फिर गिनना शुरू कर देना, यह बड़ा ही बहुमूल्य गुण है। जिस मनुष्यमें यह गुण होता है वह संसारसागरमें सबसे आगे निकल जाता है और इसीकी प्रधानतासे कलाकुशलता आती है।

चाहे दैवने कितनी ही प्रतिभा दे दी हो, तो भी शिल्प-विद्या चिरकालके और निरंतरके परिश्रमसे ही प्राप्त होती है। बहुतसे शिल्पकार अल्पकालमें ही प्रौढ़ता प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु बिना परिश्रमके उनका यह गुण कुछ काम नहीं देता। इस विषयमें वैस्टकी कथा प्रसिद्ध है। जब वह केवल सात वर्षका था तब अपनी ज्येष्ठा भगिनीके सोते हुए बच्चेके सौन्दर्यको देखकर चकित हो गया और दौड़कर एक कागज ले आया। उसने तुरंत ही लाल और काली स्याहीसे उस बच्चेका एक चित्र तैयार कर लिया। इस छोटीसी घटनाने दिखा दिया कि वह शिल्पकार बननेकी योग्यता रखता है और उसको इस काममेंसे उठाकर दूसरे काममें लगाना असंभव है। बहुत थोड़ी उम्रसे उसकी प्रशंसा होने

लगी इस कारण वह अभिमानी होकर बिगड़ने लगा। यदि ऐसा न हुआ होता, तो वह और भी बड़ा चित्रकार बनता। उसकी ख्याति, यद्यपि अच्छी हो गई थी, तथापि वह अध्ययन, प्रयत्न और चेष्टासे प्राप्त न हुई थी।

जब **रिचर्ड विल्सन** बालक था, तब अपने पिताके घरकी दीवारोंपर जली हुई लकड़ीसे मनुष्यों और पशुओंकी शकलें बनाया करता था। उसने पहले अपना ध्यान मनुष्यों और पशुओंकी आकृति बनानेमें लगाया; परन्तु जब एक बार वह अपने एक मित्रके घरपर गया और उसके बाहर आनेकी बाट देखते देखते तंग आ गया तब अपने मित्रके घरकी खिड़कीके सामनेके दृश्यका चित्र खींचने लगा। जब उसका मित्र आया, तो वह चित्रको देखकर मोहित हो गया। उसने विल्सनसे पूछा, " क्या तुमने प्राकृतिक दृश्योंके चित्र खींचनेका अभ्यास किया है ?" विल्सनने उत्तर दिया " नहीं"। इस पर उसके मित्रने कहा, तो मैं तुमको सम्मति देता हूँ कि प्रयत्न करो; तुम्हें इस कार्यमें अवश्यमेव अच्छी सफलता प्राप्त होगी।" विल्सनने इस सम्मतिको स्वीकार किया, अध्ययन किया, घोर परिश्रम किया और इससे वह अँगरजोंमें सृष्टिसौन्दर्यको चित्रित करनेवाला सबसे पहिला चित्रकार हुआ।

सर जौशुआ रेनाल्ड्स बाल्यकालमें अपना पाठ भूल जाता था और कुछ न कुछ चित्रित करनेमें मग्न रहता था। इसी कारण उसके पिता उसको बुरा भला कहा करते थे। वे अपने पुत्रको डाक्टरी सिखाना चाहते थे, परन्तु शिल्पके प्रति उसकी प्रबल रुचि रुक न सकी और वह चित्रकार बन गया। **गेन्सबरो**, जब पाठशालामें पढ़ते थे तब जंगलोंमें जाकर चित्र खींचा करते थे। केवल बारह वर्षकी अवस्थामें वे पक्के चित्रकार हो गये थे। उनकी निरीक्षण-शक्ति बड़ी तीव्र थी और वे परिश्रम भी खूब करते थे। किसी मनोहर दृश्यको एक बार देखकर वे उसे अपनी पेंसिलसे खींचे बिना न रहते थे। **एडवर्ड बर्ड**, जब केवल तीन चार वर्षके थे, तब कुर्सीपर चढ़कर घरकी दीवारोंपर चित्र खींचा करते थे और उन चित्रोंको सिपाही कहते थे। उनको रंगोंका एक बक्स मोल ले दिया गया और उनके पिताने–जो अपने पुत्रके चित्र बनानेके प्रेमको कार्यरूपमें परिणत करना चाहते थे–उनको एक बरतन बनानेवालेके यहाँ नौकरी रखा दिया। इस धंधेमेंसे वे धीरे धीरे आगे बढ़े और अपने अभ्यास तथा परिश्रमसे उन्नति करके बहुत बड़े आदमी बन गये।

शिल्पकार ।

भारतके प्रसिद्ध चित्रकार राजा रविवर्माको बाल्यकालमें संस्कृत पढ़ाना शुरू कराया गया था । परन्तु वे पढ़नेकी ओर ध्यान न देते थे और बहुधा दीवारोंपर हिन्दू देवताओंके चित्र बनाया करते थे। उनके चचा राजा राज-वर्मा भी अच्छे चित्रकार थे। वे एकबार एक चित्र बना रहे थे, जिसमें एक वृक्ष था। चित्रका कुछ अंश बनाकर वे किसी कामके लिए बाहर चले गये। इतनेहीमें रविवर्माने जाकर उस वृक्षपर एक तोता बना दिया। यद्यपि उस तोतेने चित्रको बिगाड़ ही दिया था, तो भी राजवर्माने बालकके उत्साहको गिरा देना अच्छा न समझा। उन्होंने उस चित्रको उस तोते सहित संपूर्ण कर दिया। जब रविवर्मा १४ वर्षके हुए तब अपने चचाके साथ ट्रावनकोरके राजासे भेट करनेके लिए गये। उस समय राजवर्माने ट्रावनकोर नरेशको अपने भतीजेका परिचय करा दिया और उसकी चित्रकारीकी प्रशंसा कर दी। राजासाहब बालकसे प्रसन्न हुए और उन्होंने उसको रंगोंका एक बक्स इना-ममें दिया।

इस बक्सने रविवर्मापर बड़ा प्रभाव डाला। उसको देखकर उन्होंने समझ लिया कि अब उन्हें अच्छे अच्छे रंग मिल सकेंगे और रंगोंको आपसमें मिला मिलाकर नये नये सुन्दर रंग बनाये जा सकेंगे। वर्षों तक वे इन रंगोंमें ही उलझे रहे। वे बड़े उद्योगशील थे। उनको चित्रकारीकी नियमपूर्वक शिक्षा कभी नहीं मिली। एक बार ट्रावनकोरके राजाने अपने कुटुम्बका एक यूरोपीय ढँगका चित्र बनवाना चाहा और इस कामके लिए उन्होंने चित्रकार 'थी-ओडोर जैनसैन' को यूरुपसे बुलवाया और उसने तेलसे चित्र बनाया। उस समय ट्रावनकोरमें यह बिलकुल नई बात थी। रविवर्माने जब यह देखा, तो उनका ध्यान इस नये ढँगकी ओर आकर्षित हुआ। उन्होंनें समझ लिया कि तेलसे चित्रका सौन्दर्य बहुत कुछ बढ़ाया जा सकता है। परन्तु यह काम सिखलाता कौन। उन्होंने जैनसैनसे प्रार्थना की, परन्तु किसी कारणसे उसने उन्हें सिखाना स्वीकार न किया। इससे रविवर्माको बहुत दुःख हुआ, परन्तु उन्होंने प्रकट न किया। रविवर्माको जैनसैनने केवल चित्र बनानेके समय देखने भर की आज्ञा दे दी। यदि इसको शिक्षा कहा जा सके तो रविवर्माने अपने समस्त जीवनमें सिर्फ यही शिक्षा पाई। इसके बाद ६–७ वर्ष तक वे अपना काम स्वयं सीखते रहे। कभी अपने काममें सफलमनोरथ होते थे

और कभी कभी असफल होते थे । उन्होंने रंगोंके भरनेमें बड़ा परिश्रम किया, परन्तु उनको उत्साहित करनेवाला कोई न था । सन् १८७३ में मिस्टर चिसहोम, जो मद्रासकी शिल्पशालाके अधिष्ठाता थे, ट्रावनकोरमें पधारे । रविवर्माके कामको देखकर और यह जानकर कि उन्होंने चित्रकारीकी शिक्षा किसी दूसरेसे नहीं किन्तु अपने आप प्राप्त की है—उनको बहुत आश्चर्य हुआ । उन्होंने यह सोचकर कि ‘ यदि रविवर्माका काम संसारको न दिखाया जायगा तो वह व्यर्थ जायगा ’ रविवर्मासे कहा कि मद्रासकी प्रदर्शनीके लिए तुम अच्छा चित्र तैयार करो । इधर ट्रावनकोरके महाराज रविवर्माकी योग्यताको जान चुके थे, इसलिए उन्होंने इस कामके लिए रविवर्माको यथेष्ट आर्थिक सहायता देना स्वीकार कर लिया । कई महीने परिश्रम करके रविवर्माने एक चित्र तैयार किया । यह चित्र एक नेर-महिलाका था जो अपने बालोंको चमेलीके फूलोंके हारसे गूँथ रही थी । चित्रने प्रदर्शनीकी शोभाको द्विगुणित कर दिया । उसकी बड़ी प्रशंसा हुई और रविवर्माको इसके उपलक्ष्यमें प्रदर्शनीकी ओरसे एक सुवर्णपदक भेट दिया गया । इससे उनका उत्साह बढ़ गया—उन्हें विश्वास हो गया कि मैं भी कुछ कर सकता हूँ । दूसरी बार उन्होंने एक तामिल-महिलाका चित्र बनाया। यह भी अच्छा बना और इसके उपलक्ष्यमें भी उन्हें एक पदक मिला । इसके बाद उन्होंने अपना ‘ शकुन्तला-पत्रलेखन ’ नामक प्रसिद्ध चित्र बनाया, जो लोगोंको बहुत ही पसन्द आया और मद्रासके गवर्नरने उसे अपने लिए खरीद लिया । अब उन्होंने पौराणिक चित्र बनाना शुरू कर दिया जिनके द्वारा हिन्दुओंके पौराणिक दृश्य लोगोंकी आँखोंके सामने सजीवसे होने लगे। इसी समय सर टी. माधवरावने उनका एक चित्र बड़ौदा-नरेशको दिखलाया । उसे देखकर महाराज बहुत ही प्रसन्न हुए । उन्होंने अपने राज्याभिषेकके अवसर पर रविवर्माको आमंत्रित किया और उनका बड़ा सत्कार किया । इसी तरह उनका परिचय मैसूरनरेशसे भी हो गया और अन्तमें वे भारतवर्षके अपने समयके सर्वोत्तम चित्रकार हो गये । भारतको उनके चित्रोंका अभिमान है । इस तरह एक साधारण बालक बिना किसीकी सहायता लिये अपने आप ही शिक्षा पाकर और निःसीम परिश्रम करके हमारे सामने एक उत्तम उदाहरण छोड़ गया । उनका अनुकरण करके यहाँके बाबू वामपाद वन्द्योपाध्याय आदि अनेक देशी चित्रकार उत्तम तैल-चित्र बनाने लगे हैं ।

वेंक्स नामका संगतराश उद्योग और धैर्यको कार्यसिद्धिका मूलमंत्र समझता था । वह स्वयं इस मंत्रकी आराधना करता था और दूसरोंको भी इसके अनुसार चलनेकी सम्मति देता था । वह बड़ा दयालु और प्रेमी पुरुष था, इस कारण अनेक उत्साही युवक उसके पास सम्मति और सहायता लेनेके लिए आते थे । एक बार एक लड़केने उसके घरका दरवाजा खटखटाया । जोरकी खटखटाहट सुनकर वेंक्सकी दासीको क्रोध आगया । उसने लड़केको खूब धमकाया और वहाँसे चले जानेके लिए कहा । इतनेमें शोर-गुल सुनकर वेंक्स स्वयं बाहर आगया । उसने देखा कि एक लड़का अपने चित्र लिये खड़ा है और दासी उसपर लाल-ताती हो रही है । पूछा, " लड़के मुझसे क्या काम है ?" उसने उत्तर दिया—" मैं आपके पास इस लिए आया हूँ कि आप कृपा करके मेरी सिफारिश कर दें और मुझे शिल्पविद्यालयमें चित्रविद्या सीखनेके लिए भरती करा दें ।" वेंक्सने लड़केसे कहा— " उक्त विद्यालयमें भरती होना सहज नहीं है । यह मेरे हाथकी बात भी नहीं है । पर तुम्हारे हाथमें जो चित्र हैं उन्हें तो मुझे दिखलाओ" । चित्रोंको अच्छी तरह देखकर वेंक्सने कहा-" लड़के, अभी उक्त विद्यालयमें भरती होनेके लिए बहुत समय चाहिए । इस समय घर जाओ और अपनी पाठशालाका अभ्यास जारी रक्खो । मैं समझता हूँ तुम इस चित्रको लगभग एक महीनेमें अधिक अच्छा बना लोगे, उस समय–तैयार हो जानेपर–मुझे यह दिखला जाना । लड़का घर चला गया और उस चित्रके तैयार करनेमें परिश्रम करने लगा । पहलेकी अपेक्षा दूनी मिहनतसे उसने यह चित्र तैयार किया और महीनेके अन्तमें वेंक्सको जाकर दिखाया । चित्र पहलेकी अपेक्षा अच्छा था; परन्तु वेंक्सने उसे फिर लौटा दिया और कह दिया कि " और भी परिश्रम करो और भी अभ्यास बढ़ाओ ।" एक सप्ताहके बाद लड़का फिर उसके घर गया । इस बार उसका चित्र बहुत अच्छा था । वेंक्सने कहा– " लड़के, प्रसन्न हो; साहस रख । यदि तू जीता रहा तो संसारमें अपना नाम कर जायगा ।" वेंक्सकी भविष्यद्वाणी पूरी उतरी । इस लड़केका नाम मुलरेडी था । यह बड़ा नामी चित्रकार हुआ ।

बैनवेनूटो सैलिनी नामका एक और प्रसिद्ध चित्रकार हो गया है । उसका जीवनचरित्र बड़ा ही विलक्षण है । वह केवल चित्रकार ही न था;

किन्तु सुनार, संगतराश, नक्काश, इमारतें बनानेकी विद्याका जाननेवाला और लेखक भी था। उसके पिता बाजा बजाना बहुत अच्छा जानते थे और इसी काम पर एक राजाके यहाँ नौकर थे। उनकी प्रबल इच्छा थी कि मेरा लड़का बाँसुरी बजानेमें निपुण हो जाय। परन्तु उनकी नौकरी छूट गई और इस कारण उन्हें अपनी इस इच्छासे हाथ धो लेना पड़ा। अब उन्होंने सैलिनीको एक सुनारके यहाँ काम सीखनेके लिए रख दिया। सैलिनीको शिल्पसे हार्दिक प्रेम था, इस कारण कुछ समय तक परिश्रम करनेसे वह एक चतुर सुनार बन गया। इतनेमें वह एक मारपीटके झगड़ेमें फँस गया और छह महीनेके लिए नगरसे निकाल दिया गया। तब इतने दिनों तक उसे एक और सुनारके यहाँ रहना पड़ा और उसके पास उसने सोनेके तरह तरहके काम और जवाहरातका जड़ाऊ काम करना भी सीख लिया।

सैलिनीके पिताकी वह इच्छा अभीतक बनी ही थी कि वह बाँसुरी बजाना सीखे, इस लिए सैलिनी उसके सीखनेमें भी कुछ समय लगाता था; परन्तु वास्तवमें उसे यह काम पसन्द न था। शिल्प-विद्याकी ओर ही उसकी विशेष अभिरुचि थी। जब वह फ्लोरेंस नगरमें लौट आया, तब उसने माइकल ऐंजीलो आदि प्रसिद्ध चित्रकारोंके चित्रोंको देखा और उनकी विशेषताओंपर गहरा विचार किया। इसी समय सोनेके काममें विशेष कुशलता प्राप्त करनेके लिए वह बिना सवारीके पैदल ही रोमनगरमें जाकर पहुँचा और वहाँ तरह तरहके हिम्मतके काम करने लगा। योग्यता सम्पादन कर चुकने पर वह फिर फ्लोरेंसमें लौट आया। अब वह बहुत ही प्रसिद्ध सुनार बन गया और उसके पास बहुत काम आने लगा। जितना ही वह चतुर था उतना ही चिड़चिड़ा और झगड़ालू था। वह रोज नये नये झगड़े खड़े कर लेता था और उनमें उसे कभी कभी अपनी जान बचाकर भागना पड़ता था। एक मामलेमें वह साधुका वेष रखकर भागा और फिर रोमनगरमें जा रहा।

अबकी बार रोममें उसका बड़ा सम्मान हुआ। धर्मगुरु पोपने उसे सुनारका काम करने और बाजा बजानेके लिए अपने यहाँ नौकर रख लिया। वह नामी नामी शिल्पियोंके ग्रन्थोंको पढ़कर और उनकी बनाई हुई चीजोंको देखकर अपनी उन्नति बराबर करता रहता था। वह जवाहरात जड़नेका काम

और सोना, चाँदी, पीतल आदि पर सबसे बढ़कर काम करता था। मीनेका, और मुहरछापों तथा सीपोंमें नक्काशीका काम भी वह करता था। ज्यों ही वह किसी सुनारके किसी काममें बड़ाई सुनता था, त्यों ही संकल्प कर लेता कि मैं उससे बढ़कर काम करूँगा। इस तरह वह किसी सुनारकी समानता पदक बनानेमें, किसीकी जिला करनेमें और किसीकी जवाहरात जड़नेके काममें करता था। वास्तवमें उसके व्यवसायका ऐसा कोई भी अंग न था जिसमें वह दूसरोंसे आगे बढ़नेकी इच्छा न रखता हो।

सैलिनीमें जो उमंग और उत्साह था, उसीके कारण वह इतना निपुण शिल्पकार हो गया। वह बड़ा परिश्रमी था; कुछ न कुछ काम निरन्तर ही किया करता था। सफर करनेके लिए वह हमेशा तैयार रहता था। वह कभी फ्लोरेंसमें रहता तो कभी रोमको चला जाता और वहाँसे मैंटुआ, रोम, नैपिल्समें घूम फिरकर फिर फ्लोरेंसमें लौट आता। वैनिस और पेरिसमें भी वह कभी कभी दिखलाई देता था। वह अपनी यात्रायें प्रायः घोड़ेपर ही करता था, इससे अपने साथ बहुतसा सामान नहीं ले जा सकता था। अतएव वह जहाँ जाता था वहाँ उसे अपने आवश्यक औजार स्वयं बनाना पड़ते थे। वह स्वयं ही अपने चित्रोंकी कल्पना करता था और स्वयं ही उन्हें चित्रित करता था। अपने हाथसे ही वह अंकित करता, खोदता, गलाता, और गढ़ता था। उसकी बनाई हुई प्रत्येक चीजमें उसकी प्रतिभाकी छाप लगी हुई है। उसे देखते ही यह मालूम हो जाता है कि उसमें सारी कारीगरी उसीकी है; ऐसा नहीं कि एक मनुष्यने उसका ढाँचा—रूपरेखा बनाई हो और दूसरेने उसी ढाँचेके अनुसार रचना की हो। छोटीसे छोटी चीज—कमरपट्टेका बकसुआ, बटन, मुहर आदि भी—उसके हाथोंमें आकर सुन्दर कारीगरीका नमूना हो जाती थी।

सैलिनी हस्तकौशल और शीघ्रताके लिए बहुत प्रसिद्ध था। एक सुनारकी लड़कीके एक फोड़ा हुआ था। उसे चीरनेके लिए एक डाक्टर उसके घर आया। सैलिनी भी वहीं खड़ा था। उसने देखा कि डाक्टरका औजार बेडौल और भद्दा है—उस समयके डाक्टरोंके औजार प्रायः ऐसे ही हुआ करते थे—तब सैलिनीने कहा, डाक्टर साहब, सिर्फ १५ मिनिटके लिए आप ठहर जाइए। मैं जबतक लौटकर न आऊँ तब तक आप नश्तर मत चलाइए। यह कह कर वह अपनी दूकानपर आया और उसी समय उसने सर्वोत्तम फौलादका एक

टुकड़ा लेकर एक नश्तर तयार कर लिया। निदान उसी नश्तरसे डाक्टरने उस लड़कीके फोड़ेको सफलतापूर्वक चीर दिया।

सैलिनीने अनेक उत्तमोत्तम मूर्तियाँ बनाई हैं। उनमेंसे यूनानी इन्द्रदेव (जुपिटर) की चाँदीकी मूर्ति बहुत ही प्रसिद्ध है। पर्सियस देवकी काँसेकी मूर्ति भी उसकी कीर्तिको बढ़ानेवाली है। यह मूर्ति उसने फ्लोरेंसके ठाकुर कास्मोके लिए बनाई थी।

जब उसने पर्सियसकी मूर्तिका पहला नमूना मोमका बनाकर ठाकुरसाहबको दिखलाया तब उन्होंने निश्चय रूपसे कह दिया कि इस नमूनेको काँसेमें ढाल देना असंभव है—काँसेमें इतनी बारीकी नहीं उठ सकती। यह सुनकर सैलिनीको जोश आ गया। उसने तत्काल ही संकल्प कर लिया कि मैं इसके बनानेका केवल प्रयत्न ही न करूँगा किन्तु इसे बनाकर ही छोड़ूँगा। पहले उसने मिट्टीकी मूर्ति तैयार की और उसे आगकी भट्टीमें देकर पका लिया। इसके बाद उसने उस पर मोम चढ़ाकर उसे ठीक वैसा ही बना लिया जैसी मूर्ति वह बनाना चाहता था। इस मोमके ऊपर उसने एक प्रकारकी मिट्टि चढ़ाई और फिर उस मूर्तिको भट्टीमें रख दिया। इससे मोम पिघल गया और मिट्टीके दोनों पर्त्तोंके बीचमें काँसा ढलनेकी पोली जगह हो गई। इस प्रकार उसने साँचा तैयार कर लिया, अब मूर्तिका ढालना बाकी रह गया।

जिस भट्टीमें यह मूर्ति ढलनेवाली थी उसके नीचे एक गढ़ा बनाया गया था। इस गढ़ेमें काँसेकी धातुयें रख दी गईं और उनका पिघला हुआ रस बारीक नलियोंके द्वारा साँचेकी पोलमें जानेका यत्न कर दिया गया।

धातु गलानेके लिए पहलेहीसे बहुतसा ईंधन इकट्ठा कर लिया गया था। भट्टीमें जब आग जलाई गई तब उसने इतना जोर दिखाया कि दूकानमें आग लगगई और छप्परका कुछ भाग जल गया। इसी समय आँधी आ गई और मेह भी बरसने लगा। इससे गर्मी कम हो गई और धातुयें न गल सकीं। सैलिनी घंटोंतक ईंधन पर ईंधन झोंकता रहा और आगको प्रज्वलित करता रहा, परन्तु जितनी आँच चाहिए उतनी नहीं पहुँच सकी। वह ऐसा थक गया और बीमार हो गया कि उसे अपने कार्यकी सिद्धिमें सन्देह होने लगा। उसने लाचार होकर इस कामको नौकरोंके सुपुर्द कर दिया और आप चार-

पाई पर पड़ रहा। कुछ लोग उसकी चारपाईके आसपास बैठे हुए इस दुःखमें सहानुभूति प्रकट कर रहे थे कि इसी समय एक नौकरने उसके कमरेमें आकर कहा—सब काम बिगड़ गया, उसका सुधरना कठिन जान पड़ता है। यह सुनते ही सैलिनीको जोश आ गया। बीमारीकी परवा न करके वह तुरन्त उठ खड़ा हुआ और भट्टीके पास चल दिया। वहाँ जाकर देखा कि आगके कम हो जानेसे धातु जम गई है।

एक पड़ौसीके यहाँसे उसने सूखी लकड़ियोंका ढेर उठवा मँगाया और उसका आगमें झोंकना शुरू कर दिया। आग फिर धधक उठी और धातु गलने लगी; परन्तु आँधी अब भी बड़े वेगसे चल रही थी और मेह भी बरस रहा था। आगकी लपटसे बचनेके लिए सैलिनीने कुछ मेजें और कुछ पुराने कपड़े मँगवाये जिनकी ओटमें खड़ा होकर वह लगातार लकड़ी झोंकने लगा और कभी लोहेकी छड़ोंसे तथा कभी लम्बे बाँसोंसे धातुको चलाने लगा। निदान धातु गल गई। इसी समय एक भयंकर आवाज हुई और सैलिनीकी आँखोंके सामनेसे एक ज्वालामय दीप्ति फिर गई। दुर्भाग्यसे भट्टीका ढँकना फट गया और धातु बहने लगी। यह देखकर कि धातु उचित वेगसे नहीं बहती है सैलिनी दौड़कर अपने रसोई घरमें गया और वहाँ उसे ताँबे और दस्तेके जितने वर्तन मिले—तरह तरहकी लगभग २०० रकाबियाँ, थालियाँ और देगचियाँ आदि—सब उठा लाया और उनको उसने भट्टीमें डाल दिया! निदान धातु यथेष्ट वेगसे बहने लगी और पर्सियसकी वह सुन्दर मूर्ति ढल गई। पाठकोंको याद होगा कि पैलिसीने भी इसी तरह अपने घरके असबा-बको भट्टीमें झोंक दिया था।

जान फ्लैक्समैन नामका एक और प्रसिद्ध शिल्पकार हो गया है। उसका पिता मिट्टीके साँचे बनाया करता था। फ्लैक्समैन बालकपनमें रोगी रहता था—उससे चलते फिरते न बनता था और अपने पिताकी दूकानमें तकियोंके सहारे बैठा रहता था। उसे पुस्तकें पढ़नेका तथा चित्र खींचनेका बड़ा शौक था। एक दिन वह एक पुस्तक पढ़ रहा था कि पादरी मैथ्यूज उसकी दूकान पर आया। उसने लड़केसे पुस्तकका नाम आदि पूछनेके बाद कहा—"यह पुस्तक तुम्हारे पढ़नेके योग्य नहीं है। मैं तुम्हें एक और पुस्तक दूँगा उसे पढ़ा करना।" दूसरे दिन उसने सुप्रसिद्ध कवि होमरका एक

वीररसपूर्ण काव्य लाकर उसे दे दिया। लड़का उसे बड़े चावसे पढ़ने लगा, उसने मन-ही-मन संकल्प किया कि मैं भी इन वीरोंके चित्र अंकित करनेका यत्न करूँगा।

जैसी सब युवकोंकी प्रथम चेष्टायें होती हैं वैसी ही फ्लैक्समैनकी रचनायें भी हुईं। जब वे एक चित्रकारको दिखाईं गईं तब उसने उनसे बड़ी नाक भौंह सिकोड़ी। परन्तु फ्लैक्समैन हटनेवाला न था; उसमें यथेष्ट उत्साह धैर्य था। उद्योगशील भी वह पूरा था। वह पुस्तकें पढ़ने और चित्र बनानेमें निरन्तर परिश्रम करता रहा। उसने चिनी मिट्टी, मोम और मिट्टीके खिलौने बनानेमें अपनी बालबुद्धिका उपयोग किया। उसके बनाये हुए बहुतसे खिलौने अबतक रक्खे हैं—इस लिए नहीं कि वे उत्तम हैं, बल्कि इस लिए कि प्रतिभाशील मनुष्योंके धैर्यपूर्वक किये हुए प्रारंभिक कार्य कैसे हुआ करते हैं, लोग यह देख सकें। वह बहुत दिनोंके बाद चलनेके योग्य हुआ और लकड़ी आदिके सहारेके बिना यहाँ वहाँ आनेजाने लगा।

पादरी मैथ्यूज बड़ा परोपकारी पुरुष था। उसने इसे अपने घर पर बुलाया। मैथ्यूजकी स्त्रीने इसे होमर और मिल्टनके काव्य समझाये और इसे इसकी स्वशिक्षा या आत्मावलम्बिनी शिक्षामें भी सहायता दी। ग्रीक और लैटिन भाषायें भी इसे सिखाई जाने लगीं। इस विषयके पाठ वह अपने घर याद करता था। धैर्य और अध्यवसायपूर्वक परिश्रम करनेके कारण चित्रविद्यामें भी उसने खूब उन्नति कर ली। वह इतना निपुण हो गया कि एक स्त्रीने उसे होमरकी रचनाओंके आधारपर छह नवीन चित्र बनानेका काम सौंपा। सबसे पहला काम उसे यही मिला था, इस कारण यह उसके जीवनकी बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटना थी। डाक्टरकी पहली फीस, वकीलका पहला मेहनताना, कानून बनानेवाली सभाके मेम्बरका पहला व्याख्यान, रङ्गमञ्चपर गायकका पहला गान, और लेखककी पहली पुस्तक जिस प्रकार बहुत ही स्मरणीय और जीवनकी बहुत ही महत्त्वपूर्ण घटना होती है, उसी तरह इस चित्रकारके लिए भी यह कार्य था। इस लिए उसने इसमें पूरा परिश्रम किया और उसे अच्छी सफलता हुई। चित्रोंकी खूब प्रशंसा हुई और पुरस्कार भी अच्छा मिला।

पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें फ्लैक्समैन सरकारी कलाभवन या रायल ऐकाडेमीमें भरती हो गया। यद्यपि वह औरोंसे अधिक मेल-जोल रखनेवाला न था, तथापि सारे विद्यार्थी उसे जान गये और उससे बड़ी बड़ी आशायें करने लगे। उनकी आशायें सफल भी जल्दी हुईं। पहले ही वर्ष उसे एक चाँदीका पदक मिला और दूसरे वर्ष वह सोनेका पदक प्राप्त करनेके लिए परिश्रम करने लगा। सभी लोगोंका यह विश्वास था कि सुवर्णपदक फ्लैक्समैनको ही मिलेगा; क्योंकि योग्यता और परिश्रममें उससे बढ़कर कोई न था। परन्तु इस बार उसे सफलता न हुई, वह पदक ऐसे विद्यार्थीको मिला जिसका कि फिर कभी नाम भी न सुन पड़ा। युवा फ्लैक्समैनकी यह असफलता उसके लिए उलटी लाभदायक सिद्ध हुई। क्योंकि परास्त होनेपर दृढसंकल्पी मनुष्य निराश नहीं होते, उनकी अन्तर्शक्तिकी उष्णता चोट खाकर और भी अधिक जोशसे बाहर निकल पड़ती है। उसने अपने पितासे कहा कि "मुझे समय दीजिए। अब मैं ऐसे ऐसे काम करूँगा कि जिनकी प्रशंसा करनेमें स्वयं रायल ऐकाडेमीको अभिमान होगा।" इसके बाद उसने दूना और चौगुना परिश्रम करना शुरू कर दिया। उसने कोई भी तदबीर उठा न रक्खी। चित्र बनानेका काम वह लगातार करने लगा और धीरे धीरे उसने बहुत अच्छी उन्नति कर ली। इसी बीचमें उसके पिताकी आर्थिक अवस्था बहुत खराब हो गई। मिट्टीके साँचोंके व्यापारसे उसका निर्वाह होना कठिन हो गया। युवा फ्लैक्समैन नहीं चाहता था कि मैं अपने चित्रविद्याके परिश्रमको कुछ कम करूँ; परन्तु उसने हृदयको दृढ रक्खा और स्वार्थत्याग करके अपने अभ्यासके समयको कम करके पिताके काममें सहायता देना शुरू कर दिया। उसने होमरके काव्यको फेंक दिया और उसके बदले अपने हाथमें कन्नी ले ली। "मेरे पिताका और मेरे सारे कुटुम्बका पोषण जिस व्यापारसे हो, वह मुझे खुशीसे करना चाहिए; इस बातकी चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं कि वह व्यापार कितनी हलकी किस्मका है। जैसे बने तैसे दरिद्रताको पास न फटकने देना ही मेरा काम है।" व्यापारके सम्बन्धमें वह अकसर यही कहा करता था। बहुत समय तक उसे इसी तरह अपना समय खोना पड़ा; परन्तु इससे उसे लाभ भी हुआ। वह स्थिरतापूर्वक काम करनेका आदी हो गया और उसमें धैर्यगुणकी वृद्धि हो गई। इस तरह मनोनिग्रह

करनेकी कसरत पहले तो उसे कठिन मालूम हुई होगी; परन्तु अन्तमें उसे उसमें लाभ बहुत हुआ।

सौभाग्यसे फ्लैक्समैनके चित्रचातुर्यकी बात जोजिया बेजवुडके कानों तक जा पहुँची। उसे चीनी मिट्टी और मिट्टीके बर्तनों पर अच्छे अच्छे चित्रोंके नमूने बनानेके लिए फ्लैक्समैन जैसे पुरुषकी बड़ी भारी जरूरत थी। उसने इस युवा चित्रकारको अपना सब काम सौंप दिया और यह बड़ी कुशलतासे उसे करने लगा। फ्लैक्समैन जैसे कुशल कारीगरको यद्यपि इस तरहका काम तुच्छ मालूम होता होगा; परन्तु वास्तवमें देखा जाय तो वह ऐसा न था। मामूली प्यालों, सुराहियों अथवा ऐसे ही अन्य छोटे बर्तनोंपर जो चित्रकार्य किया जाता है हमारी समझमें वही इस व्यापारका सच्चा काम करता है। क्योंकि जो बर्तन लोगोंके प्रतिदिनके काममें आते हैं, खाते-पीते उठते-बैठते हर समय जिनकी जरूरत पड़ती है, उनके ऊपरके चित्र लोगोंके लिए इस विद्याकी शिक्षाके साधन बन जाते हैं; इतना ही नहीं बल्कि उनकी निजी सुधारकी शिक्षामें भी वे बहुमूल्य सहायता देनेवाले हो जाते हैं। जिस शिल्पकारको अपनी उन्नतिकी बहुत बड़ी आकांक्षा है वह कोई भारी बहुपरिश्रम-साध्य बहुमूल्य चीज बनानेकी अपेक्षा इन छोटी छोटी चीजोंको बनाकर अपने देशवासियोंको अधिक व्यावहारिक लाभ पहुँचा सकता है। अपनी इन कृतियोंसे वह अपने तमाम देशवासियोंको चुपचाप शिक्षा दे सकता है, जब कि बड़ी चीजको तो कोई एक धनाढ्य खरीद कर अपने दुर्लभ वस्तुसंग्रहमें रख लेता है जहाँ उसे जनसाधारण तो देख भी नहीं सकते। बेजवुडके समयके पहले यूरोपमें चीनी और मिट्टीके बर्तनोंके आकार और उनके ऊपरके चित्र बड़े भद्दे होते थे। इसलिए उसने इन दोनों बातोंमें उन्नति करनेका दृढ संकल्प कर लिया था। उसके इस संकल्पको कार्यमें परिणत करनेके लिए फ्लैक्समैनसे जितना बन सका उतना प्रयत्न किया। वह बेजवुडको समय समयपर अनेक प्रकारके मिट्टीके बर्तनोंके नमूने और नक्शे बनाकर देता रहा जो वह प्राचीन काव्यों और इतिहासोंके आधार पर तैयार करता था। उनमेंसे बहुतसे अब भी मौजूद हैं जो सौन्दर्य और सादगीमें उसके बादमें बनाये हुए संगमरमरके नमूनोंके समान हैं। इट्रूरियावालोंके प्रसिद्ध बर्तन जिनके नमूने सार्वजनिक अजायबघरोंमें और प्राचीन पदार्थसंग्रहकर्ताओंके घरोंमें

मिल गये थे—उसके लिए आकारके सर्वोत्तम नमूने थे और उन्हें वह अपनी बुद्धिसे और भी सुन्दर बना लेता था। यूनानकी राजधानी एथेन्सके विषयमें उसी समय एक पुस्तक प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तकमें उसे यूनानी बर्तनोंके असली नमूनोंके चित्र मिले और उनमेंसे सर्वोत्तम नमूनोंका अनुकरण करके उसने सुन्दर सुन्दर आकारोंके बर्तन बनाये और उनपर तरह तरहके दर्शनीय चित्र बनाये। अब फ्लैक्समैनने समझा कि मैं बड़ा भारी कार्य कर रहा हूँ और एक सार्वजनिक शिक्षाका प्रचारक बन गया हूँ। वह अपनी पिछली उम्रमें अपने इस परिश्रमका अभिमानके साथ वर्णन किया करता था कि मुझे इससे सौन्दर्यप्रेमकी शिक्षा मिली, उसपर मेरी रुचि बढ़ी, जनसाधारणमें चित्रकलाका प्रेम बढ़ा, मुझे धन मिला और मेरे शुभेच्छुक वेजवुडके व्यापारकी बढ़वारी हुई।

सन् १७८२ ईस्वीमें अपनी २७ वर्षकी उम्रमें उसने अपने पिताका आश्रय छोड़ दिया और लन्दनमें एक घर और एक कमरा काम करनेके लिए किरायेपर लेकर रहने लगा। इसी समय उसने अपनी शादी भी कर ली। उसकी स्त्रीका नाम एन डेनमैन था। वह एक हँसमुख, जोशीली और उदारहृदयकी स्त्री थी। वह समझता था कि उसके साथ विवाह करनेसे मैं और अधिक उत्साहके साथ काम कर सकूँगा। क्योंकि उसके समान उसकी स्त्रीको भी काव्य और शिल्पका शौक था। इसके सिवाय वह अपने पतिकी प्रतिभाकी प्रशंसा बड़ी जोशीली भाषामें किया करती थी।

उस समयका प्रसिद्ध चित्रकार सर जोशुआ रेनाल्ड अविवाहित था। एक दिन फ्लैक्समैनकी उससे रास्तेमें भेट हो गई वह बोला, "फ्लैक्समैन, मैंने सुना है कि तुमने शादी कर ली है। यदि यह सच है तो अब तुम चित्रविद्यामें उन्नति करनेकी आशा छोड़ देना।" यह सुनकर फ्लैक्समैन सीधा घर गया और अपनी पत्नीसे बोला—"एन, मेरी चित्रविद्याकी उन्नति तो बस हो चुकी!" पत्नीने पूछा, "यह कैसे? मुझे साफ शब्दोंमें समझाओ।" तब फ्लैक्समैनने सर जोशुआ रेनाल्डने जो कुछ कहा था वह अपनी स्त्रीको सुना दिया। रेनाल्ड कहा करता था कि यदि विद्यार्थी निपुण होना चाहते हैं तो उन्हें अपनी सारी मानसिक शक्तियोंको, जागनेके समयसे सोनेके समय तक अपने शिल्पपर ही लगा देना चाहिए और कोई मनुष्य तब तक नामी शिल्प-

कार नहीं हो सकता जब तक कि वह रोम और फ्लोरेंस नगरोंमें जाकर माइ-कल ऐंजीलो आदिकी बनाई हुई अनमोल वस्तुओंको न देख ले। रेनाल्डके इन सिद्धान्तोंको सभी जानते थे। इनका जिक्र करके फ्लैक्समैनने कहा "और मेरी इच्छा नामी शिल्पकार होनेकी है।" पत्नीने कहा—"आप नामी शिल्प-कार अवश्य बनेंगे और रोमनगर भी जल्द देखेंगे।" पतिने पूछा, "परन्तु यह कैसे हो सकता है? मेरी तो आर्थिक अवस्था इतनी अच्छी नहीं है।" पत्नीने कहा, "काम करो और मितव्ययी बनो। मैं इसमें हर तरह सहा-यता देनेके लिए तैयार हूँ। मैं यह नहीं चाहती—कोई यह न कहे कि एनने जान फ्लैक्समैनकी चित्रविद्यामें उन्नति न होने दी।" इसके बाद उन दोनोंने उचित धन जमा हो जानेपर रोम जानेका पक्का विचार कर लिया और फ्लैक्समैनने कहा, "मैं रोम जाऊँगा और रेनाल्डको दिखलाऊँगा कि ब्याह पुरुषकी हानिके लिए नहीं किन्तु लाभके लिए होता है; प्यारी एन, तुम मेरे साथ चलना।"

इस प्रेमी जोड़ेने अपने साधारण घरमें पाँच वर्ष धैर्य और आनन्दके साथ व्यतीत कर दिये; परन्तु रोम जानेकी बात उनके सामनेसे कभी एक घड़ी भरके लिए भी दूर न हुई। उनका एक पैसा भी आवश्यक कार्योंको छोड़कर निरर्थक खर्च न होता था। अपने संकल्पका उन्होंने किसीसे जिक्र भी न किया। रायल ऐकाडेमीसे भी उन्होंने सहायता न माँगी; वे अपने धैर्य, परिश्रम और संकल्पपर ही अवलम्बित रहे। इस बीचमें फ्लैक्समैनने बहुत ही थोड़े चित्र बनाकर बेचे। नवीन कल्पित चित्रोंके लिए संगमरमर चाहिए; परन्तु उसके पास इतना द्रव्य न था कि जिससे संगमरमर खरीद सके। इस लिए उसके पास जो कीर्तिस्तंभ बनानेके आर्डर हमेशा आते थे, उन्हें ही बनाकर वह अपना निर्वाह करता था। इस समय भी वह बेजवुडका काम किया करता था; क्योंकि वह मजदूरीका धन हाथोंहाथ दे देता था। गरज यह कि उसकी योग्यता दिनोंदिन बढ़ती गई और वह सुख आशा और उमंगसे परिपूर्ण होता गया। उसकी प्रतिष्ठा भी दिनपर दिन बढ़ती गई। वहाँके लोग उसका यथेष्ट आदर करने लगे और अपने तमाम काम उसीको देने लगे।

जब फ्लैक्समैन काफी रुपया जमा कर चुका तब अपनी पत्नी सहित रोमको रवाना हो गया। वहाँ पहुँचकर वह परिश्रमपूर्वक अभ्यास करने

लगा और अन्य निर्धन शिल्पकारोंके समान, प्राचीन कारीगरीकी नकलें बना-बनाकर अपनी गुजर करने लगा। वहाँ जितने अँगरेज यात्री आते थे, वे सब इसीको पूछते हुए आते थे और जो कुछ काम बनवाना होता था इसीसे बनवाते थे। उसी समय उसने होमर आदि कवियोंके ग्रन्थोंके आधारपर अनेक सुन्दर सुन्दर चित्र बनाये और उन्हें बहुत ही सस्ते दामोंपर बेचा। उसे प्रत्येक चित्रका मूल्य लगभग १२) रु० मिलता था। परन्तु वह केवल रुपयोंके ही लिए ही नहीं, रुपयोंके और अपनी कलाको उन्नत करनेके लिए चित्र बनाता था। अब उसके चित्रोंपर लोग मुग्ध होने लगे और उसके आश्रयदाता बढ़ने लगे। इसी समय उसने कई बड़े बड़े आदमियोंकी फरमाइशपर 'कामदेव' 'अरुण' आदिके प्रसिद्ध चित्र बनाये। वह अपने घर लौटनेकी तैयारी कर रहा था कि इसी समय फ्लोरेंस और करांराकी कला-सभाओंने उसे अपना मेम्बर बना लिया।

उसकी कीर्ति लन्दनमें उससे भी पहले पहुँच गई थी, इस कारण उसे वहाँ पहुँचते ही बहुतसा काम मिल गया। उसने लार्ड मैन्सफील्डकी याद-गारमें उनकी मूर्ति बनाई जो वेस्ट मिनिस्टरमें आज भी बड़ी शानके साथ खड़ी है और फ्लैक्समैनकी कीर्तिको प्रसिद्ध कर रही है। उस समयके सबसे प्रसिद्ध शिल्पी बेंक्सने इस मूर्तिको देखकर कहा था "यह छोटा मनुष्य तो हम सबसे बढ़ गया!"

जब रायल एकाडेमीके सभासदोंने फ्लैक्समैनके आनेका हाल सुना और उसकी बनाई हुई मैन्सफील्डकी मूर्ति देखी, तब उन्होंने उसे बड़े आदरके साथ सभासद बना लिया और वह एक प्रख्यात पुरुष बन गया। वह छोटासा रोगी लड़का—जिसने साँचे बेचनेवालेकी दूकानमें चित्र बनानेका प्रारंभ किया था—अब कलाकौशल्यका आचार्य समझा जाने लगा और रायल-एकाडेमीका शिल्पशिक्षक नियत कर दिया गया! उससे बढ़कर और कोई इस उच्चपदका अधिकारी न हो सकता था। क्योंकि उसने अनेक प्रकारके संकटोंके सामने कमर कसकर केवल अपने ही बलसे उनपर विजय प्राप्त की थी। ऐसा मनुष्य जैसी अच्छी शिक्षा दे सकता है वैसी दूसरोंसे नहीं दी जा सकती।

फ्लैक्समैनने बहुत वर्षों तक सुख और शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत किया बुढ़ापेमें उसकी प्यारी स्त्री चल बसी, जिसका उसे बड़ा दुःख हुआ। इसके बाद वह और भी कई वर्ष जीता रहा और इस बीचमें उसने अपने दे सबसे अधिक सुन्दर और भावपूर्ण चित्र बनाये।

बहुतसे शिल्पकारोंको सफलता प्राप्त करनेके पहले बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़े हैं जिनसे उनके साहस और सहनशीलतादि गुणोंका पूरा पूरा परिचय मिलता है। मार्टिनको अपने जीवनमें बहुत ही असह्य कष्ट सहने पड़े थे जब वह अपना पहला बड़ा चित्र तैयार कर रहा था, तब उसपर कई बार भूखों मरनेतककी नौबत आ गई थी। कहते हैं कि एक बार उसके पास केवल एक रुपया रह गया था। इसे उसने उसकी चमकके कारण रख छोड़ा था। इस रुपयेको लेकर वह एक रोटीवालेकी दूकान पर गया और एक रोटी मोल लेकर जब वह जाने लगा तब दूकानदारने उससे वह रोटी छीन ली और वह रुपया उस चित्रकारके सिरमें फेंककर मारा! इस तरह उस चमकदार रुपयेने उसे जरूरतके वक्त धोखा दिया—वह खोटा निकला। भूखा चित्रकार घर आया और अपने सन्दूकको झाड़कर देखने लगा कि उसमें कोई दो चार दिनका लूखा सूखा रोटीका टुकड़ा मिल जाय तो भूख कुछ शान्त हो जाय; पर खेद कि वह भी न मिला। मार्टिनमें उत्साहकी बड़ी ही जयशालिनी शक्ति थी। वह अपना काम वैसे ही उद्योगके साथ करता रहा। उसमें काम करते रहने और प्रतीक्षा करते रहनेका यथेष्ट बल था। जब उसका यह चित्र बनकर तैयार हो गया और लोगोंने उसे देखा, तो उसकी बड़ी ही प्रसिद्धि हुई। और और प्रसिद्ध चित्रकारोंके समान उसका जीवन भी यही शिक्षा देता है कि परिस्थितियाँ चाहे जैसी बुरी हों; परन्तु प्रतिभा, परिश्रम और उद्योगकी सहायतासे एक न एक दिन अवश्य सफलता होती है। गुणी मनुष्यको अन्तमें अवश्य ही ख्याति मिलती है चाहे वह देरमें ही मिले।

जब तक शिल्पकार स्वयं अपने काममें चित्त नहीं लगाता है तब तक पाठशालाकी उत्तमसे उत्तम शिक्षा और शासन उसको शिल्पकार नहीं बना सकते। उसको अपनी शिक्षा आप ही करना चाहिए। स्वशिक्षाके बिना कुछ नहीं हो सकता। जब पुगिन अपने पिताके पास रहकर घर बनानेकी कलामें

कुशल हो गया, तब उसे मालूम हुआ कि मैंने अभी बहुत ही कम सीखा है; मुझे फिर शुरूसे सीखना चाहिए और परिश्रम उठाना चाहिए। वह उसी समय एक थिएटरमें बढ़ईका काम करने लगा और कुछ समय तक काम करते करते उसमें कुशल हो गया। उसकी इस कामकी ओर रुचि भी बढ़ गई। इसके बाद वह एक जहाजपर काम करने लगा और साथ ही साथ व्यापार भी करता रहा। व्यापारमें उसे अच्छा लाभ हुआ। जहाजका काम करते समय वह हर मौकेपर उतर पड़ता था और प्राचीन इमारतोंके चित्र बनाता था। बादमें उसने इस कामके लिए यूरोपके कई देशोंकी यात्रा की और वह बहुतसे चित्रोंका संग्रह करके अपने देशको लौट आया। इस तरह निपुणता और कीर्ति प्राप्त करनेके लिए उसने बड़ा परिश्रम किया और अन्तमें उसे अच्छी सफलता हुई।

सातवाँ अध्याय।

उत्साह और साहस।

"असमर्थ हैं किस भाँति हम निज धर्मका पालन करें!
निज दीन दुर्विध बान्धवोंका दुःख हम कैसे हरें।"
ऐसे वचन मुखसे कभी भी हम निकालेंगे नहीं,
कर हैं हमारे क्यों भला कर्तव्य पालेंगे नहीं॥ १॥
संसारमें ऐसी न कोई वस्तु दुर्लभ है सही,
उद्योग करके भी जिसे हम प्राप्त कर सकते नहीं।
अपना अनुद्यम ही हमारी हीनताका हेतु है,
दुर्भाग्य का, दौर्बल्यका दुख दीनताका हेतु है॥ २ "॥

—गोपालशरण सिंह।

उसने जो काम शुरू किया वह एकाग्रचित्त होकर किया और वह सफल-मनोरथ हुआ।

श्रीरामचन्द्र, युधिष्ठिर, अर्जुन इत्यादि महात्माओंके चरितों पर हम फूले नहीं समाते। अनेक संकटोंका सामना करके उन्होंने अपने उत्साह और वीरतासे क्या क्या किया, यह हमसे छिपा नहीं है। यहाँपर

यह कह देना काफी है कि आर्य्यजातिका प्राचीन इतिहास उत्साह और वीरताके उदाहरणोंसे भरा पड़ा है । परन्तु अब वही आर्य्यजाति उत्साहशून्य हो गई है । अँगरेज इत्यादि जातियोंमें उत्साहकी मात्रा बहुत बढ़ी हुई है और यही गुण उनकी उन्नतिका कारण है । उत्साह और साहसकी कमी ही हमारी हीनताका मुख्य कारण है ।

अपने उत्साहको बढ़ाते रहना बहुत जरूरी है । सच्चरित्रका आधार इसी बात पर है कि हम अच्छे कामोंके करनेकी प्रतिज्ञा करें । उत्साह मनुष्यको बड़ी बड़ी मुसीबतोंमेंसे निकाल कर ऊपर उठाता है और उन्नतिके मार्गपर चलाता है । प्रतिभाशाली मनुष्यकी अपेक्षा उत्साही मनुष्य जियादा काम कर सकता है और उसे आधी भी निराशा तथा भयका सामना नहीं करना पड़ता । किसी काममें सफलता पानेके लिए सुयोग्यताकी उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी संकल्प शक्तिकी है—कोरी काम करनेकी शक्तिसे ही काम नहीं चलता, किन्तु उत्साहपूर्वक लगातार मेहनत करनेकी इच्छा भी होनी चाहिए । इच्छा करनेकी शक्ति मनुष्यके चरित्रबलका केन्द्र है, या यों कहिए कि वह मनुष्यका सर्वस्व है । इसी शक्तिसे आदमी काम करनेमें लगा रहता है और उसकी हरएक चेष्टामें जान सी आजाती है । सच्ची आशा उसीपर निर्भर है—और जीवनको सर्वोत्तम बनानेवाली चीज आशा ही है । निरुत्साही मनुष्यका दुनियाँमें कहीं भी ठिकाना नहीं । दिलकी मजबूतीके बराबर दूसरा सुख नहीं । चाहे मनुष्यका प्रयत्न निष्फल भी चला जाय, तो भी उसे इस बातसे संतोष मिलेगा कि मैंने यथाशक्ति प्रयत्न किया । जो मनुष्य धीरज रखकर मुसीबतोंको झेलता है, ईमानदारी पर आरूढ रहता है, और कठोर दुखमें पड़कर भी अपने उद्योगके बलपर खड़ा रहता है, उसे देखकर दीन मनुष्योंमें भी उत्साह और हर्ष पैदा होता है ।

परन्तु केवल इच्छा करते रहना युवकोंके मस्तकको रोगी बना देता है; इच्छाओंको शीघ्र ही कार्यरूपमें परिणत करना चाहिए । एक बार किसी अच्छे कामका इरादा करके उसे बिना हिचकिचाये हुए तुरन्त ही पूरा कर डालना चाहिए । जीवनकी अधिकांश परिस्थितियोंमें कष्ट और मेहनतको खुशीके साथ सह लेना चाहिए, क्योंकि ऐसा करनेसे अत्यंत उत्तम और उपयोगी शिक्षा मिलती है । जीवनमें शरीर अथवा मस्तककी मेहनतके

बिना कोई काम सिद्ध नहीं हो सकता। काम करनेसे कभी मुँह न मोड़ना चाहिए। उत्साहभंग होनेसे कुछ भी नहीं हो सकता।

उत्साहपूर्वक काम किये बिना कोई महत्त्वपूर्ण काम नहीं हो सकता। मनुष्यकी उन्नति मुख्य करके अपनी इच्छासे उद्योग करने और कठिनाईयोंका सामना करनेसे होती है और यह जानकर आश्चर्य होता है कि बहुधा वे बातें जो देखनेमें असंभव सी मालूम होती हैं ऐसा करनेसे संभव हो जाती हैं। तीव्र आशा स्वयं एक ऐसी चीज है कि वह संभव बातोंको प्रत्यक्ष कर दिखाती है; हमारी इच्छायें प्रायः उन कामोंकी सूचक होती हैं जिनको हम कर सकते हैं। परन्तु कायर और डावाँडोल मनुष्योंके साथ यह बात नहीं होती। वे हर एक कामको असंभव पाते हैं जिसका मुख्य कारण यही है कि वह काम उनको असंभव सा लगता है। फ्रांसका एक नौजवान अफसर अपने कमरेमें घूम घूम कर कहा करता था कि " मेरी प्रबल इच्छा है कि मैं फ्रांसका मार्शल और एक प्रसिद्ध सेनापति हो जाऊँ।" उसकी यह तीव्र इच्छा उसकी सफलतामें अग्रसर हुई सचमुच ही वह युवक एक सुप्रसिद्ध सेनापति हुआ और अन्तमें फ्रांसका मार्शल हो गया।

इच्छामें कुछ ऐसी शक्ति होती है कि उसके द्वारा मनुष्य जो होना चाहे वही हो सकता है, अथवा जो करना चाहे वही कर सकता है। एक संन्यासी कहा करता था कि " जैसा तुम चाहो वैसा ही बन सकते हो, क्योंकि इच्छा-शक्तिका दैवके साथ ऐसा घनिष्ट संबंध है कि हम सच्चे दिलसे जो कुछ होनेकी इच्छा करें वही हो सकते हैं। ऐसा कोई नहीं है जिसकी उत्कट इच्छा आज्ञाकारी, संतोषी, नम्र अथवा उदार होनेकी हो और वह वैसा ही न हो जाय।" कहते हैं कि एक समय एक बढ़ई एक न्यायाधीशके सिंहासनको कुछ अधिक सावधानीके साथ बना रहा था। लोगोंने उससे इसका कारण पूछा। उसने उत्तर दिया कि " मैं इसे अधिक सावधानीसे इस लिए बनाता हूँ कि यह उस समय तक खराब न हो जाय जब कि मैं स्वयं इस पर बैठूँ" और आश्चर्यकी बात है कि वह बढ़ई अन्तमें न्यायाधीश हुआ और उसी सिंहासनपर बैठा! भूदेव मुखोपाध्याय, मौलवी अब्दुल लतीफ और माइकल मधुसूदन दत्त हिन्दू कालिजमें सहपाठी थे। एक दिन तीनों बैठ कर इस विषयपर बातचीत करने लगे कि कौन क्या होना चाहता है। भूदे-

वने कहा कि " मैं जन्मभूमिकी सेवा करना चाहता हूं।" हुआ भी यही। उन्होंने अपने जीवनमें देशके कल्याणके लिए बहुत कुछ किया। मौलवी साहबने कहा " मैं उच्च राज-सम्मान चाहता हूँ।" अंतमें वे भूपाल राज्यके दीवान हुए और 'नबाब बहादुर'की पदवीसे सम्मानित हुए। मधुसूदन-दत्तने कहा " मैं कवि होना चाहता हूँ।" बस यही हुआ। वे अनेक कविताओंके साथ मेघनाद बध नामक अपूर्व काव्यके रचयिता हुए। माधवराव पेशवाने मरतेसमय कहा कि " मेरी तीन इच्छायें मनहीमें रह गईं—एक तो मैं गिलजई जातिके लोगोंको परास्त करना चाहता था, दूसरे सुलतान हैदरअलीको नीचा दिखाना चाहता था और तीसरी बात यह है कि मैं अपना कर्ज चुकाना चाहता था।" नाना फड़नवीस वहाँ पर मौजूद थे। उन्होंने यह सुन कर प्रतिज्ञा की कि " इन तीनों बातोंको मैं पूरा करूँगा" और उन्होंने तीनों बातें कर डालीं!

" क ईप्सितार्थस्थिरनिश्चयं मनः
पयश्च निम्नाभिमुखं प्रतीपयेत् ॥"[1]

इच्छाकी स्वतंत्रताके विषयमें धर्मशास्त्रोंका चाहे जो सिद्धान्त हो, परन्तु यह हर एक आदमीका अनुभव है कि मनुष्य शुभाशुभ कामोंके चुननेमें स्वतंत्र है—वह उस तिनकेके समान नहीं है जो जल पर इस लिए डाल दिया जाता है कि वह उसके प्रवाहकी दिशा बतलावे; किन्तु उसमें तो ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा वह खूब तैर सकता है और लहरोंमें हाथ-पैर मार कर अपना स्वतंत्र रास्ता ग्रहण कर सकता है। हमारी इच्छाओंपर कोई अटल बंधन नहीं है। सब लोग अनुभव करते हैं और जानते हैं कि हमको काम करनेमें किसी तरहकी मजबूरी नहीं है। यदि हम इसके विरुद्ध समझ बैठें तो अच्छे काम करनेकी इच्छापर पानी फिर जाय। जीवनके सभी काम, उसके आन्तरिक नियम, समाजसंगठन, और सार्वजनिक कायदे-कानून सब इस व्यवहारिक विश्वास पर कायम हैं कि इच्छा स्वतंत्र है। अगर यह विश्वास जाता रहे तो जिम्मेदारीका नामोनिशान न रहे और शिक्षा, सीख, उपदेश, फटकार और संशोधनका कुछ असर ही न हो। क्योंकि जब हम अपनी इच्छाके अनु-

१. इष्ट वस्तुकी प्राप्तिके लिए दृढ़ संकल्प करनेवाले मनको और निम्नगामी जलकी चालको कौन रोक सकता है?

पार काम करनेमें स्वतंत्र ही नहीं तब किसी निश्चित मार्ग पर कैसे चल सकते हैं ? नियम किस कामके होते यदि सब लोगोंका यह विश्वास न होता कि मनुष्य उनका पालन कर सकते हैं और करते हैं ? क्षण क्षण पर हमारा अंतःकरण यही कहता है कि इच्छा स्वतंत्र है । इच्छा ही एक ऐसी चीज है जिसपर हमें पूरा अधिकार है और उसको शुभ या अशुभ मार्ग पर चलाना हमारे ऊपर पूर्णतया निर्भर है । हमारी आदतें अथवा हमारी इच्छायें हमारी स्वामिनी नहीं है किन्तु हम उनके स्वामी हैं । उनके फंदेमें फँसनेके समय भी हमारा अंतःकरण कहता है कि हम उनसे दूर भाग सकते हैं और अगर हम उनके स्वामी बननेकी प्रतिज्ञा करें, तो इस कामके लिए उतने ही दृढ़ संकल्पकी आवश्यकता है जितना हममें मौजूद है ।

एक विद्वान्ने एक बार एक नव युवकसे यह कहा था–"इस उम्रपर तुमको हर एक बात निश्चय कर लेनी चाहिए; नहीं तो तुम पीछे पछताओगे कि मैंने अपने पैरोंमें अपने आप कुल्हाड़ी मारी । इच्छा एक ऐसी चीज है जो अत्यन्त सुगमतासे हमारी आदतमें दाखिल हो जाती है। इस लिए दृढ़ इच्छा करना सीखो और उस पर अटल बने रहो । इस रीतिसे अपने अनिश्चित जीवनको निश्चित बनाओ और जिस तरह हवा चलनेसे सूखी पत्तियाँ उड़ती फिरती हैं उस तरह अपने जीवनको डावाँडोल मत होने दो । "

बक्सटनका मत था कि युवक जैसा बनना चाहे बहुत कुछ वैसाही बन सकता है, यदि वह प्रतिज्ञा कर ले, और उस पर आरूढ़ रहे । उसने अपने पुत्रको एक बार यह लिखा था–" तुम अब जीवनकी उस श्रेणी पर आगये हो जहाँसे तुम्हें दायें बायें मुड़ना है । तुमको अब इस बातके सुबूत अवश्य देने चाहिए कि तुम निश्चित नियमोंके अनुसार चलते हो, दृढ़ संकल्प कर सकते हो और तुममें मनोबल है; नहीं तो तुम आलसी बन जाओगे और तुम्हारा स्वभाव और चरित्र डावाँडोल तथा निकम्मे युवकोंका सा हो जायगा और एक बार इतना गिर कर फिर उठना सुगम न होगा । मुझे विश्वास है कि युवक अपने आपको बहुत कुछ अपनी इच्छानुसार बना सकता है । मेरे विषयमें यही बात हुई।...मेरा बहुत सा सुख और मेरे जीवनकी सब उन्नति उस परिवर्तनके फल हैं, जो मैंने तुम्हारी उम्र पर किया था । अगर तुम उत्साही और उद्योगी होनेका दृढ़ संकल्प कर लो तो विश्वास रक्खो कि तुमको जीवन-

पर्यंत इस बातकी खुशी रहेगी कि तुमने ऐसा संकल्प किया और उसको पाला । ” निरी इच्छा केवल स्थिरता अथवा दृढ़ताका नाम है—सब बातें उसके उचित प्रयोग पर निर्भर हैं । यदि दृढ़ इच्छा इन्द्रियोंकी विषयवासनाओंमें लगा दी जाय, तो वह राक्षसके समान हानिकारक होगी और बुद्धि भी उसके साथ दुष्कर्म करने लग जायगी । परन्तु यदि अच्छे काम करनेकी दृढ़ इच्छा की जाय, तो वह राजाके समान लाभदायक होगी और बुद्धि मानवी उन्नतिमें सहायक होगी ।

“ जहाँ चाह है वहाँ राह है, ” यह एक पुरानी और सच्ची कहावत है । जो मनुष्य किसी कामके करनेका दृढ़ संकल्प कर लेता है, वह अपनी प्रतिज्ञाके बलसे ही प्रायः रुकावटोंको दूर कर देता है, और अपने कामको पूरा कर डालता है । हम अमुक कामके योग्य हैं, इस बातका विचार मात्र करना प्रायः योग्य बनना है । किसी कामको पूरा करनेका पक्का इरादा करनेसे ही बहुधा वह काम पूरा किया जा सकता है । अर्जुनने जयद्रथको वध करनेकी प्रतिज्ञा कर ली और उन्होंने यह काम कर ही डाला । सुवारो उन लोगोंसे जिनको असफलता होती थी, कहा करते थे कि ‘ तुम केवल आधी प्रतिज्ञा कर सकते हो । ’ वे यूरोपके प्रसिद्ध नीतिज्ञ रिचिलो और महावीर नैपोलियनके समान ‘ असंभव ’ शब्दको कोषमेंसे निकाल देना चाहते थे । ‘ मैं नहीं कर सकता ’ और ‘ असंभव ’ ये ऐसे शब्द हैं जिनसे वे सबसे जियादा घृणा करते थे । वे चिल्लाकर कहा करते थे,–“ सीखो ! काम करो ! कोशिश करो ! ” उनका जीवन इस बातका प्रत्यक्ष उदाहरण है कि मनुष्य अपनी शक्तियोंकी उत्साहपूर्वक उन्नति करके बहुत कुछ कर सकता है । हरएक आदमीमें शक्तियाँ गुप्तरूपसे मौजूद रहती हैं । केवल उनको प्रकाशमें लाने और उन्नति देनेकी जरूरत है । जस्टिस महादेव गोविन्द रानडेको अपनी प्रतिज्ञा और प्रयत्नपर बचपनसे ही बड़ा भरोसा था । वे जब किसी परीक्षामें उत्तीर्ण होते थे तब घर आकर किसीसे कुछ न कहते थे; परन्तु उनके साथी बालक अपने उत्तीर्ण होनेका समाचार घरके लोगोंको बड़े आनन्दसे सुनाते थे । रानडेसे जब घरके लोग यह कहते थे कि “ तुम यह भी नहीं कहते कि मैं पास हो गया, ” तब रानडे कह देते कि “इसमें कहनेकी क्या बात है ! जब मैं पढ़ता हूँ तो पास हूँगा ही। इसमें कहने लायक कौनसी नई बात है !

नैपोलियनकी एक प्यारी कहावत यह थी कि " असलमें बुद्धिमान् वही है जो पक्का इरादा करना जानता है। " उसके जीवनने यह साफ साफ दिखा दिया कि बलवान् और अटल इच्छा क्या क्या कर सकती है। वह अपने शरीर और मनकी पूरी ताकत अपने काममें लगा देता था। बलहीन राजाओं और जातियोंको उसने एक एक करके जीत लिया। जब नैपोलियनसे लोगोंने कहा कि "ऐल्प्स पर्वत तुम्हारी सेनाके मार्गमें खड़ा है, " तब नैपोलियनने उत्तर दिया कि "ऐल्प्स पर्वत नहीं रहेगा " और सचमुचही उसने ऐल्प्स जैसे बड़े पर्वतको काटकर सड़क बनवा दी। जिस जगह यह सड़क बनी उस स्थान-पर इससे पहले आदमीकी गुजर तक न होती थी। वह कहा करता था कि " असंभव " शब्द केवल मूर्खोंके कोषमें मिलता है।" वह जी तोड़ मेहनत करनेवाला था। वह कभी कभी एकदम चार मंत्रियोंसे काम लेता था और उन सबको थका देता था। वह किसीकी रिआयत करना तो जानता ही न था, यहाँ तक कि अपनी भी रिआयत न करता था। उसका प्रभाव दूसरे मनुष्योंको उत्साहित करता था और उनमें एक नई जान फूँक देता था। वह कहा करता था कि " मैंने अपने सेनापति मिट्टीसे बनाये हैं। " परन्तु उसका सब किया कराया निष्फल हुआ; क्योंकि उसकी घोर स्वार्थपरतासे उसका और उसके देशका नाश हो गया। उसके जीवनसे यह शिक्षा मिली कि बलको चाहे कितने ही उत्साहके साथ काममें लाया जाय; परन्तु स्वार्थ-परता अपने स्वामीको और उन लोगोंको जिन पर उसका प्रयोग किया जाता है मिट्टीमें मिला देती है और यदि किसी ज्ञानवान् मनुष्यमें सुजनता न हो तो उसका ज्ञान साक्षात् पाप है।

अँगरेज सेनापति वैलिंगटन नेपोलियनसे भी बढ़े चढ़े थे। वे प्रतिज्ञा करनेमें, मजबूत रहनेमें और लगातार कोशिश करनेमें नैपोलियनसे कम न थे बल्कि आत्मत्याग, कर्तव्यपालन और देशभक्तिमें नैपोलियनसे कहीं बढ़कर थे। नैपोलियन नामका भूखा था; परन्तु वैलिंगटन कर्तव्य-पालन पर जान देते थे। बड़ीसे बड़ी कठिनाइयाँ भी वैलिंगटनको न तो रोक सकती थीं, न निराश कर सकती थीं। काम जितना ही कठिन होता जाता था उनका उत्साह उतना ही बढ़ता जाता था। पैनिंशुलर युद्धमें उन्होंने बड़ी बड़ी कठिनाइयों और मुसीबतोंको ऐसी दृढ़ता, धीरज और

वीरताके साथ सहन किया कि यह बात इतिहासमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण गिनी जाने लगी है। इस युद्धमें वैलिंगटनने अपनी प्रतिभा और बुद्धिमत्ताका परिचय देकर यह बतला दिया कि वे बड़े भारी सेनापति होनेके उपरान्त एक अच्छे राजनीतिज्ञ भी थे। वे स्वभावतः बड़े चिड़चिड़े मिजाजके थे; परन्तु उनको कर्तव्यपालनका इतना खयाल रहता था कि वे अपने मिजाजको काबूमें रख सकते थे और दूसरे लोगोंको यही मालूम होता था कि उनमें सहनशीलता कूटकूट कर भरी है। मान-बड़ाईकी इच्छा, लोभ, अथवा किसी और अवगुणका लेशमात्र भी उनके चरित्रमें न था। वीर वैलिंगटनने अपनी चतुराई, वीरता, साहस और धीरजके द्वारा जो लड़ाइयाँ जीतीं उनके कारण उनका नाम अमर हो गया।

जिस मनुष्यमें उत्साह है वह काम करनेको हमेशा तैयार रहता है और जो कुछ करना चाहता है उसे तुरन्त ही निश्चय कर लेता है। जब यात्री लेडयार्डसे पूछा गया कि "तुम आफ्रिका जानेको कब तैयार हो सकते हो?" तब उसने तुरन्त ही उत्तर दिया, "कलप्रातः काल ही?" और जब जर्विससे पूछा गया कि "तुम जहाजमें सवार होनेके लिए कब तैयार होगे," तब उन्होंने उत्तर दिया, "अभी।" जब मुगल सम्राट् अकबरने बैरामखाँको बिदा करके राज्यकी बागडोर स्वयं अपने हाथमें ली, तब कई सूबेदारोंने अकबरके विरुद्ध विद्रोह करनेकी ठानी। जौनपुरमें खाँजमाँने, मालवामें आदमखाँने और कड़ामें आसफखाँने विद्रोह करके स्वतंत्र होना चाहा। परन्तु अकबर अपने बैरियोंको बलवान् होनेका कभी अवसर न देता था। वह तुरन्त ही चल दिया और इससे पहले कि वे लोग अपनी अपनी सेना इकट्ठी न कर सकें। उसने एक एक पर धावा किया और उनपर विजय पाई। अकबरने इतनी जल्दी की कि उनको आशा भी न थी कि वह इतनी जल्दी आ जायगा। झटपट निश्चय करनेसे और इसी तरह शीघ्रतासे काम करनेसे युद्धमें विजय प्राप्त होती है। नैपोलियनने एक बार कहा था कि "आरकोलाका युद्ध मैंने केवल पचीस सवारोंसे जीत लिया। एक बार जब दुश्मन आलस्यमें पड़ा था, तब मैंने उस मौकेको हाथसे न जाने दिया। मैंने अपने मुट्ठीभर सवारोंको तुरन्त ही धावा करनेकी आज्ञा दी और जीत हमारे हाथ रही।" एक और अवसर पर नैपोलियनने कहा था कि "एक

क्षण भी व्यर्थ खोदेनेसे आपत्तिको आनेका मौका मिल जाता है। मैंने आस्ट्रियावालोंको केवल इसी वजहसे हरा दिया कि उन्होंने समयकी कदर कभी न की। जब वे अपना समय व्यर्थ गँवाने लगे तभी मैंने उनको परास्त किया!"

पिछली सदीमें अनेक अँगरेज अफसरोंने भारतवर्षमें बड़ा उत्साह और साहस दिखाया था। सर चार्ल्स नेपियरमें अद्भुत साहस और संकल्प था। उन्होंने एक बार केवल दो हजार सैनिकोंसे, जिनमें केवल चार सौ अँगरेजी सिपाही थे, पैंतीस हजार बलवान् और शस्त्रधारी बलूचियोंका मुकाबला किया। यह सचमुच बड़े साहसका काम था, परन्तु नेपियरको अपने ऊपर और अपने आदमियों पर भरोसा था। बलूचियोंकी सेना कुछ ऊँचे पर थी। नेपियरने उस सेनाके मध्यभाग पर आक्रमण किया। तीन घंटों तक घोर युद्ध होता रहा। नेपियरकी छोटी सेनाके हरएक सैनिकने बड़ी शूरवीरता दिखाई; क्योंकि उन सबमें अपने सेनापतिका सा जोश भरा हुआ था। बलूची बीसगुने होने पर भी भगा दिये गये! युद्धमें ही नहीं किन्तु सभी कामोंमें इस तरहके साहस, दृढता और आग्रहसे कामयाबी होती है। कुछ ही अधिक साहस करनेसे बाजी मारी जाती है; थोड़ा ही और आगे बढ़नेसे मोरचा जीत लिया जाता है; पाँच मिनिट तक और वीरता दिखानेसे लड़ाईमें विजय होती है। चाहे तुममें शक्ति कम हो, परन्तु तुम अपने शत्रुकी बराबरी कर सकते हो और उस पर विजय पा सकते हो, यदि तुम अधिक एकाग्रचित्त होकर कुछ देर तक और लड़ते चले जाओ। एक किसानके लड़केने अपने पितासे यह शिकायत की कि "मेरी तलवार छोटी है," पिताने उत्तर दिया कि "एक कदम बढ़कर मारो।" यही बात जीवनके हर कामके विषयमें कही जा सकती है।

वीरवर हमीरने चित्तौड़का उद्धार साहस और दृढ़ संकल्पसे ही किया। किसको आशा थी कि यह बालक जो केवल नामका राजा था—जिसके पास न धन था, न सेना थी और न राज्य था—ऐसे बड़े कामको कर सकेगा? परन्तु हमीरको अपने उद्योग और साहस पर विश्वास था। साहस बड़ी चीज है। जिस साहसने स्पार्टाके सेनापति लिओनीडासको केवल तीन सौ सैनिकोंके साथ फारसके बादशाहकी बड़ी भारी सेनासे थर्मापलीके पर्वत पर लड़ाया था उसी साहसने राणा प्रतापको मुट्ठी भर राजपूतोंके बल पर मुगलोंकी

बड़ी भारी सेनाके विरुद्ध हल्दीघाटकी प्रसिद्ध लड़ाईमें खड़ा कर दिया था। राजा टोडरमलका जीवनचरित उत्साह और साहसका विचित्र उदाहरण है। उन्होंने एक दरिद्र घरमें जन्म लिया था। बचपनमें ही उनके पिताका देहान्त हो गया। उनकी माताने उनको बहुत थोड़ी शिक्षा दी। जब टोडर-मल कामकाजके योग्य हुए तब वे दिल्लीकी ओर नौकरीकी तलाशमें चल दिये। कई दिन यात्रा करनेके बाद वे दिल्ली पहुँचे। भूखे प्यासे धर्मशालामें टिक रहे। दूसरे दिन धंधा ढूँढ़नेके लिए नगरमें फिरने लगे। चलते फिरते वे एक बादशाही दफ्तरके पास जा निकले। वहाँ वे नौकर हो गये। वे थोड़ासा हिसाब किताबका काम जानते थे। दफ्तरवालोंने उसकी परीक्षा भी ली। उस समय दफ्तरमें दो चार आदमियोंकी जरूरत भी थी। वहाँ रहकर टोडरमलने आश्चर्यजनक उन्नति की। इस तरह टोडरमलने कुछ समय तक सम्राट् शेरशाहके यहाँ काम किया। शेरशाहकी मृत्युके बाद सूरवंशमें कमजोर राजा होने लगे। हुमायूँने आकर दिल्लीके तख्तपर फिर कब्जा कर लिया। इस घटनाके कुछ महीने बाद हुमायूँकी मृत्यु हो गई और सम्राट् अकबर सिंहासनारूढ़ हुए। टोडरमल अकबरके यहाँ नौकर हो गये। कुछ समय बाद अकबरने उन्हें अपने एक मुख्य दफ्तरका काम सिपुर्द किया। इस काममें टोडरमलने अपनी कार्यदक्षता और योग्यताका खूब परिचय दिया; सम्राट् अकबर उनके कामसे बहुत प्रसन्न हुए। अब तो टोडरमलको और भी बड़े बड़े काम मिलने लगे।

इस बीचमें टोडरमलने युद्धके कला-कौशल्यका भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। धीरे धीरे वे एक अच्छे सैनिक हो गये। अकबरने कुछ समय बाद उन्हें अपने सेना-विभागकी व्यवस्थाका काम सौंपा। यह काम उन्होंने ऐसी योग्यतासे किया कि सम्राट् उनके चातुर्यपर मुग्ध हो गये। टोडरमलने पहले तो सेनाके कई विभाग किये और फिर उनके खर्चका प्रबंध किया। ऐसा करनेसे सेनाकी दशा सुधर गई और शाही खजानेका रुपया भी कम खर्च होने लगा। इसी बीचमें बहादुर खाँने अकबरके विरुद्ध बलवा खड़ा कर दिया। अकबरने इस बलवेको शान्त करनेके लिए टोडरमलको भेजा। टोडर-मलने इस काममें सफलता प्राप्त की और तब बादशाहने प्रसन्न होकर टोडरमलको सेनापति नियत कर दिया।

इसके बाद बादशाहने टोडरमलको गुजरात पर चढ़ाई करनेके लिए भेजा। यहाँ भी टोडरमलको सफलता हुई और उन्होंने विजय पाई। अब टोडरमल बिहार प्रान्त पर चढ़ाई करनेके लिए भेजे गये। इस काममें उन्होंने बड़ा उत्साह और साहस दिखलाया और सफलता प्राप्त की। अकबरने उनका बड़ा सम्मान किया और उनको अपना प्रधान दीवान नियत किया। यहीं पर टोडरमलकी ख्यातिकी 'इतिश्री' नहीं हुई। इसके बाद बंगाल और गुजरातमें बलवे हुए। इन बलवोंको भी शान्त करनेके लिए टोडरमल भेजे गये। टोडरमलने इन बलवोंको भी औरोंकी तरह शान्त किया। इन अवसरों पर टोडरमलने ऐसी वीरता और चतुराई दिखलाई कि बादशाह दंग रह गये। अकबर इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने टोडरमलका मासिक वेतन आठ हजार रुपया कर दिया !

अब टोडरमलने राज्यभूमिके लगानकी व्यवस्था शुरू की। अब तक इसका कोई संतोषप्रद प्रबंध न था। उन्होने समस्त राज्यकी भूमिको नाप डाला और पैदावारके अनुसार उसके विभाग कर डाले। फिर उन्होंने जमीनके सब भागोंका लगान नियत किया और लगान वसूल करनेवाले कर्मचारियोंकी व्यवस्था की।

राजा बीरबलका जीवनचरित भी इससे कुछ कम विचित्र नहीं है। उन्होंने भी एक निर्धन घरमें जन्म लिया था। उनके पिता एक साधारण ब्राह्मण थे। ऐसी स्थितिसे उन्नति करते करते बीरबल सम्राट् अकबरके नवरत्नोंमें गिने जाने लगे। यह सब एक निर्धन बालकके साहस और उद्योगका फल था। अकबरके दरबारमें बीरबल पहले पहल कैसे पहुँचे इस बातका ठीक ठीक पता नहीं चलता। सुनते हैं कि एक बार सम्राट् अकबर बहुरूपियेका तमाशा देख रहे थे। बहुरूपियेने बैलका स्वाँग ऐसा अच्छा भरा था कि बादशाहने उसके तमाशेसे प्रसन्न होकर उसे अपना दुशाला इनाममें दे दिया। उस समय बालक बीरबल पाठशालाको पढ़ने जा रहा था। रास्तेमें बहुरूपियेका यह तमाशा हो रहा था। वह भी देखनेको ठहर गया। बीरबलने बहुरूपियेकी परीक्षा लेनेके लिए उस पर एक कंकड़ी फेंक दी। इस पर बहुरूपियेने अपनी बनावटी खालको ठीक इस तरह हिलाया जैसे कोई बैल हिलाता हो। बीरबल यह देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने झटसे अपनी टोपी

बहुरूपियेको इनाममें दे दी। सम्राट् अकबरने बालककी इस चतुराई और गुणग्राहताको देखकर बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और बीरबलको अपने यहाँ नौकर रख लिया। यह कथा ठीक हो या न हो, परन्तु यह निश्चय है कि बीरबल छोटी उम्रमें ही बादशाहके यहाँ नौकर हो गये थे। बीरबलने अपने कामसे और विशेष कर अपनी हाजिरजवाबीसे बादशाहको थोड़े ही समयमें रिझा लिया।

बीरबलने युद्ध-कौशल भी सीख लिया। वे कई बार युद्धपर भेजे गये और बादशाहने उनके साहस और वीरताकी भूरि भूरि प्रशंसा की। सन् १५८५ ईसवीमें वे युसुफजई पठानोंसे युद्ध करनेके लिए भेजे गये। इसी युद्धमें बीरबल काम आये। बादशाहको उनकी मृत्युसे जो शोक हुआ वह अकथनीय है। बीरबल कविता भी अच्छी करते थे और बादशाहने उनको कविरायकी पदवी दी थी। बादशाहने उनको एक जागीर भी दी थी। बादशाह बीरबलको इतना चाहते थे कि वे उनको कभी अपनी आँखोंके सामनेसे दूर न करते थे।

और बातोंमें भी जो युद्धसे अधिक शान्तिपूर्ण और लाभदायक हैं अनेक मनुष्योंने कुछ कम उत्साह और साहस नहीं दिखलाया। जिस तरह वीर योद्धाओंका स्मरण किया जाता है उसी तरह धर्मोपदेशकों और उपकारकर्ताओंको भी न भूलना चाहिए। हम भारतवर्षमें ही स्वयं देखते हैं कि ईसाई धर्मोपदेशक कितना स्वार्थत्याग करते हैं। वे जो कुछ करते हैं वह अपना कर्तव्य समझकर करते हैं। वे इस खयालसे काम नहीं करते कि ऐसा करनेसे हमको यश मिलेगा। हजारों कोसकी दूरीसे अँगरेज मैमें अपने घरबार और कुटुम्बियोंको छोड़कर हमारे देशमें आती हैं और हमारे बच्चोंको पढ़ना, लिखना, सीना, पिरोना सिखलाती हैं, रोगियोंकी सेवा शुश्रषा करती हैं और अपने धर्मका प्रचार करती हैं। इस कामके लिए उन्हें इस देशकी भाषायें सीखनी पड़ती हैं, यहाँकी सख्तगर्मी झेलनी पड़ती है, और अनेक कष्टोंका सामना करना पड़ता है। क्या यह उत्साह और साहसका काम नहीं है? यूरुप और अमेरिका जैसे दूरवर्ती देशोंके अनेक निवासी यहाँपर आते हैं और हम उनको बाजारमें खड़े होकर ईसाई धर्मका उपदेश करते हुए देखते हैं। इन उपदेशकोंमें अटल साहस और अनन्त धीरज होता

है । इन्हीं गुणोंके कारण वे सब तरहकी मुसीबतें सह लेते हैं और किसी तरहका भय नहीं करते । अगर अपने काममें उनको मौतका भी सामना करना पड़े तो वे बड़ी खुशीसे अपनी जान दे देते हैं। ऐसे ही वीर मनुष्योंके द्वारा ईसाई धर्मका इतना प्रचार हुआ है । फ्रान्सिस जेविअर ऐसे ही वीर पुरुष थे । उनका जन्म एक कुलीन घरानेमें हुआ था । सुख और ठाठबाटकी उनके पास कमी न थी । लोगोंमें उनकी प्रतिष्ठा भी बहुत थी । परन्तु उन्होंने सारे सुख और धन पर लात मारी और यह दिखला दिया कि संसारमें बहुतसी बातें ऐसी भी हैं जिनके सामने प्रतिष्ठा अथवा धनकी कुछ असलियत नहीं और मनुष्यको ऐसी ही बातोंकी ओर लक्ष्य रखना चाहिए। उनके आचार और विचार दोनोंसे ही भलमनसाहत टपकती थी । वे वीर थे, प्रतिष्ठाके पात्र थे और उदार थे । वे दूसरोंकी बात सहजमें ही मान लेते थे, परन्तु वे उनपर अपना प्रभाव भी डाल सकते थे । वे अत्यन्त धीर, दृढनिश्चयी और उत्साही मनुष्य थे । जब वे पैरिसके विश्वविद्यालयमें दर्शनशास्त्रके अध्यापक थे, तब उनकी उम्र बाईस वर्षकी थी । वहाँ लायोलासे उनकी गहरी मित्रता हो गई और वे अपने मित्रको धर्मोपदेश करनेके काममें सहायता भी देने लगे ।

उसी समय पुर्तगालके सम्राट् जान तृतीयने भारतवर्षमें ईसाई धर्मके प्रचार करनेका संकल्प किया । इस कामके लिए बोबाडिल्ला नामक एक महाशय चुने गये । परन्तु वे अचानक बीमार पड़ गये, इस लिए जो काम उनको सौंपा गया था उसके लिए दूसरे आदमीकी तलाश की गई और इस बार जेविअर चुन लिये । जेविअर अपने साथ बहुत थोड़ा सामान लेकर तुरन्त ही लिस्बन नगरको चल दिये और फिर वहाँसे भारतवर्षको रवाना हो गये । जिस जहाजमें वे बैठे थे उसीमें गोआ (बम्बई प्रान्त) के गवर्नर भी थे । उनके साथ एक हजार सैनिक भी गोआकी रक्षा करने जारहे थे । जेविअरके रहनेके लिए जहाजमें एक कोठरी अलग दी गई, परन्तु उन्होंने इतनी जगह घेरना उचित न समझा और वे रास्ते भर जहाजके बाहरी तख्ते पर ही पड़े रहे । वे अपने सिरके नीचे रस्सियोंको रखकर सो जाते थे और मल्लाहोंके साथ भोजन करते थे । वे मल्लाहोंका काम करते थे, उनके मनो-

विनोदके सामान इकट्ठा करते थे, और रोगियोंकी सेवा शुश्रूषा करते थे। इससे मल्लाह उनसे बड़ा प्रेम करने लगे और उनको आदरकी दृष्टिसे देखने लगे।

जब जेविअर गोआ पहुँच गये, तब उन्हें वहाँके लोगोंकी बुरी दशा देखकर बड़ा शोक हुआ। वे गोआ नगरकी सड़कों और गलियोंमें फिरने लगे। वे अपने हाथमें एक घंटी रखते थे, उसे बजाते जाते थे और लोगोंसे सविनय निवेदन करते थे कि "आप लोग अपने बच्चोंको हमारे पास पढ़नेके लिए भेजिए।" कुछ ही समयमें उन्होंने बहुतसे विद्यार्थी इकट्ठे कर लिये। उनको वे हर रोज बड़ी सावधानीके साथ पढ़ाते थे। इसके साथ ही साथ वे रोगियोंकी भी सेवा करते और दरिद्रियोंका कष्ट दूर करते थे। दुखियोंका हाल सुनते ही वे उनकी सहायताके लिए पहुँच जाते थे। एक बार उन्होंने मनारके मछली पकड़नेवालोंकी दुर्दशाका समाचार पाया। बस वे तुरन्त ही उनके पास पहुँच गये। उन्होंने उन लोगोंको ईसाई बनाया, उनको शिक्षा दी और उनके कष्ट दूर किये।

वहाँसे फिर वे दक्षिणकी ओर और आगे बढ़े। नगर नगर और गाँव गाँव, मन्दिरोंमें और बाजारोंमें उनकी घंटी बजती चली जाती थी। लोग उनके पास आते थे और उपदेश सुनते थे। उन्होंने अपनी धर्म-पुस्तकोंके अनुवाद कई दक्षिणी भाषाओंमें करा लिये थे और उनको कण्ठस्थ भी कर लिया था। इन्हीं अनुवादोंको वे लड़कोंको सुनाते थे और उनको रटा देते थे। फिर लड़के घर जाकर अपने माता पिताओं और पड़ौसियोंको वही बातें सुनाते थे। कुमारी अन्तरीप पर पहुँचकर उन्होंने तीस धर्मोपदेशक तैयार किये और उनको तीस ही गिरजोंमें नियत किया। वहाँसे वे ट्रावनकोर पहुँचे और पहलेकी तरह गाँव गाँव घूमकर घंटीके द्वारा लोगोंको इकट्ठा करने लगे और उन्हें ईसाई धर्मका उपदेश देने लगे। इस कार्यमें उन्हें बड़ी सफलता हुई। इतने लोग ईसाई होते थे कि संस्कार करते करते उनके हाथ थक जाते थे और मंत्र बोलते बोलते उनका गला पड़ जाता था और उनकी आवाज तक न सुनाई देती थी। बादमें उन्होंने स्वयं कहा था कि मुझे इतनी सफलताकी आशा स्वप्नमें भी न थी। उनका जीवन ऐसा पवित्र, उत्साहयुक्त और सीधा-सच्चा था और उनके काम ऐसे अच्छे थे कि वे जहाँ जाते थे वहीं लोग उनके

धर्मके अनुयायी हो जाते थे। उनके हृदयमें ऐसा दयाभाव था कि जो लोग उनको देखते थे उनकी बातें सुनते थे उनमें भी दयाका संचार हो जाता था।

यह सोचकर कि प्रचार का काम बहुत बड़ा है और काम करनेवाले कम हैं। जेविअर वहाँसे मलाका और जापानको चल दिये। वहाँ उनको बिलकुल नई जातियाँ मिलीं जो सर्वथा नई भाषायें बोलती थीं। वहाँ जाकर भी उन्होंने रोगियोंकी सेवा की और लोगोंको ईसाई बनाया। वे भूख, प्यास, भय और कष्ट सहन कर लेते थे, न थकते थे। निदान ग्यारह वर्षके परिश्रमके बाद जब वे चीनकी ओर जा रहे थे रास्तेमें ही उनको ज्वरने आ दबाया और उनके शरीरका अन्त कर दिया।

वैदिक धर्मोपदेशक स्वामी विवेकानन्दके जीवनमें भी कुछ कम उत्साह और साहसके दर्शन नहीं होते। फ्रान्सिस जेविअरके समान वे भी एक प्रतिष्ठित और धनाढ्य घरमें उत्पन्न हुए थे। धर्मसंबंधी प्रश्न उनके मस्तकमें सदैव उठा करते थे। उनको दर्शनशास्त्रसे बड़ा प्रेम था। बी. ए. पास करनेके बाद एक दिन उनकी भेट स्वामी रामकृष्ण परमहंससे हो गई। उन्हें उक्त स्वामीजीकी बातें ऐसी कुछ पसंद आईं कि वे उनके शिष्य हो गये और वेदान्तके संबंधमें उनसे बहुतसी बातें सीखीं। इस बीचमें स्वामी रामकृष्ण परमहंसके और भी अनेक शिष्य हो गये। सन् १८८६ में स्वामीजीका देहान्त हो गया। उनके अनेक शिष्योंने संसारके सुखोंको त्याग कर उन्हींके समान जीवन व्यतीत करनेका संकल्प कर लिया। विवेकानन्दने भी यही संकल्प किया और कुछ समय बाद वे ध्यान और अध्ययन करनेके लिए हिमालय पर्वत पर चले गये। वहाँसे वे तिब्बतको चले गये और कुछ समय तक वहीं रहकर बौद्धधर्मका अध्ययन करते रहे। इसके बाद वे भारतको लौटे और यहाँ जगह जगह घूमकर वैदिक धर्मका प्रचार करने लगे। जिस समय वे मद्रासमें उपदेश दे रहे थे उस समय अमेरिकाके शिकागो नगरमें एक महान् धर्मसभा (The Great Parliament of Religions) होनेवाली थी। मद्रासके कई विद्वानोंने स्वामी विवेकानन्दको उक्त सभामें हिन्दुधर्मका प्रतिनिधि बनाकर भेजनेका निश्चय किया और उनके कहनेपर स्वामीजी अमेरिका चल दिये।

जब स्वामी विवेकानन्द अमेरिकामें पहुँचे तब उन्हें बड़े बड़े कष्टोंका सामना करना पड़ा। जो रुपया स्वामीजी अपने साथ भारतवर्षसे लाये थे वह सब रास्तेमें ही खर्च हो गया और इसलिए उन्हें अपने निर्वाहके लिए अमेरिकामें भीख तक माँगनी पड़ी। एक वृद्ध महिलाको स्वामीजीकी सूरत देखकर बड़ी हँसी आई और उसने सोचा कि यदि मैं इस विचित्र मनुष्यको अपने मित्रोंको दिखलाऊँ तो बड़ा मनोविनोद होगा। यह सोच कर उस महिलाने अपने कई मित्रोंकी दावत की और उस दावतमें स्वामीजीको भी न्यौता दिया। जब दावतके लिए सब लोग इकट्ठे हो गये और स्वामीजीने उनसे वार्तालाप किया तब वे लोग स्वामीजीकी योग्यता पर मुग्ध हो गये—उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। फिर तो स्वामीजीकी बड़ी कदर हुई। वे लोग स्वामीजीको दर्शनशास्त्रके एक अध्यापकके पास ले गये। उसने जब स्वामीजीसे हिन्दू–दर्शनशास्त्र पर बातें कीं तब उसे स्वामीजीकी योग्यताको देखकर दातों तले उँगली दबानी पड़ी। वह स्वामीजीको धर्म सभाके सभापति डाक्टर बरोजके पास ले गया और उन्होंने बड़ी खुशीके साथ अपनी सभामें स्वामीजीको हिन्दू-धर्मके प्रतिनिधिरूपमें उपस्थित होनेका न्यौता दिया। जब स्वामीजीने वेदान्त दर्शन पर सभामें अपने व्याख्यान दिये तब तो स्वामीजीकी बड़ी प्रशंसा हुई और दूसरे ही दिन समाचारपत्रोंद्वारा उनकी ख्याति अमेरिकाके एक सिरेसे दूसरे सिरे तक पहुँच गई। पश्चिमी दुनियाने एक स्वरसे स्वामीजीकी योग्यताको स्वीकार कर लिया। 'न्यूयार्क हैरल्ड' नामक पत्र ने लिखा कि "धर्म सभामें स्वामी विवेकानंद निःसंदेह सबसे बढ़े चढ़े हैं। उनके व्याख्यानोंको सुनकर हमको यह खयाल होता है कि भारतवर्षमें जहाँ ऐसे विद्वान् मनुष्य मौजूद हैं ईसाई धर्मोपदेशकोंको भेजना निरी मूर्खता है।" इसके बाद स्वामीजीके पास अमेरिकाके अनेक नगरोंसे निमंत्रणपत्र आये। उन्हें स्वीकार करके स्वामीजीने अमेरिकाके अनेक स्थानोंमें भ्रमण करके वैदिक धर्मपर बड़े ही महत्त्वपूर्ण व्याख्यान दिये। लोगोंको उनकी बातें बहुत पसंद आईं और वे वैदिक धर्मसे प्रेम करने लगे।

इसके बाद स्वामीजी अमेरिकासे इँग्लेंड चले गए। वहाँ भी उनकी वैसी ही ख्याति हुई। दो मास तक उन्होंने वेद और उपनिषदों पर अनेक प्रभावशाली व्याख्यान दिये। इन व्याख्यानोंका परिणाम यह हुआ कि अनेक

विद्वान् अँगरेज स्वामीजीके शिष्य हो गये और उन्होंने स्वामीजीको वैदिक धर्मके प्रचार करनेमें बड़ी सहायता दी।

सन् १८९६ के अन्तमें स्वामीजी भारतवर्षको लौट आये। यहाँ आकर स्वामीजीने कई स्थानोंपर आश्रम बनाये और भारतवासियोंको वैदिक धर्मके प्रचारकी आवश्यकता समझाई। इस देशके निर्धन और दुखिया लोगोंके कष्ट दूर करनेके लिए स्वामीजीने बड़ी बड़ी कोशिशें कीं। परन्तु इतना अधिक काम करनेसे स्वामीजीका स्वास्थ्य (तन्दुरुस्ती) बिगड़ने लगा। डाक्टरोंने उनको परदेश जानेकी सलाह दी, इस लिए वे फिर इँग्लेंड गये। वहाँ उनका स्वास्थ्य बहुत सुधर गया। इसके बाद वे अमेरिका चले गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने 'शान्तिआश्रम' और 'वेदान्त सोसायटी' नामक दो संस्थायें स्थापित कीं जो अब तक सैनफ्रेन्सिसको नगरमें मौजूद हैं और खूब काम कर रही हैं।

उसी समय फ्रान्सकी राजधानी पेरिस नगरमें एक धर्मसभा होनेवाली थी। स्वामीजीको इस सभाने निमन्त्रण भेजा, अतएव स्वामीजी पेरिस गये और वहाँ पर भी उन्होंने हिन्दू दर्शनशास्त्र पर व्याख्यान दिये। इसी बीचमें स्वामीजीका स्वास्थ्य फिर बिगड़ने लगा और वे भारतवर्षको लौट आये। परन्तु उनको अपने स्वास्थ्यका इतना खयाल न था जितना अपने महान् कार्यका था। उन्होंने काशीमें एक विद्यालय स्थापित किया और दीन दुखी लोगोंके लिए एक आश्रम बनवाया। वैदिक धर्मके प्रचार करनेके लिए उन्होंने अनेक साधुओंको इकट्ठा किया और उनके रहनेके लिए एक मठ बनवा दिया। स्वामीजी अनेक भारतीय युवकोंको दर्शनशास्त्रकी शिक्षा स्वयं देते थे। इसी समय जापानियोंने स्वामीजीसे जापान चलनेके लिए बहुत कुछ आग्रह किया; परन्तु स्वामीजी उनके साथ न जा सके। उस समय उनका स्वास्थ्य बहुत खराब हो रहा था। परन्तु फिर भी स्वामीजीने अपने उद्देशको न छोड़ा और वे भारतवर्षमें जी तोड़ परिश्रम करते रहे। उनका बहुत सा समय अपने शिष्योंको शिक्षा देनेमें चला जाता था। इस अटूट परिश्रमका यह परिणाम हुआ कि उनका स्वास्थ्य बिगड़ता चला गया और सन् १९०२ ईसवीमें उनका स्वर्गवास हो गया। ऐसे धर्मात्मा, स्वार्थत्यागी और उत्साही मनुष्य संसारमें बिरले ही होते हैं।

डाक्टर लिविंगस्टनका जीवन भी अत्यन्त मनोरंजक है। उनके मातापिता निर्धन परन्तु ईमानदार थे और अपनी बुद्धि और विवेकके लिए प्रसिद्ध थे। उनके पूर्वजोंमें कोई भी बेईमान न था। 'ईमानदार रहो,' यही एक सम्पत्ति थी जो उन्होंने अपने बच्चोंके लिए छोड़ी थी। जब लिविंगस्टन दश वर्षके हुए तब वे एक रूईके मिलमें नौकर हो गये। पहले हफ्तेके वेतनमेंसे ही उन्होंने एक व्याकरण मोल ले लिया और उसके द्वारा कई वर्षों तक रातके समय एक स्कूलमें लैटिन भाषा सीखी। वे कभी कभी मिलमें काम करते हुए भी किताब सामने रख लेते थे और पढ़ा करते थे। मिलकी कलोंकी आवाज कान फोड़े डालती थी, परन्तु वे किसी न किसी तरह अपने ध्यानको पढ़नेकी ओर लगाये ही रहते थे। लैटिन भाषा सीख लेनेपर उनका ध्यान धर्म-प्रचारकी ओर आकर्षित हुआ। इस कामके लिए उन्होंने कुछ चिकित्सा भी सीखी और यथाशक्ति रुपया भी बचाया। वे वर्षमें कुछ महीने नौकरी करते थे और कुछ महीने कालिजमें पढ़कर विद्योपार्जन करते थे। वे नौकरीसे जो कुछ रुपया कमाते वह पढ़ने लिखनेमें खर्च कर डालते थे और उसमेंसे कुछ बचत भी कर लेते थे। यह सब उन्होंने स्वावलम्बनसे ही किया और कभी किसीसे एक पैसेकी भी सहायता न ली। कालिजकी परीक्षा पास करनेके बाद वे लंडन मिशनरी सोसायटीकी ओरसे आफ्रिका गये। वे स्वयं अपने खर्चसे चीन जाना चाहते थे, परन्तु वहाँपर युद्ध हो रहा था इस लिए न जा सके। आफ्रिकामें जाकर उन्होंने बहुतसे काम स्वतंत्रतापूर्वक अपने खर्चसे भी किये। जिस जहाजमें वे आफ्रिका भेजे गये थे वह कुछ काल बाद निकम्मा हो गया। उन्होंने पुस्तकें लिखकर भी कुछ धन इकट्ठा किया था। वह धन उन्होंने एक नया जहाज बनवानेके लिए दान कर दिया और कहा कि " मेरे बच्चे स्वयं अपने लिए धन पैदा कर लेंगे। "

ब्रह्मसमाजके संस्थापक राजा राममोहनरायके जीवनमें भी फ्रांसिस जेविअर अथवा स्वामी विवेकानंदके जीवनके समान कुछ कम उत्साह और साहसके दर्शन नहीं होते। फ्राँसिस जेविअरके समान राममोहनरायने भी एक प्रतिष्ठित कुलमें जन्म लिया था। राममोहनरायने जिस समयमें जन्म लिया था वह जमाना अँगरेजी राज्यकी बढ़ती और मुसलमानी राज्यकी घटतीका संधिकाल था। उस समय बंगालमें बड़ी गड़बड़ी फैली हुई थी। न

तो शासन-पद्धति अच्छी थी और न सामाजिक व्यवस्था उत्तम थी। शिक्षाकी हालत बहुत बिगड़ी हुई थी। उस समय फारसीका ही अधिक प्रचार था, क्यों कि फारसी लिखे-पढ़ोंको नौकरी मिलनेमें बहुत सुविधा होती थी। इधर उधर पंडितों और मौलवियोंने अपने घर पर मकतब खोल रक्खे थे। वहीं पर विद्यार्थियोंको पढ़नेके लिए जाना पड़ता था। उच्च शिक्षा प्राप्त करनेके साधन बड़े ही दुर्लभ थे। उन दिनों फारसी और अरबीकी उच्च शिक्षाके लिए पटना बहुत मशहूर था। राममोहनरायने पहले एक मौलवीके यहाँ कुछ फारसी सीखी। फिर उनके पिताने उन्हें फारसी और अरबीकी उच्च शिक्षा प्राप्त करनेके लिए पटना भेज दिया। उस समय राममोहनरायकी अवस्था १२ वर्षकी थी। उन दिनों आने जानेके साधन आजकलकी तरह उत्तम न थे। रेल अथवा तारका कोई नाम भी न जानता था। मार्गमें ठग और लुटेरोंका ही नहीं किन्तु जंगली जानवरोंका भी भय लगा रहता था। लुटेरे तरह तरहके वेष धारण करके यात्रियोंमें आ मिलते थे और मौका पाकर उनको लूट लेते थे। इसी तरह नदियोंमें भी तैराक लुटेरे नावोंको लूटा करते थे। यात्राका नाम सुनते ही बड़े बड़े आदमियोंके छक्के छूट जाते थे। लोग अपने घरपर चाहे कितने ही कष्ट उठा रहे हों, परन्तु परदेश जानेका नाम भी न लेते थे। ऐसी अवस्थामें १२ वर्षके राममोहनरायका बंगालसे पटना जाना बड़े भारी साहसका काम था। पटनामें विद्याध्ययन करते समय उनका ध्यान मुसलमानोंके अद्वैतवादकी ओर गया। तभीसे उनको मूर्तिपूजा पर भी संदेह होने लगा। पटनामें फारसी और अरबीका अच्छा ज्ञान संपादन करके वे काशीको संस्कृत और वेदशास्त्र पढ़नेके लिए गये। काशीमें रहकर उन्होंने उपनिषद् आदि ग्रन्थोंमें अद्वैतवादकी नई युक्तियाँ पढ़ीं। इनको पढ़कर वे बड़े प्रसन्न हुए। साथ ही साथ मूर्तिपूजापरसे उनकी श्रद्धा बिलकुल उठ गई। सोलह वर्षकी अवस्थामें उन्होंने मूर्तिपूजाका खंडन करनेके लिए एक पुस्तक लिखी। इस पुस्तकने हिन्दु समाजमें बड़ी अशान्ति फैला दी, क्योंकि चिरप्रचलित मूर्तिपूजापर हिन्दुओंका अटल विश्वास था। लोग अपने धर्मके इस अपमानको न सह सके। और राममोहनरायकी तीव्र निन्दा करने लगे। इधर तो लोग बिगड़ गये, और उधर राममोहनरायके पिता रामकान्त भी अपने मनमें अत्यन्त दुःखी हुए। राम-

कान्तका क्रोध यहाँतक बढ़ा कि अंतमें राममोहनरायको अपने पिताका घर छोड़ देना पड़ा। सोलह वर्षकी अवस्थामें जब हमारे देशके बालक अपना समय खेल-कूद और मनोविनोदमें ही निकाल देते हैं, राममोहनरायका एक ऐसे विचारके लिए, जिसको वे सत्य समझते हैं, लोकनिन्दा सहना और अपने पिताका कोपभाजन बनकर घरसे निकल जाना साधारण दृढ़ताका काम न था।

घर छोड़ कर उन्होंने भारतवर्षके अनेक प्रदेशोंमें यात्रा की और फिर बौद्ध धर्मका अध्ययन करनेके लिए तिब्बत पहुँचे। तिब्बतमें भी उन्होंने अपने मतको स्वतंत्र हो कर प्रकट किया। लामाओंको इस कारण उनपर बड़ा क्रोध आया और एक बार वे उनको मार डालनेके लिए तैयार हो गये। परन्तु फिर भी राममोहनराय अपने विश्वाससे तनिक भी विचलित न हुए। इस प्रकार चार वर्ष तक देशाटन करके वे स्वदेश लौटे।

इतने पर भी उनकी धर्म-पिपासा नहीं मिटी। इस लिए उन्होंने स्वदेशमें लौट कर ईसाई-धर्मके तत्त्वोंको जाननेका संकल्प कर लिया। उस समय उनकी अवस्था २२ वर्षकी हो गई थी। इसी अवस्थामें उन्होंने अँगरेजी पढ़ना आरंभ कर दिया। अनेक असुविधायें होने पर भी उन्होंने अँगरेजी का ऐसा अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया कि अँगरेज भी उनकी लेखन-शैली की प्रशंसा करने लगे। अँगरेजी पढ़कर उन्होंने बाइबिलको पढ़ा, परन्तु फिर भी उनके मनको शान्ति न मिली। इस लिए उन्होंने हिब्रू भाषा, जिसमें बाइबिल पहलें पहल लिखी थी, सीखी और उसी भाषामें बाइबिल पढ़ी। तत्पश्चात् उन्होंने लैटिन और ग्रीक भाषायें भी सीखीं।

कुछ समय बाद उनके पिताका देहान्त हो गया। इस लिए गृहस्थीका भार राममोहनराय पर आ पड़ा। वे रंगपुर की कलक्टरीमें दीवान हो गये और अपनी गृहस्थी चलाने लगे। उनके अफसर डिग्बी साहब बड़े गुणग्राही थे और उनसे सदा मित्रताका भाव रखते थे। कुछ काल बाद राममोहन-रायके दो छोटे भाइयोंका भी देहान्त हो गया। उनकी जायदाद भी अब राममोहनरायको मिल गई। इस जायदादसे काफी आमदनी होती थी। इस लिए राममोहनरायने नौकरी छोड़ दी। वे फिर धर्माध्ययनमें लग गये और अपने विचारोंको स्वतंत्रतासे प्रकट करने लगे। कुछ कालमें ही

बहुतसे बड़े बड़े लोग उनकी विद्या, बुद्धि और ज्ञानके कारण उनका आदर करने लगे। देहलीके बादशाहने उनको राजाकी उपाधिसे विभूषित किया। तत्पश्चात् राजा राममोहनराय इंग्लेण्ड और फ्राँस गये। वहाँके राजाओंने भी उन्हें अपने घर बुलाकर उनका बड़ा सम्मान किया। अंतमें राजा राममोहन-रायके अनेक प्रसिद्ध प्रसिद्ध मनुष्य अनुयायी हो गये।

आठवाँ अध्याय।

कार्यकुशल मनुष्य।

"क्रिया हि वस्तूपहिता प्रसीदति[1]।"—कालिदास।

"क्या तू उस मनुष्यको देखता है जो अपना काम मेहनतके साथ कर रहा है? वह राजाओंके यहाँ सन्मान पावेगा।"—सुलेमानकी कहावतें।

वे मनुष्य बड़ी भूल करते हैं जो कहते हैं कि "व्यापारी लोग निम्न-श्रेणीके हैं और पशुके समान व्यापारकी गाड़ीमें जुते रहते हैं। उनका काम यही है कि एक नियत मार्गसे कभी न हटें, अर्थात् लकीरके फकीर बने रहें और अपने हरएक कामको अपने आप चलने दें।" हाँ, यह सच है कि जिस तरह अनेक विज्ञानवेत्ता, साहित्यसेवी और नीतिज्ञ संकीर्ण विचारके होते हैं उसी तरह बहुतसे व्यापारी भी होते हैं, परन्तु, ऐसे भी व्यापारी हैं जिनके मस्तक बड़े विचारवान् और विस्तृत हैं और जो बड़े बड़े कामोंके चलानेकी योग्यता रखते हैं।

किसी बड़े व्यापारको सफलतापूर्वक चलानेके लिए मनुष्यमें एक खास तर-हकी योग्यता होनी चाहिए। उसको ऐसा कार्यकुशल होना चाहिए कि वह संकटके समयमें भी काम कर सके। उसमें बहुतसे मनुष्योंके श्रमकी व्यवस्था करनेकी योग्यता होना भी जरूरी है। उसमें ऐसी चतुराई होनी चाहिए कि मनुष्योंकी प्रकृतिको पहिचान सके। उसको अपनी उन्नति भी निरंतर करते रहना चाहिए और जीवनकी व्यवहारिक बातोंका अनुभव करना चाहिए।

---

१ अच्छे काममें किये हुए परिश्रममें अवश्य सफलता होती है।

अब विचार करो कि जब व्यापारमें इतने गुणोंकी आवश्यकता होती है, तब उसमें संकीर्णता कहाँ रही? निपुण व्यापारी मनुष्य महान् कवियोंके समान दुष्प्राप्य होते हैं। सच तो यह है कि व्यापार आदमीको आदमी बनाता है।

मूर्ख यह समझते हैं कि प्रतिभाशाली मनुष्य व्यापारके अयोग्य होते हैं और व्यापार मनुष्यको मानसिक कामोंके अयोग्य बना देता है; परन्तु यह उनकी बड़ी भूल है। कुछ वर्ष हुए एक मनुष्यने इस लिए आत्महत्या कर ली कि वह था तो आदमी, परन्तु पन्सारीका पेशा करता था। यह बात दिखलाती है कि उसका आत्मा पन्सारीकी सी श्रेष्ठता पानेके भी योग्य न था। व्यापार मनुष्यको नीच नहीं बनाता; किन्तु मनुष्य व्यापारको नीच बना देता है। हरएक व्यापार—चाहे हाथसे किया जाय चाहे मन द्वारा—श्रेष्ठ है, यदि उसमें ईमानदारीके साथ लाभ हो सकता हो। व्यापारमें चाहे हाथ मैले हो जायँ, परन्तु हृदय तो पवित्र रहता है। द्रव्यका मल उतनी अपवित्रता करनेवाला नहीं होता जितना चारित्रका मल होता है।—धूर्तता धूलकी अपेक्षा और पाप पंककी अपेक्षा कहीं जियादा मलिनता पैदा करते हैं।

महात्माओंने बड़े बड़े उद्देशोंकी पूर्तिमें लगे रहते हुए भी अपने निर्वाहके लिए ईमानदारीके साथ मेहनत करनेसे घृणा नहीं की है। महात्मा **थेलीज**, **सोलोन**–जिसने ऐथिन्स नगरको दूसरी बार बसाया था–और गणितज्ञ **हाईपरेटीज** सभी व्यापारी थे। अफलातूनने—जो अपनी बुद्धिमानीके कारण देवता कहा जाता है–अपनी ईजिप्टकी यात्राका खर्च रास्तेमें तेल बेचकर चलाया था। इंग्लेंडके कविशिरोमणि **शेक्सपियर** नाटकगृहोंके प्रबंधमें प्रवीण थे। प्रसिद्ध वैज्ञानिक **न्यूटन** टकसालके काममें बड़ा चतुर था और सन् १६९४ के नये सिक्के उसीने बनवाये थे, विख्यात अर्थशास्त्र **रिकार्डोने** हुंडियोंकी दलालीमें बहुत रुपया कमाया था। प्रसिद्ध ज्योतिषी **बेलीने** भी हुंडियोंकी दलाली की थी। रसायनशास्त्रज्ञ **ऐलन** रेशमी कपड़ा बुना करता था।

ऐसे उदाहरण आजकल भी बहुत मिलते हैं। इनसे सिद्ध होता है कि सर्वोत्तम मानसिक शक्ति और नित्यप्रतिके काम करनेकी योग्यता ये दोनों बातें एक दूसरेके विरुद्ध नहीं हैं। ग्रीसका प्रसिद्ध इतिहासज्ञ **ग्रोट** लंडनमें बंकका काम करता था। **ईश्वरचन्द्र विद्यासागर** प्रेसका प्रबंध करते थे। विश्वकोषके रचयिता **नगेन्द्रनाथ बसु** और अनेक धुरंधर विद्वान् लेखकोंने

प्रेसका प्रबंध किया था और करते हैं । माननीय राय बहादुर रंगनाथ नृसिंह मुधोलकर मध्यप्रदेशके सुप्रसिद्ध वकील और विद्वान् हैं, परन्तु वे व्यापारमें बड़े प्रवीण हैं । ' दि विहार ट्रेडिंग कम्पनी ' जो आजकल मजेसे चलती है उन्हींके परिश्रमका फल है । वे तीन चार व्यावसायिक कम्पनियोंके प्रबंधकर्ता हैं । प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता जान स्टुअर्ट मिल ईस्टइंडिया कम्पनीका हिसाब जाँचनेके काम पर नौकर थे और इस कामको योग्यतापूर्वक करनेसे उनकी बड़ी ख्याति हुई थी। मिलके सहयोगी अफसर उनकी प्रशंसा और आदर इस लिए नहीं करते थे कि वे बड़े भारी तत्त्ववेत्ता थे, किन्तु इसलिए कि वे दफ्तरके काममें बड़े निपुण थे और उनका काम बड़ा संतोषप्रद होता था । ज्योतिषशास्त्रज्ञ बिसाजी रघुनाथ लेलेने शुरूमें एक रोटीवालेके यहाँ और फिर एक अँगरेजी सौदागरके यहाँ नौकरी की थी । फिर वे मुन्सिफीमें मुहर्रिर हो गये । इसके बाद उन्होंने ग्वालियर राज्यका हिसाब किताब जाँचनेका काम किया । इस काममें वे बड़े होशियार थे । एक बार ब्रिटिश गवर्नमेंटने जो हिसाब ग्वालियर राज्यको भेजा था उसमें बिसाजी महाशयने एक पाईकी भूल निकाली थी । फिर वे मालवा प्रान्तके बन्दोबस्तमें चीफ अफसर नियत हुए । तत्त्ववेत्ता मिलके समान उनके साथियोंने भी उनका आदर उनके ज्योतिषविद्याविज्ञ होनेसे इतना नहीं किया जितना हिसाब किताबमें दक्ष होनेके कारण । वे ज्योतिषशास्त्रके नामी विद्वान् थे । उन्होंने वर्तमान पञ्चांगोंमें संशोधन किया और इंदौर राज्यकी ओरसे अपने ढंगका एक नया पञ्चांग प्रकाशित करना शुरू किया । महाभारत और रामायणके सम्बन्धमें उन्होंने कई बातोंकी खोज की और इस बातका पता लगाया कि प्राचीन भारतवासी दूरबीनका उपयोग करते थे ।

गुजरातीके सुप्रसिद्ध लेखक मनःसुखराम सूर्यराम त्रिपाठी व्यापारमें बड़े प्रवीण थे। उन्होंने एक महाजनकी दूकान पर केवल आठआना मासिकपर रह कर बही खाते लिखनेका काम सीखा था । वे कुछ दिनों तक बम्बईमें दलाली भी करते रहे । उन्होंने व्यापारमें बहुत धन कमाया। एक बार उनको बड़ा घाटा हुआ; परन्तु उन्होंने धैर्यपूर्वक फिर काम शुरू किया और उस कमीको शीघ्र ही पूरा कर लिया । वे व्यापार भी करते थे और विद्याध्ययन और साहित्य-सेवामें भी लगे रहते थे । व्यापारने उनके साहित्य-

संबंधी कामोंमें कुछ भी बाधा न पहुँचाई। उन्होंने 'अस्तोदय तथा स्वाश्रय' नामक गुजराती पुस्तक लिखी जिससे उनकी बड़ी ख्याति हुई। इस पुस्तकने जनसाधारणको और विशेष कर विद्यार्थियोंको बड़ा लाभ पहुँचाया। कुछ समय बाद उन्होंने वेदान्तदर्शन पर एक पुस्तक अँगरेजीमें लिखी जिससे पश्चिमी देशोंमें उनकी अच्छी ख्याति हुई। वहाँके विद्वानोंको उनकी यह पुस्तक बहुत पसंद आई। उन्होंने और भी अनेक ग्रंथ लिखे। वे व्यापारी और लेखक तो थे ही, परन्तु राजनीतिज्ञ भी बहुत अच्छे थे। अपनी निपुणताके कारण वे जूनागढ़ राज्यमें कौन्सिलरके पद पर ६००) मासिक पर नियत हुए। वे कई सभाओंके मंत्री और सभासद थे। बम्बई विश्वविद्यालयने उन्हें अपना फेलो भी बनाया था। वे साहित्य-सेवाका बहुत सा काम व्यापारके बीचमें अवकाश मिलने पर किया करते थे।

संस्कृतके सुप्रसिद्ध विद्वान् पण्डित तारानाथ तर्कवाचस्पति अच्छे व्यापारी थे। वे कपड़ा, चाँवल इत्यादिका व्यापार करते थे। उन्होंने छः वर्षतक कठिन अध्ययन करके तर्कवाचस्पतिकी उपाधि प्राप्त की थी। वे अनेक शास्त्रोंके विद्वान् थे। उन्होंने बहुत समय तक कलकत्ताके संस्कृत कालिजमें व्याकरणके प्रधान अध्यापकके पदको सुशोभित किया था। वे 'वाचस्पति अभिधान' नामक कोष बनाकर अपनी कीर्ति अमर कर गये हैं। कहते हैं कि, इस ग्रंथको लिखनेमें उनको बारह वर्ष लगे थे और अस्सी हजार रुपया खर्च करना पड़ा था। ऐसे बड़े कामने भी उनके व्यापारमें कुछ विघ्न न डाला।

व्यापारमें प्रायः समझदार आदमीको ही सफलता प्राप्त होती है। विद्योपार्जन अथवा वैज्ञानिक अन्वेषणके समान व्यापारमें भी धैर्ययुक्त परिश्रम और उद्योगकी जरूरत है। प्राचीन यूनानियोंका कथन है कि किसी काममें योग्यता प्राप्त करनेके लिए तीन बातें जरूरी हैं—स्वाभाविक गुण, अध्ययन और अभ्यास। व्यापारमें विवेक और श्रमपूर्वक अभ्यास करना सफलताका गुप्त रहस्य है। हाँ, कभी कभी कुछ मनुष्योंका भाग्यवश वैसे ही दाँव लग जाता है; परन्तु यह जुएमें जीते हुए धनके समान है जो मनुष्यको नाशकी ओर ले जाता है।

प्रत्येक युवकको याद रखना चाहिए कि उसके जीवनका सुख दूसरोंकी सहायता और कृपा पर इतना निर्भर नहीं है जितना स्वयं उसकी शक्तियोंपर।

यदि बुद्धिमानीके साथ श्रमपूर्वक उद्योग किया जाय तो उसका उचित फल मिले बिना नहीं रहता। ऐसा उद्योग मनुष्यको उन्नतिके मार्गपर ले जाता है, उसके व्यक्तिगत चरित्रको प्रकट करता है और दूसरोंको भी काम करनेमें उत्साहित करता है। चाहे सब लोग समान उन्नति न कर सकें, परन्तु हर-एक आदमी अपनी योग्यतानुसार उन्नति अवश्य कर सकता है।

यह अच्छा नहीं है कि मनुष्यके लिए जीवनमार्ग हदसे जियादा सुगम कर दिया जाय। श्रम करना और कष्ट उठाना इस बातसे अच्छा है कि हमारे सब काम कोई दूसरा कर दिया करे और हमको सोनेके लिए गुदगुदे बिस्तर मिल जाया करें। सच तो यह है कि मनुष्यको काम करनेमें उत्साहित करनेके लिए जीवनके प्रारंभमें जरूरतसे कम सामानका होना इतना आवश्यकीय है कि वह जीवनमें सफलता प्राप्त करनेके लिए एक आवश्यक साधन कहा जा सकता है। एक बार एक प्रसिद्ध न्यायाधीशसे किसीने पूछा कि "वकालतमें सफलता प्राप्त करनेके लिए सबसे बड़ा साधन क्या है?" उसने उत्तर दिया कि "कुछ लोग अपनी योग्यतासे सफलता प्राप्त करते हैं, कुछ उत्तम संबंधोंके द्वारा, कुछ दैवयोगसे, परन्तु जियादातर वे लोग सफलता प्राप्त करते हैं जिनके पास शुरूमें एक पैसा भी नहीं होता।"

मेहनत करनेकी जरूरतको व्यक्तियोंकी उन्नति और जातियोंकी सभ्यताकी असली जड़ समझना चाहिए। यदि किसी मनुष्यकी जरूरतें बिना हाथ-पैर हिलाये ही पूरी हो जाया करें और उसको किसी बातकी प्रतीक्षा, आकांक्षा अथवा उद्योग करनेकी जरूरत ही न रहे, तो उस मनुष्यके लिए इससे बढ़-कर दूसरा शाप क्या हो सकता है? यह विचार कि 'जीवनका न तो कोई उद्देश है और न उद्योग करनेकी आवश्यकता है, मनुष्यके लिए सब विचा-रोंसे अधिक कष्टदायक और असह्य होगा। बेकार रहते रहते मनुष्यकी जान तक चली जाती है।

जिन मनुष्योंको जीवनमें असफलता होती है वे प्रायः भोले भोले बन जाते हैं और तुरन्त ही समझ लेते हैं कि सिवाय उनके हरएक आदमी उनकी विपत्तिका कारण हुआ है। कुछ समय हुआ, एक प्रसिद्ध लेखकने एक पुस्तक प्रकाशित की थी जिसमें उसने अपनी व्यापारसंबंधी अनेक असफलताओंका

हाल लिखा है और साथ ही यह भी स्वीकार किया है कि " मैं पहाड़े नहीं जानता ! " और फिर भी उसने यह नतीजा निकाला है कि इस जमानेमें लोग धनके उपासक अधिक हो गये हैं और यही मेरी असफलताका कारण हुआ ! लैमर टाइन भी अंकगणितसे बड़ी घृणा करता था और इसका नतीजा यह हुआ कि उसको अपने कामोंमें असफलता हुई और उसके बुढ़ापेमें उसके मित्रोंने उसके निर्वाहके लिए चंदा इकट्ठा किया।

कुछ मनुष्य ऐसे भी हैं जो यह समझते हैं कि हमारा जन्म दुर्भाग्यके लिए ही हुआ है, संसार हमारे विरुद्ध है, इसमें हमारा कुछ अपराध नहीं। इस प्रकारके एक मनुष्यके संबंधमें हमने यह सुना है कि उसको अपने दुर्भाग्यपर अटल विश्वास था; वह कहा करता था कि " यदि मैं टोपी बेचनेवाला होता, तो बालक बिना सिरोंके ही पैदा होने लगते ! " एक रूषी कहावत है कि " विपत्ति मूढ़ताके साथ साथ चलती है। " यह बहुधा देखा गया है कि जो मनुष्य अपने भाग्यको रोया करते हैं वे असलमें अपनी असावधानी, कुप्रबंध, अदूरदर्शिता अथवा उद्योगहीनताके परिणाम भुगतते हैं। सुप्रसिद्ध डाक्टर जानसन जब लंडन नगरमें आये थे तब उनके पास केवल एक गिनी थी। उन्होंने सच कहा है कि " संसारके संबंधमें हमारी सब शिकायतें अनुचित हैं। मैंने ऐसे किसी गुणवान् मनुष्यको नहीं देखा जिसकी बूझ न हुई हो। अगर किसी मनुष्यको सफलता न हो तो समझो कि उसमें उसीका अपराध है। "

किसी व्यापारको भलीभाँति चलानेके लिए मुख्यतः इन गुणोंकी आवश्यकता है:–एकाग्रता, उद्योग, सावधानी, सुरीति, समयकी पाबंदी और तत्परता। ये बातें ऊपरी नजरसे छोटी मालूम होंगी, परन्तु ये मनुष्यके सुख और कल्याणके लिए अत्यंत आवश्यकीय हैं। यह सच है कि ये छोटी छोटी बातें हैं, परन्तु मनुष्यका जीवन इनसे भी छोटी छोटी चीजोंसे बनता है। छोटे छोटे कामोंसे मिलकर केवल मनुष्यका ही संपूर्ण चरित्र नहीं किन्तु जातीय चरित्र तक बनता है। जहाँ कहीं मनुष्यों अथवा जातियोंकी अवनति हुई है वहाँ ही यह बात मिलेगी कि उनका जीवनरूपी जहाज छोटी छोटी बातोंकी अवज्ञारूपी चट्टान पर टकरा गया होगा। हरएक आदमीको दुनियामें आकर कुछ काम करने पड़ते हैं। इस लिए उसको इन कामोंके करनेकी योग्यता

प्राप्त करनी चाहिए—चाहे उसे अपने घरका प्रबंध करना हो या कोई रोजगार करना हो या किसी जातिका शासन करना हो।

उद्योग-धंधे, कलाकौशल्य और विज्ञानके संबंधमें हम बड़े बड़े कार्यकर्ताओंके उदाहरण दे चुके हैं। वे यह दिखलानेके लिए काफी हैं कि जीवनके हरएक काममें निरंतर उद्योग करनेकी जरूरत है। हम रोजमर्रा देखते हैं कि एकाग्रचित्त होकर छोटी छोटी बातोंपर ध्यान देनेसे ही मनुष्यकी उन्नति होती है। परिश्रम सौभाग्यकी माता है। यह भी बहुत जरूरी है कि हम हरएक कामको ठीक ठीक करें। जिस मनुष्यमें यह गुण मौजूद है समझ लो कि उसको उत्तम शिक्षा मिली है। देख-भाल, बोल-चाल और काम-काज सभी बातें ठीक ठीक होनी चाहिएँ। जो काम किया जाय वह अच्छी तरह करना चाहिए। थोड़ेसे कामको भी अच्छी तरह करना इससे अच्छा है कि हम उससे दस गुने कामको अधूरा करके छोड़ दें। एक बुद्धिमान् मनुष्य कहा करता था—"कुछ विश्राम भी करना चाहिए। ऐसा करनेसे काम जल्दी समाप्त हो जाता है।"

सूक्ष्म दृष्टि रखकर सावधानीसे काम करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण गुण है, परन्तु इस पर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। कुछ दिन हुए एक प्रसिद्ध विद्वान्ने कहा था कि "मुझे इस बातसे आश्चर्य होता है कि अबतक मुझे ऐसे मनुष्य बहुत कम मिले हैं जो किसी विषयको अच्छी तरह साफ साफ समझा सकते हों।"

व्यापारसंबंधी छोटे छोटे मामलोंमें भी दूसरे मनुष्योंको अपने पक्षमें करनेका एक खास तरीका होता है। यदि कोई मनुष्य धर्मात्मा, योग्य और सदाचारी भी हो, परन्तु उसमें असावधानीकी आदत हो, बारीकीसे काम करनेकी ओर नजर न हो तो उसका कोई भी विश्वास न करेगा। ऐसे मनुष्यके कामको बारबार जाँचना पड़ता है और इस लिए मनुष्य अत्यन्त अड़चन, उलझन और तकलीफका कारण होता है।

हर एक कामको विधि या नियमपूर्वक करना जरूरी है। ऐसा करनेसे संतोषपूर्वक अधिक काम हो सकता है। सिसिलका कथन है कि "काम करनेकी विधि संदूकमें चीजें रखनेके समान है। अच्छा रखनेवाला बुरे रखनेवालेकी अपेक्षा ड्योढ़ी चीजें रख सकेगा।" वे स्वयं भी सब कामकाज असा-

धारण शीघ्रताके साथ कर लेते थे। उनका सिद्धान्त था कि "बहुतसे कामोंको सबसे जल्दी करनेका यही तरीका है कि एक दफेमें एक काम किया जाय।" और वे किसी कामको इस उम्मेद पर अधूरा न छोड़ते थे कि अधिक अवकाश मिलनेपर उसे फिर कर लेंगे। जब उनके पास काम बहुत हो जाता था तब वे अपने भोजन और आराम करनेके समयको भी कम कर देते थे, परन्तु अपने कामके किसी हिस्सेको बिना किये न छोड़ते थे। डीविटका भी यही सिद्धान्त था कि "एक दफेमें एक ही काम करना चाहिए।" वे कहा करते थे। कि "अगर मुझे कुछ करना होता है, तो जब तक वह समाप्त नहीं हो जाता तब तक मैं किसी और बातका खयाल तक नहीं करता। अगर मुझे घरका कोई काम करना हो, तो मैं एकाग्रचित्त होकर उसीमें लग जाता हूँ और उसे पूरा किये बिना नहीं छोड़ता।"

'आजका काम कल पर कभी मत छोड़ो,' यह सिद्धान्त बड़े कामका है। 'जो कल हो सके उसे आज कभी मत करो,' यह उलटा सिद्धान्त उन लोगों का है जो आलसी और निकम्मे हैं। ऐसे ही आदमी अपना सब काम काज अपने गुमाश्तों पर छोड़ देते हैं; परन्तु गुमाश्तों पर हमेशा विश्वास न करना चाहिए—जरूरी बातोंकी देखरेख स्वयं करनी चाहिए। एक अँगरेजी कहावत है कि "यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा काम हो जाय, तो तुम उस कामको स्वयं जाकर करो; और यदि तुम चाहते हो कि वह काम न हो तो किसी औरको भेज दो।" हिन्दीमें भी इसी तरहकी एक प्रसिद्ध कहावत है कि "आप काज महा काज।"

एक आलसी जमींदारके पास कुछ जमीन थी जिसकी आदमनी लगभग आठ हजार रुपया सालाना थी। वह जमींदार कर्जदार हो गया, इस लिए उसने अपनी आधी जमीन बेच डाली और बाकी जमीन एक मेहनती किसानको बीस वर्षके लिए किराये पर उठा दी। जब बीस वर्ष बीत गये तब वह किसान अंतिम वर्षका किराया चुकानेके लिए आया और उसने जमींदारसे पूछा कि "क्या आप यह जमीन बेचेंगे?" जमींदारने विस्मित होकर पूछा, "क्या तुम खरीदोगे?" किसानने जवाब दिया, "हाँ, अगर दाम पट जायँ तो ले लूँगा।" जमींदारने कहा कि "यह अत्यन्त आश्चर्यजनक बात है। मुझे इसका कारण बताओ कि मेरा निर्वाह इससे दूनी जमीनसे भी,

जिसका मुझे लगान भी नहीं देना पड़ता था, नहीं होता था, और तुम मुझे बराबर तीन हजार रुपया सालाना किराया देते रहे हो तिस पर भी उसको मोल लेनेके योग्य हो गये हो " उसने उत्तर दिया कि " इसका कारण तो स्पष्ट है। आप बेकार बैठे रहे और मैं कमर कसकर काममें लगा रहा। आप चारपाई पर पड़े-पड़े चैन किया करते थे और मैं प्रातःकाल उठकर अपने काम-काजमें लग जाता था।"

समयके मूल्यको समझकर काम करनेमें विलम्ब न करना चाहिए। इटलीका एक विद्वान् कहा करता था कि "समय मेरी जायदाद है और यह एक ऐसी जायदाद है कि बिना जोतेहुए (परिश्रम किये हुए) तो इसमें कुछ पैदा नहीं होता; परन्तु इसको सुधार लेनेसे परिश्रमी कार्यकर्ताका परिश्रम कभी निष्फल नहीं जाता। अगर इसे खाली पड़ा रहने दें, तो इसमें अहितकर घास और काँटे पैदा हो जायँगे।" कामकाजमें निरंतर लगे रहनेसे एक फायदा तो यह होता है कि मनुष्यका मन पापकी ओर नहीं जाता; क्योंकि बेकारीमें मनमें तरह तरहके अशुभ विचार उमड़े हुए चले आते हैं। जब मनुष्य कामकाजमें लगे रहते हैं तब लड़ाई-झगड़े भी कम होते हैं। इसीके अनुसार एक महाशय, जब उनके नौकरोंके पास कुछ काम करनेको न होता था, तब उनको यह हुक्म देते थे कि " सब चीजोंको साफ करो।"

कार्यकुशल मनुष्य कहा करते हैं कि " समय धन है " परन्तु वास्तवमें वह धनसे भी बढ़कर है। समयके उचित प्रयोगसे अपना सुधार, अपनी उन्नति और चरित्रकी उन्नति होती है। आलस्यसे अथवा बेमतलब बातोंसे यदि एक घंटा रोज बचाया जाय और अपनी उन्नति करनेमें लगाया जाय, तो मूर्ख मनुष्य भी कुछ वर्षोंमें बुद्धिमान् बन जाय, और यदि यही समय अच्छे कामोंमें लगाया जाय तो उस मनुष्यका जीवन सार्थक हो जाय और मरतेसमय तक वह अनेक शुभकर्म कर डाले। यदि अपनी उन्नति करनेमें १५ मिनिट भी हर रोज लगाये जायँ तो एक सालके बाद इसका नतीजा खूब अच्छी तरह मालूम होने लगेगा। उत्तम विचार और सावधानीके साथ प्राप्त किया हुआ अनुभव कुछ भी जगह नहीं घेरते और हम उनको अपने साथियोंके समान सर्वत्र ले जा सकते हैं। उनके ले जानेमें न तो कुछ खर्च पड़ता और न कुछ बोझ मालूम होता है। समयका उचित उपयोग करनेसे बहुत समय बच रहता

है । ऐसा करनेसे काम भी चल निकलता है और मनुष्य स्वयं कामके बोझसे दब नहीं जाता । जो मनुष्य समयका खयाल नहीं रखता उसे हर काममें जल्दी करनी पड़ती है, वह घबड़ाया हुआ रहता है, उसको नई नई कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है, उसका सारा जीवन जल्दी करनेके उपाय सोचनेमें ही व्यतीत होता रहता है और उसे प्रायः मुसीबतें घेरे रहती हैं। नैल्सनने एक बार कहा था कि " मुझे अपने जीवनकी सारी सफलतायें नियत समयसे पाव घंटा पहले तैयार रहनेसे प्राप्त हुई हैं । "

कुछ लोग रुपयेकी कदर उस वक्त तक नहीं समझते जबतक कि वे निर्धन नहीं हो जाते । बहुतसे लोग समयके विषयमें भी ऐसा ही करते हैं । वे पहले तो समयको बेकारीमें निकाल देते हैं और जब जीवनके दिन शीघ्रतासे कम होते जान पड़ते हैं तब उन्हें समयके सदुपयोगका ध्यान आता है । परन्तु उस समय तक प्रायः आलस्यकी आदत ऐसी पक्की हो जाती है और उनको इस तरह जकड़ लेती है कि उसको दूर करना उनकी ताकतके बाहर हो जाता है । याद रक्खो कि खोया हुआ धन परिश्रमसे, खोई हुई विद्या अध्ययनसे, खोया हुआ स्वास्थ्य (तन्दुरुस्ती) संयम अथवा औषधसे हाथ आ सकता है, परन्तु खोया हुआ समय सदैवके लिए चला जाता है । 'गया वक्त फिर हाथ आता नहीं ।'

समयकी कदर अच्छी तरह जान लेनेसे समयकी पाबंदीकी भी आदत पड़ जाती है । फ्रांस देशके सम्राट् लुई चौदहवें कहा करते थे कि " समयकी पाबंदी राजाओंकी सुशीलताका चिह्न है। " समयकी पाबंदी करना सज्जनोंका भी कर्तव्य है और व्यवसायी लोगोंके लिए तो बहुत जरूरी है । इस गुणसे मनुष्य बहुत जल्द दूसरोंका विश्वासपात्र बन जाता है और इसके न रहनेसे दूसरोंका विश्वास उसके ऊपरसे बहुत जल्द उठ जाता है । जो मनुष्य नियत समयका खयाल रखता है, उसका दूसरोंको इन्तिजार नहीं करना पड़ता और इससे मालूम होता है कि उसे दूसरोंके समयका और अपने समयका भी बड़ा खयाल है । इस लिए समयकी पाबंदी यह दिखलाती है कि हम दूसरोंका आदर करते हैं । समयकी पाबंदी करना एक प्रकारका कर्तव्य-पालन है। समयकी पाबंदी न करनेसे हमारा वायदा झूठा हो जाता है, दूसरोंका समय नष्ट होता है और इस लिए हमारे चरित्रपर भी धब्बा लगता है । हमारा

यह स्वाभाविक अनुमान होता है कि जो मनुष्य समयके विषयमें असावधान है वह व्यवहारमें भी असावधान होगा और जरूरी बातोंमें उसका विश्वास न करना चाहिए। एक दिन जार्ज वाशिंगटनके मंत्री अपने कामपर देरमें आये और अपनी घड़ीके गलत होनेका बहाना करने लगे। वाशिंगटनने धीरेसे कहा कि "या तो तुम दूसरी घड़ी रक्खो या मैं दूसरा मंत्री रक्खूँगा।" नाना फडनवीस समयके बड़े पाबंद थे। उनके सब काम नियमानुकूल होते थे; समयका जरा भी अपव्यय न होने पाता था। इससे न मालूम कितना काम उनके हाथोंसे हो जाता था। वे बड़े सबेरे उठते थे और आधीरात तक काम किया करते थे।

जो मनुष्य समयका खयाल नहीं रखता और उसका उचित उपयोग नहीं करता वह दूसरोंकी शान्तिको भी भंग कर देता है। जिन मनुष्योंको उससे काम पड़ता रहता है उन सबका हर्ज हो जाता है। जिस मनुष्यको समयका खयाल नहीं उसे हरकाममें देर हो जाती है। वह जिस समयका वायदा कर देता है उसके बाद आता है। रेलके स्टेशन पर उस वक्त पहुँचता है जब रेल चल देती है और लैटर बक्समें पत्र उस वक्त डालता है जब चिट्ठियाँ निकल चुकती हैं। ऐसा करनेसे सब काम गड़बड़ हो जाता है और जिस मनुष्यसे उसका काम पड़ता है उसका मन बिगड़ जाता है। यह बात प्रायः मिलेगी कि जो मनुष्य इस तरह समयमें पिछड़े रहते हैं वे सफलतामें भी पिछड़े रहते हैं; और संसार उनकी कुछ परवा नहीं करता। ऐसे लोग सदा अपने भाग्यकी ही शिकायत किया करते हैं।

हर एक उच्चश्रेणीके कार्यकर्तामें काम करनेके मामूली गुणोंके सिवाय और गुण भी होने चाहिए--उसमें हर बातको जल्दीसे समझनेकी योग्यता होनी चाहिए और उसको अपने इरादोंके पूरा करनेमें दृढ़ होना चाहिए। चतुराईका होना भी जरूरी है। यद्यपि यह गुण स्वाभाविक है, तो भी आलोचना और अनुभवसे इसकी उन्नति की जा सकती है। जिन मनुष्योंमें यह गुण होता है वे हरएक काम करनेका उचित मार्ग शीघ्र ही जान लेते हैं और यदि उनमें निर्णय करनेकी शक्ति भी हो, तो वे शीघ्र ही सफलता प्राप्त कर लेते हैं। ये गुण उन लोगोंके लिए विशेष मूल्यवान् बल्कि अनिवार्य हैं जिनको बहुतसे आदमियोंसे काम लेना पड़ता है। उदाहरणके लिए एक सेनापतिको

ले लीजिए। उसको केवल बहादुर ही नहीं किन्तु कार्यकुशल भी होना चाहिए। उसको चतुर और मनुष्यके स्वभावका पहचाननेवाला होना चाहिए। उसमें इस बातकी योग्यता होनी चाहिए कि वह बहुतसे आदमियोंको युद्ध-पर भेजनेका, उनके खाने कपड़ेका और दूसरी जरूरी बातोंका प्रबंध कर सके। इन बातोंमें **नैपोलियन** और **वैलिंगटन** दोनों ही उच्चश्रेणीके कार्य-कुशल मनुष्य थे।

नैपोलियन कार्सीका टापूका रहनेवाला एक साधारण सैनिक था। अपनी योग्यतासे वह फ्रांसदेशका प्रधान सेनापति हो गया और अंतमें उसी देशका राजा हो गया। यद्यपि वह छोटी छोटी बातोंसे भी बड़ा प्रेम रखता था, परन्तु उसकी विचार करनेकी शक्ति बड़ी विलक्षण थी। इसी शक्तिके कारण वह दूरकी बात भाँप लेता था और बहुतसे आदमियोंके लिये छोटी छोटी बातोंका भी प्रबंध झटपट कर डालता था। वह मनुष्यके चरि-त्रको कुछ ऐसा पहचानता था कि अपने कामके लिए सबसे बढ़िया आदमी चुन लेता था और चुनावमें कभी धोखा न खाता था। जरूरी बातोंमें जहाँ-तक हो सकता था वह अपने गुमाश्तों पर बहुत कम विश्वास करता था। इस बातका समर्थन सन् १८०७ की एक घटनासे खूब अच्छी तरह होता है।

उस समय नैपोलियनकी सेना एक नदीके किनारे पड़ाव डाले पड़ी थी। उसके सामने रूसी थे, दायें तरफ आस्ट्रियावाले थे और पीछेकी तरफ प्रशिया (जर्मनी) वाले थे। ऐसी हालतमें नैपोलियनके लिए फ्रांससे संबंध रखना बड़ा कठिन था; परन्तु उसने यह काम ऐसी योग्यतासे किया कि वह कभी परास्त न हुआ। फौजोंका आना जाना, फ्रांस, स्पेन, इटली और जर्मनीसे नई फौजोंका लाना, नहरें खुदवाना, पोलेण्ड और प्रशियाकी पैदावारको अपने पड़ावकी जगह तक शीघ्रतासे लानेके लिए सड़कें बनवाना इत्यादि अनेक बातोंकी वह जरा जरा देखरेख रखता था। वह घोड़े मँगवाता था, जीन मँगानेका इन्तजाम करता था और सैनिकोंके लिए कपड़े, जूते और भोजन मँगाने और रखनेका प्रबंध करता था। इन कामोंके साथ ही साथ फ्रेञ्च कालिजके नये प्रबंधके संबंधमें हिदायतें देता था, अपने देशवासियोंकी शिक्षाकी व्यवस्था सोचता था, समाचारपत्रोंके लिए लेख लिखता था, हिसा-बोंकी जाँच करता था, शिल्पकारोंको गिरजा बनानेके विषयमें हिदायतें देता

था, पेरिसके सामयिकपत्रों पर तानें कसता था, थिएटरोंके झगड़ोंको शान्त करता था और विदेशी राजाओंसे पत्रव्यवहार करता था। उसका शरीर तो एक स्थानपर रहता था, परन्तु मन सारे संसारमें फिरता था।

एक ही समयमें वह अनेक काम करता था। एक पत्रमें उसने अपने एक सेनापतिसे पूछा कि "तुमको मेरी भेजी हुई बंदूकें ठीक ठीक मिल गईं या नहीं ?" दूसरे पत्रमें उसने अपने एक दूसरे आदमीको बूर्टमबर्गकी फौजोंको कपड़े जूते इत्यादि बाँटनेके लिए लिखा; तीसरे आदमीको उसने फौजके लिए दूना नाज भेजनेके लिए मजबूर किया, चौथे आदमीको उसने लिख भेजा कि "फौजको कमीजोंकी जरूरत है और वे अभी तक नहीं मिलीं।" पाँचवें आदमीसे उसने पूछा कि "मुझे बतलाओ कि तुमने बिसकुट और रोटीका इन्तजाम कर लिया या नहीं।" छट्ठे आदमीको लिखा कि "सैनिक शिकायत करते हैं कि हमको अभी तलवारें नहीं मिलीं। किसी अफसरको तलवारें लानेके लिए पोसन भेज दो। उनको टोपियोंकी भी जरूरत है। उन्हें एवलिंग नगरसे बनवाकर मँगा लो।...याद रक्खो कि सोनेसे काम नहीं चलेगा।" इस तरह नैपोलियन किसी छोटी बातको भी न छोड़ता था, और सब आदमियोंको काममें लगाये रहता था। जब कभी कामकी जियादती हो जाती थी तब वह रातके समय बहुत देर तक काम करता रहता था।

वैलिंगटन भी नैपोलियनके समान कार्यकुशल थे और यह कहनेमें कुछ अत्युक्ति न होगी कि इसी कार्यकुशलताके कारण वे किसी युद्धमें कभी न हारे। वे भारतवर्षमें भी कई वर्ष तक रहे थे। उस समय मराठाओं और अँगरेजोंमें युद्ध हो रहा था। इस युद्धमें वैलिंगटनने असाईकी लड़ाई जीती थी। इस देशमें बहुत कुछ ख्याति पाकर वे इंग्लेण्ड चले गये और यूरोपमें भी उन्होंने अनेक अवसरोंपर विजय प्राप्त की। उन्हें अपनी ख्यातिका कभी घमंड न हुआ। युद्धोंमें उन्होंने कष्ट भी बहुत उठाये, परन्तु वे अपने कर्तव्यपालनसे कभी पीछे न हटे। अँगरेजोंके यशको उन्होंने खूब फैलाया।

महाराष्ट्रकेसरी शिवाजी भी कार्यकुशलता और चतुराईमें बहुत बढ़े चढ़े थे और इसी कारण उनको इतनी सफलता प्राप्त हुई। औरंगजेबका भेजा हुआ सरदार अफजल खाँ शिवाजीके सामने ठहर न सका, क्योंकि शिवाजी बड़ी शीघ्रतासे अचानक ही उसके पास पहुँच गये। जब उसने शिवाजीके

आनेका समाचार सुना तब वह अपने घरकी खिड़कीसे निकल भागा और जीवनपर्यंत शिवाजीसे डरता रहा। औरंगजेबके पंजेमें फँसकर मिठाईके टोकरेमें बैठकर निकल आना शिवाजीका ही काम था। ऐसी चतुराई बहुत कम देखनेमें आती है। हजार कोशिश करनेपर भी औरंगजेब शिवाजीको फिर अपने फंदेमें न फँसा सका। नैपोलियनके समान शिवाजी प्रारंभमें एक साधारण सैनिक थे, परन्तु बढ़ते बढ़ते वे विशाल मराठाराज्यके शासक बन गये।

महाराणा प्रतापने अनेक अवसरोंपर ऐसा प्रताप और ऐसी कार्यकुशलता दिखलाई कि बैरी देखकर दंग रह गये। उन्होंने राजपूतोंका मुख सदाके लिए उज्ज्वल कर दिया। प्रतापके सिंहासनारूढ़ होनेके कुछ काल बाद मारवाड़, अंबर, बीकानेर और बूँदीके राजा अकबरकी ओर हो गये, यहाँ तक कि प्रतापके सहोदर भाई सगरजीने भी प्रतापका साथ न दिया। परन्तु प्रताप कार्यकुशल थे; इन संकटोंने उनके साहसको और भी बढ़ा दिया। उन्हें चित्तोड़ छोड़ना पड़ा और जंगलोंमें रहकर वृक्षोंके फल और घास तक खानी पड़ी। प्रतापने संकल्प कर लिया कि जब तक मैं अपने राज्यको न ले लूँगा और प्राचीन गौरवको फिर न पा लूँगा तब तक न तो सोने चाँदीके बरतनोंमें भोजन करूँगा और न पलंग पर सोऊँगा। उन्होंने अपने इस प्रणको मरते दम तक निभाया। हल्दीघाटके युद्धमें एक बार प्रतापने मुगलोंके दाँत खट्टे कर दिये, परन्तु प्रताप और उनके थोड़ेसे राजपूत मुगलोंकी बड़ी भारी सेनासे कब तक लड़ सकते थे? अन्तमें प्रतापको भी रणक्षेत्र छोड़ना पड़ा। अकबरने प्रतापके पकड़नेका बहुत प्रयत्न किया; परन्तु प्रताप कभी तो पहाड़ों और जंगलोंमें चले जाते थे और कभी युद्ध करने लगते थे।

"सुख मानकर वर्षों भयंकर सर्व दुःखोंको सहा।
पर व्रत न छोड़ा शाहको बस 'तुर्क' ही मुखसे कहा॥"

वे मुगलोंके हाथ कभी न आये। यह प्रतापकी कार्यकुशलता ही थी कि उन्होंने थोड़ेसे राजपूतोंकी सहायतासे एक ऐसे राज्यकी सेनासे मुकाबला किया जो उस समय बहुत ही बड़े शक्तिशाली राज्योंमें गिना जाता था।

जिस तरह और बातोंमें ईमानदारीकी जरूरत है उसी तरह व्यापारमें भी ईमानदारीसे कामयाबी होती है। सब तरहके व्यवहारमें ईमानदारीका

खयाल सबसे पहले होना चाहिए। जिस तरह सैनिकको गौरवका और धर्मात्मा मनुष्यको दयाका खयाल रहता है उसी तरह व्यापारी, सौदागर और कारीगरको ईमानदारीका खयाल होना चाहिए। छोटेसे छोटे पेशेमें भी इमानदारी बरती जा सकती है। राज मजदूर भी अपना काम अच्छी तरह करके ईमानदार बन सकते हैं। कारीगरोंको यश और ख्याति ही नहीं किन्तु बहुत कुछ सफलता भी इस बातसे प्राप्त होती है कि वे जिस चीजको बनावें उसमें किसी तरहका धोखा न दें। सौदागरोंको भी सफलता इस बातसे प्राप्त होती है कि वे जिस चीजको जैसी कह कर बेचें वह असलमें वैसी ही हो। धोखेबाजी और धींगाधींगीसे चाहे हम कुछ समयके लिए सफलता प्राप्त कर लें, परन्तु स्थायी सफलता ईमानदारीसे ही मिलती है। मशल मशहूर है कि 'काठकी हाँड़ी दूसरी बार नहीं चढ़ती।' जब कलई खुल जाती है तब सारी शेखी किरकिरी हो जाती है। किसी देशकी नामवरी और वहाँकी पैदावार, अथवा बनी हुई चीजोंकी उत्तमता वहाँके सौदागरों और कारीगरोंके साहस, प्रतिभा और उद्योग पर ही निर्भर नहीं है किन्तु उनकी अकलमन्दी, किफायतसारी और इन दोनोंसे बढ़कर ईमानदारी पर कहीं जियादा निर्भर है। यदि इँग्लेण्ड इत्यादि किसी देशके व्यापारी इन गुणोंको तिलांजलि दे दें, तो उनके तिजारती जहाज दुनियाके सब मुल्कोंसे निकाल दिये जायँ।

और कामोंकी अपेक्षा तिजारतमें चरित्रकी जियादा कठिन परीक्षा होती है। व्यापारमें ईमानदारी, स्वार्थत्याग, न्यायपरायणता और सच्चाईकी सबसे कड़ी परीक्षा होती है और वे व्यापारी, जो उन परीक्षाओंमें सच्चे उतरते हैं, शायद उतनी ही इज्जतके काबिल हैं जितने वे सैनिक जो तोपोंके सामने भयानक धुआँधार युद्धोंमें अपनी वीरताका परिचय देते हैं। हम यह मानते हैं कि अनेक व्यापारोंमें जो करोड़ों आदमी लगे हुए हैं वे प्रायः इस परीक्षामें सच्चे उतरते हैं और यह बात उनके लिए बड़े गौरवकी है। यदि हम थोड़ी देरके लिए सोचें कि हर रोज मामूली नौकरोंको, जो स्वयं बहुत थोड़ा वेतन पाते हैं, कितनी बड़ी बड़ी रकमें सौंप दी जाती हैं—दूकानदारों, मुनीमों दलालों और बंकोंके मुहर्रिरोंके हाथोंमें होकर हररोज कितना रुपया आता जाता रहता है—और इन प्रलोभनोंके बीचमें भी विश्वासघातके काम कितने

कम होते हैं, तो यह मानना पड़ेगा कि यह प्रतिदिनकी ईमानदारी मनुष्यके चरित्रके लिए बड़े गौरवकी बात है। व्यापारियोंको एक दूसरेका भी बड़ा विश्वास रहता है, क्योंकि वे आपसमें माल उधार देते रहते हैं। व्यापारके लेन-देनमें यह बात कुछ ऐसी साधारण हो गई है कि हमको बिलकुल आश्चर्य नहीं मालूम होता। एक विद्वान्‌ने खूब कहा है कि "मनुष्य एक दूसरेके साथ जो भक्ति रखते हैं उसका यह सर्वोत्तम उदाहरण है कि सौदागर अपने दूर-दूरके मुनीमोंपर-जो शायद उनसे आधी दुनियाकी दूरी पर हैं-ऐसा पक्का विश्वास रखते हैं और बहुधा उन लोगोंको, जिनको उन्होंने शायद कभी नहीं देखा, सिर्फ उनकी ईमानदारीके भरोसे पर प्रचुर धन भेज देते हैं।

यद्यपि साधारणतया व्यापारमें ईमानदारीका बर्ताव होता है, तो भी बेईमानी और धोखेबाजीके सैकड़ों काम देखनेमें आते हैं। बहुतसे व्यापारी अच्छी चीजोंमें निकम्मी चीजोंकी मिलावट कर देते हैं, जैसे घीमें चर्बी अथवा दूधमें पानी; ठेकेदार बेगार टाल देते हैं, जैसे जुलाहे खालिस ऊनकी जगह ऊनी-सूती कपड़े भेज देते हैं, कारीगर फौलादके बजाय ढले हुए लोहेके औजार, बिना छिद्रकी सुइयाँ और उस्तरे जो केवल देखनेहीके होते हैं, इत्यादि अनेक निकम्मी चीजें दे देते हैं। परन्तु ऐसी बातोंको असाधारण समझना चाहिए, क्योंकि ऐसा वे लोग करते हैं जिनके विचार नीच हैं। ऐसे मनुष्य धनी हो सकते हैं; परन्तु सदाचारी नहीं हो सकते और न उनके चित्तको शान्ति ही मिल सकती है जिसके बिना सारी दौलत दो कौड़ीकी है। बिशप लेटिमरसे एक दूकानदारने एक चाकूके दो आने ले लिये, जो असलमें एक आनेका भी न था। इस विषयमें उसने अपने एक मित्रसे कहा कि "उस धूर्तने मुझको नहीं किन्तु अपने ही अंतःकरणको धोखा दिया।"

संभव है कि जो आदमी पक्का ईमानदार है वह उतनी जल्दी धनाढ्य न हो जितनी जल्दी बेईमान आदमी; परन्तु जो सफलता धोखे या बेईमानीके बिना प्राप्त होती है वही सच्ची सफलता है। चाहे मनुष्य कुछ समय तक असफल ही रहे, परन्तु उसको ईमानदार रहना चाहिए। चाहे सर्वस्व जाता रहे परन्तु चरित्रकी रक्षा करनी चाहिए; क्योंकि चरित्र स्वयं धन है। यदि अच्छे उद्देशवाला मनुष्य वीरताके साथ दृढ़ बना रहे, तो उसको सफलता भी अवश्य होगी और उसको इसका सर्वोत्तम फल मिले बिना नहीं रहेगा।

नौवाँ अध्याय।
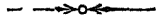
धनका सदुपयोग और दुरुपयोग।

" आयके अनुसार ही व्यय नित्य करना चाहिए,
द्रव्य संग्रह कर समयके अर्थ रखना चाहिए।
नियम यह सम्पत्ति-विषयक याद जो रखता नहीं,
दुःख पाकर लोकसुखका स्वाद वह चखता नहीं ॥"

–मैथिलीशरण गुप्त।

" धन उधार दो न लो, क्योंकि कर्ज देनेसे बहुधा कर्ज और मित्र दोनों हाथसे चले जाते हैं और कर्ज लेनेसे किफायतके काममें शिथिलता आ जाती है।"

–शेक्सपियर।

" जमीनमें गाड़कर रखनेके लिए अथवा गुलछर्रे उड़ानेके लिए धन इकट्ठा मत करो; हाँ स्वतंत्र रहनेके लिए धन अवश्य इकट्ठा करना चाहिए।"–बर्न्स।

" धनके विषयमें कभी असावधानी न करो–धन चरित्र है।"

–बुलवर-लिटन।

किसी आदमीकी विवेक-बुद्धिकी जाँच यह जाननेसे हो सकती है कि वह आदमी रुपया किस तरह कमाता, बचाता और खर्च करता है। यह सच है कि मनुष्यके जीवनका मुख्य उद्देश रुपया जमा करना नहीं है तो भी रुपयेको तुच्छ न समझना चाहिए, क्योंकि वह शारीरिक सुख और सामाजिक कुशलका बहुत बड़ा साधन है। उदारता, ईमानदारी, न्यायशीलता, स्वार्थत्याग, मितव्ययता, दूरदर्शिता इत्यादि अच्छे अच्छे गुण धनके सदुपयोगसे घनिष्ठ संबंध रखते हैं। इनके विपरीत लोभ, कपट, अन्याय और स्वार्थपरता आदि अवगुण हैं, जो उन लोगोंमें होते हैं जो धनके लिए सदा हाय हाय किया करते हैं। अमितव्ययता, अपव्ययता और अदूरदर्शिताके अवगुण धनके दुरुपयोग करनेवालोंमें पाये जाते हैं। एक विद्वान्‌का कथन है कि जो आदमी रुपया कमाना, बचाना, खर्च करना, देना लेना,

उधार देना और उधार लेना, और अपने कुटम्बके लिए छोड़ जाना भली भाँति जानता है वह बड़ा निपुण है।

गृहस्थ-जीवनमें सुख बहुत जरूरी है। हरएक आदमीको इख्तियार है कि वह उसके पानेकी यथाशक्ति कोशिश करे। सुखसे शरीरको संतोष मिलता है। जो हमारी मानसिक और आत्मिक उन्नतिके लिए जरूरी है। इसीके द्वारा हम अपने कुटुम्बका पालन पोषण कर सकते हैं जो हमारा धर्म है। हमको अपने इस कर्तव्यसे कभी आनाकानी न करनी चाहिए; क्योंकि दूसरे लोग जो हमारा आदर करते हैं वह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर हैं कि जीवनमें उन्नति करनेके जो मौके हमको मिलते हैं उनका हम कैसा उपयोग करते हैं। कुटुम्बके पालन पोषणके लिए जो कोशिश की जाती है उससे एक तरहकी शिक्षा मिलती है। ऐसी कोशिशसे कई तरहके फायदे होते हैं—इससे मनुष्य अपनी कदर करना सीखता है, उसकी काम करनेकी शक्तियाँ बढ़ती हैं और संतोष, उद्योग इत्यादि गुणोंको काममें लानेकी आदत पड़ती है। दूरदर्शी और सावधान मनुष्य विचारवान् अवश्य होते हैं क्योंकि, विचारके अंकुरोंके बिना दूरदर्शिता आदि गुण आते ही नहीं हैं। ऐसे मनुष्य वर्तमान कालके लिए ही नहीं किन्तु आगेका खयाल करके भविष्यके लिए भी प्रबंध करते हैं। उनको संयमी भी होना चाहिए, और स्वार्थनिरोधका भी अभ्यास करना चाहिए; क्योंकि मनुष्यके चरित्रको पुष्ट करनेवाला इससे बढ़कर दूसरा गुण नहीं है! जान स्टर्लिंगने सच कहा है कि "बुरीसे बुरी शिक्षा जो स्वार्थनिरोध सिखलाती हो ऐसी सर्वोत्तम शिक्षासे अच्छी है जो स्वार्थनिरोधको छोड़कर और सब कुछ सिखलाती हो।" अपने ऊपर अधिकार पाना सबसे बड़ा गुण है।

स्वार्थनिरोधका अर्थ यह है कि किसी मिलते हुए सुखको इस लिए त्याग देना कि ऐसा करनेसे आगे चलकर कुछ भलाई होगी। यह शिक्षा हम लोग सबसे पीछे सीखते हैं। उन लोगोंसे—जो सबसे जियादा मेहनत करते हैं—अपने कमाये हुए धनकी सबसे जियादा कदर करनेकी आशा की जा सकती है; परन्तु कदर करना तो दूर रहा बहुतसे लोग अपने कमाये हुए धनको ऐसी जल्दी उड़ा देते हैं कि वे निराश्रय होकर मितव्ययी लोगोंका सहारा ढूँढ़ने लगते हैं। हममेंसे बहुतसे लोग ऐसे हैं जो सुख और स्वतंत्रताके साथ

रहनेके लिए काफी रुपया तो कमाते हैं, परन्तु वे उसमेंसे कुछ बचाते नहीं जिसका नतीजा यह होता है कि अगर उनके ऊपर किसी तरहकी मुसीबत आजाती है तो फिर उनका काम एक दिन भी नहीं चलता। समाजके निराश्रय और दुःखी होनेका यह एक बहुत बड़ा कारण है। एक बार मजदूरोंने लार्ड जानरजलसे अपने ऊपर लगे हुए अनुचित टैक्सकी शिकायत की। लार्डने उत्तर दिया—"विश्वास रक्खो कि सरकार तुमपर उतना टैक्स नहीं लगाती जितना तुम स्वयं अपने ऊपर केवल शराबके खर्चसे लगा लेते हो!" जिस देशके मजदूर अपना रुपया इस तरह नष्ट कर देते हैं उस देशकी दशा बड़ी शोचनीय है। ऐसी बातोंके सुधारकी सबसे जियादा जरूरत है। आजकलके देशभक्त पृथक् पृथक् मनुष्यकी मितव्ययिता और दूरदर्शिता पर बहुत कम ध्यान देते हैं, लेकिन याद रक्खो कि उद्योग-धंधा करनेवाले मनुष्योंकी असली स्वतंत्रता इन्हीं गुणोंपर निर्भर है। सेमुअल ड्यूका कथन है कि "दूरदर्शिता, मितव्ययता, और उत्तम प्रबंध ये ऐसी चीजें हैं जो मुसीबतके वक्त काम आती हैं। इन चीजोंसे घरमें कुछ जगह नहीं घिरती, परन्तु इनसे बहुतसी ऐसी खराबियाँ दूर हो जाती हैं जो आज तक किसी सरकारी कानूनसे भी पूरी तरह दूर नहीं हुईं।" सुकरातने कहा है कि "जो मनुष्य दुनियाकी उन्नति करना चाहता है उसे पहले अपनी उन्नति करनी चाहिए।" या यों कहिए कि अगर हरएक आदमी, अपना अपना सुधार कर ले तो सारी जातिका सुधार आसानीसे हो जाय।

वह समाज जिसके मनुष्य अपनी सारी कमाईको उड़ा देते हैं हमेशा दरिद्र रहेगा। ऐसे मनुष्य अवश्यमेव बलहीन और निराश्रय रहेंगे, सबसे पिछड़े हुए रहेंगे और समय उनको जिस तरह चाहेगा नाच नचायेगा। जब उनमें आत्म-सम्मान न रहेगा तब दूसरे भी उनका आदर न करेंगे। व्यापारसंबंधी संकटोंमें ऐसे मनुष्योंका अवश्य सत्यानाश हो जायगा। रुपयेकी छोटीसे छोटी बचत भी घरके इन्तजाम करनेकी ताकत देती है। इस ताकतके न रहनेसे वे हरएक मनुष्यका सहारा ढूँढेंगे और अगर उनके होश-हवास दुरुस्त होंगे तो वे अपनी स्त्रियों और बालबच्चोंके भविष्यका खयाल करते हुए डरेंगे और काँपेंगे। काबडेनने एक बार मजदूरोंसे कहा था कि "संसारके लोगोंमें सदा दो वर्ग रहे हैं—एक तो वे लोग जिन्होंने बचत की है और

दूसरे वे लोग जिन्होंने सब खर्च कर डाला है—मितव्ययी और अपव्ययी। मितव्ययी मनुष्योंने ही तमाम मकान, मिल, पुल और जहाज बनवाये हैं। मनुष्य जातिको सभ्य और सुखी बनानेवाले अन्य काम भी उन्होंने किये हैं और वे आदमी जिन्होंने अपनी आमदनीको गवाँ दिया है ऐसे मनुष्योंके हमेशा दास रहे हैं। ऐसा होना प्रकृतिका नियम है, और मैं धूर्त्त हूँ यदि मैं किसी समाजके मनुष्योंको यह सलाह दूँ कि तुम अदूरदर्शी, विचारहीन और आलसी रहकर अपनी उन्नति कर सकते हो।"

मिस्टर ब्राइडने जो सलाह मजदूरोंको दी थी वह भी ऐसी ही सारगर्भित है। उन्होंने कहा था कि "किसी मनुष्य अथवा मनुष्योंके समुदायके लिए केवल एक ही सुरक्षित मार्ग है जिससे वह अपनी वर्तमान स्थितिको यदि वह अच्छी है तो कायम रख सकता है और यदि बुरी है तो अपने आपको उसके ऊपर उठा सकता है। मार्ग यही है कि वह परिश्रम, मितव्यय, संयम और ईमानदारीके गुणोंका अवलम्बन करे। कोई ऐसा 'छूमंतर' नहीं है जिसके द्वारा मनुष्य अपने आपको ऐसी दशासे उठा सकें जिसमें उनके मन या शरीरको कष्ट मालूम होता हो, सिवाय इसके कि वे उन्हीं गुणोंका अवलम्बन करें जिनके द्वारा वे अपने अनेक साथियोंको बढ़ते हुए और उन्नति करते हुए देखते हैं।"

कोई कारण नहीं है कि मजदूरोंकी दशा उपयोगी आदरणीय और सुखमय न हो। मजदूरोंका संपूर्ण वर्ग (कुछको छोड़कर) उतना ही मितव्ययी, सदाचारी, ज्ञानवान् और सुखी हो सकता है जितना उस वर्गके बहुतसे मनुष्य अपने आपको बना चुके हैं। सब लोग बिना कठिनाईके वैसे ही उन्नत हो सकते हैं जैसे कुछ लोग अब हैं। जिन कारणोंसे उनकी उन्नति हुई है उनका प्रयोग करनेसे वैसा ही परिणाम होगा। 'प्रत्येक देशमें मनुष्योंका एक ऐसा समुदाय हो जो दैनिक परिश्रमसे अपना निर्वाह करते हों।' परमात्माकी यह इच्छा निस्संदेह विवेकपूर्ण और पवित्र जान पड़ती है; परन्तु वह यह कदापि नहीं चाहता कि यह समुदाय मितव्ययी, संतोषी, विवेकी और सुखी न हो। उनके दुखी होनेका कारण केवल उन आदमियोंकी दुर्बलता, असंयम और कुटिलता है। अगर मजदूरोंमें स्वावलम्बनका लाभदायक भाव पैदा कर दिया जाय, तो उनके समुदायकी सबसे जियादा उन्नति हो

सकती है और यह काम औरोंको गिराकर उनके बराबर कर देनेसे नहीं, किन्तु उन्हींको धर्म, विवेक और सदाचारकी ऊँची और उन्नत श्रेणी तक उठा देनेसे हो सकता है। मानटेनने एक बार कहा था कि "नीतिशास्त्रके नियम किसी साधारण मनुष्यके जीवनपर उतने ही लागू हैं जितने किसी महाप्रतापी मनुष्यके जीवन पर। प्रत्येक मनुष्यमें मनुष्यत्व या मानवी वृत्ति संपूर्णरूपसे मौजूद रहती है। उसे अज्ञात अवस्थामेंसे व्यक्त करके बाहर लाना और उसके आनन्दका अनुभव करना यह स्वयं उसीके हाथकी बात है।"

विचार करनेपर मालूम होगा कि जिन बातोंके लिए हमको धन इकट्ठा करना पड़ता है वे मुख्य करके तीन हैं—बेकारी, बीमारी और मौत। संभव है कि पहली दो बातें कभी न हों; परंतु तीसरी बात अनिवार्य है। बुद्धिमान् आदमीका कर्तव्य है कि वह इस तरह रहे और ऐसा प्रबंध करे कि केवल उसको ही नहीं किन्तु उन लोगोंको भी—जिनका उसे पालन पोषण करना पड़ता है—किसी मुसीबतके आ जानेपर जहाँ तक हो सके कम कष्ट उठाना पड़े। इसलिए ईमानदारीके साथ रुपया कमाना और उसको किफायतके साथ खर्च करना सबसे जरूरी है। उचित रीतिसे रुपया कमानेके लिए धैर्य्यपूर्वक परिश्रम करने, अखंड उद्योग करने और प्रलोभनोंसे मुँह मोड़नेकी जरूरत है। ऐसा करनेसे हमारी आशायें अवश्य फलवती होती हैं। रुपयेको उचित रीतिसे खर्च करनेके लिए विवेक, दूरदर्शिता और स्वार्थनिरोधकी जरूरत ह। ये गुण सदाचारके सच्चे आधार हैं। रुपयेसे बहुतसी ऐसी चीजें खरीदी जा सकती हैं जो असलमें किसी मतलबकी नहीं होतीं, परन्तु उससे ऐसी चीजें भी खरीदी जा सकती हैं जो बड़े कामकी होती हैं। इस रुपयेसे केवल खाना, कपड़ा और आरामका सामान ही नहीं, किन्तु आत्मसम्मान और स्वतंत्रता भी मिल सकती है। इस लिए बचाया हुआ रुपया आपत्तिके समय रक्षा करता है; मनुष्य उस रुपयेके बलपर दृढ़ रह सकता है और आशा बाँधे हुए खुशीके साथ अच्छे दिनोंकी बाट देख सकता है।

परन्तु जो मनुष्य हमेशा कंगाल बना रहता है उसकी दशा गुलामोंसे बहुत कुछ मिलती जुलती है। उसको अपने ऊपर कुछ अधिकार नहीं रहता—वह पराधीन हो जाता है और उसे दूसरोंकी बात माननी पड़ती है। उसे दूसरोंकी खुशामद करनी पड़ती है। वह लज्जाके मारे किसीसे बराबरीका

दावा नहीं कर सकता और मँहगीके दिनोंमें उसे या तो भीख माँगनी पड़ती है या गरीबोंमें नाम लिखा कर रियायती भाव पर नाज बगैरह खरीदना पड़ता है। जब उसका रोजगार बिलकुल जाता रहता है तब उसके पास इतना सामान भी नहीं रहता कि वह किसी और जगह जाकर कुछ काम करने लगे। वह एक ही जगहका हो जाता है और कहीं आ जा नहीं सकता।

स्वतंत्रता पानेके लिए जिस बातकी जरूरत है वह यही है कि हमको किफायत करते रहना चाहिए। किफायत करनेके लिए न तो बड़े भारी साहसकी जरूरत है और न योग्यताकी। इस कामके लिए केवल साधारण उद्योग और मनोबल काफी है। असलमें घरका ठीक ठीक इन्तिजाम करना ही किफायतशारी है। प्रबन्ध, नियमबद्धता दूरदर्शिता और किसी चीजको व्यर्थ न खोना ये सब बातें किफायतशारीमें शामिल हैं। जो मनुष्य किफायत करना चाहता है उसमें इस बातकी शक्ति भी होनी चाहिए कि वह भावी लाभकी आशा पर वर्तमान सुखसे मुँह मोड़ सके। इसी शक्तिसे मालूम होता है कि मनुष्य पशुओंसे श्रेष्ठ है। किफायतशारी कंजूसीसे सर्वथा भिन्न है। सर्वोत्तम उदारता किफायतशीर आदमीमें ही पाई जाती है। किफायतशार आदमी धनको मूर्तिके समान नहीं पूजता, किन्तु वह यह समझता है कि धन एक ऐसी चीज है जिससे सैकड़ों काम निकल सकते हैं। किसीने सच कहा है कि "हमको रुपयेकी केवल प्रतिष्ठा न करनी चाहिए किन्तु उसको विचारपूर्वक काममें लाना चाहिए।" किफायतशारीको दूरदर्शिताकी पुत्री, संयमकी भगिनी और स्वतंत्रताकी माता कहना चाहिए। इससे हमारे चरित्रकी, रोजमर्राके आनन्दकी और सामाजिक कुशलकी रक्षा होती है। सारांश यह है कि किफायत करना स्वावलम्बनका एक सर्वोत्तम रूप है।

फ्राँसिस हार्नरके पिताने अपने पुत्रको गृहस्थाश्रममें प्रवेश करते समय यह उत्तम उपदेश दिया था—"मैं चाहता हूँ कि तुम सब तरहसे सुखी रहो, परन्तु इसके साथ ही मैं किफायतशारीपर भी बड़ा भारी जोर देना चाहता हूँ। यह सबके लिए आवश्यकीय गुण है और ओछे विचारवाले मनुष्य इससे चाहे जितनी घृणा करें, परन्तु इससे स्वाधीनता अवश्य मिलती है और स्वाधीनता प्राप्त करना हरएक उत्साहयुक्त मनुष्यका महान् उद्देश होना चाहिए।"

हरएक आदमीको अपनी आमदनीमें निर्वाह करनेका प्रयत्न करना चाहिए और इस बातको ईमानदारीकी जड़ समझना चाहिए। जो मनुष्य ईमानदारीसे अपनी आमदनीमें अपना निर्वाह करनेका प्रयत्न न करेगा, उसको जरूर बेई-मानीके साथ किसी दूसरेकी आमदनीसे गुजर करनी पड़ेगी। जो मनुष्य अपने खर्चकी परवा नहीं करते और दूसरोंके सुखका खयाल न करके अपनी ही विषयवासनाओंकी पूर्तिमें लगे रहते हैं, वे बहुधा उस समय रुपयेके सदु-पयोगको समझते हैं जब उनका सर्वनाश हो चुकता है। ऐसे खर्चीले आदमी उदार स्वभावके होकर भी अंतमें निंद्य काम करनेको मजबूर हो जाते हैं। वे अपने धन और समय दोनोंको नष्ट करते हैं, भविष्य कालपर भरोसा करने लगते हैं और भावी आमदनीकी आशा बाँधते हैं। इस लिए उन्हें अपने पीछे कर्जका बोझा घसीटना पड़ता है और दूसरोंके अहसान उठाने पड़ते हैं जिससे उनके स्वतंत्रतापूर्वक काम करनेमें बड़ी बाधा आती है।

लार्ड बेकनका मत था कि " जब किफायत करनेकी जरूरत पड़े तो छोटी छोटी रकमोंकी आमदनीकी अपेक्षा छोटी छोटी रकमोंकी बचतका जियादा खयाल रखना चाहिए।" जो रुपया बहुतसे आदमी फिजूल खर्च कर देते या बुरे बुरे कामोंमें लगा देते हैं वही रुपया प्रायः जीवनकी स्वतंत्रता और संपत्तिकी जड़ हो सकता है। जो लोग इस तरह रुपया लुटा देते हैं वे अपने सबसे बड़े शत्रु हैं। हम उनको यह कहते हुए देखते हैं कि संसारमें बड़ा अन्याय होता है; परन्तु जो मनुष्य आप ही अपना मित्र नहीं है वह कैसे आशा कर सकता है कि दूसरे उसके मित्र होंगे? साधारण स्थितिके नियम-शील मनुष्योंके पास दूसरोंकी सहायताके लिए हमेशा कुछ न कुछ बच रहता है; परन्तु खर्चीले और लापरवाह आदमियोंको, जो अपनी सब आमदनी खर्च कर डालते हैं, दूसरोंकी मदद करनेका मौका कभी नहीं मिलता। किफायतसे यह मतलब नहीं है कि तुम फटेहालों रहो। रहनेमें और व्यवहारमें जो लोग संकीर्ण विचारोंसे काम लेते हैं वे प्रायः अदूरदर्शी होते हैं और असफल रहते हैं।

अँगरेजीमें एक कहावत है कि " खाली थैला सीधा खड़ा नहीं रह सकता;" इसी तरह कर्जदार आदमी भी ईमानदार नहीं रह सकता। कर्जदार आदमीके लिए सत्यवादी होना भी कठिन है। इसी लिए कहा करते हैं कि झूठ कर्जकी

पीठपर सवारी करता है। कर्जको वक्तपर न चुका सकनेके कारण कर्जदार आदमीको अपने साहूकारसे बहाने बनाने पड़ते हैं और बहुत करके झूठी बातें गढ़नी पड़ती हैं। जो मनुष्य दृढ़ संकल्प कर लेता है उसके लिए पहली बार कर्ज लेने से बच जाना बहुत सुगम होता है, परन्तु एक बार कर्ज लेनेमें जो आसानी होती है वह दूसरी बार कर्ज लेनेका लोभ दिलाती है; और अभागा कर्जदार बहुत जल्द कर्जके चंगुलमें ऐसा फँस जाता है कि वह फिर चाहे जितनी मेहनत करे मगर उससे मुक्त नहीं होता। पहली बार कर्ज लेना, पहिली बार झूठ बोलनेके समान है। ऐसा करनेसे बारबार वैसा ही करनेकी जरूरत हो जाती है, कर्जपर कर्ज लेना पड़ता है और झूठपर झूठ बोलना पड़ता है। चित्रकार हाइडन अपना पतन उसी दिनसे बताता था जिस दिन उसने पहला कर्ज लिया था। वह इस बातको समझ गया था कि जो कर्ज लेता है वह रोता रहता है। उसने अपने रोजनामचेमें यह सारगर्भित बात लिखी है:-“ इस दिनसे कर्ज शुरू हुआ; इस कर्जसे मैं न अबतक मुक्त हुआ और न जीवनपर्यंत मुक्त हो सकूँगा।” उसको कर्जकी बजहसे बड़ा दुःख उठाना पड़ा। उसने एक बार एक युवकको यह उपदेश लिख भेजा था:- “ कोई सुख मत भोगो, अगर वह दूसरोंसे कर्ज लिए बिना न मिल सके। रुपया कभी उधार मत लो। यह काम मनुष्यको नीच बना देता है। मैं यह नहीं कहता कि किसीको रुपया कभी उधार न दो, मगर ऐसा न हो कि तुम अपना रुपया तो किसी औरको उधार दे दो और तुम्हें स्वयं जो दूसरोंको देना है वह न चुका सको। ऐसी हालतमें तुम अपना रुपया किसीको उधार न दो। परन्तु चाहे इधरकी दुनिया उधर पलट जाय कर्ज हरगिज मत लेना।”

डाक्टर जानसनका मत था कि छोटी उम्रमें कर्ज लेना मानों अपने आपको नाश करना है। इस विषयमें उनके शब्द सारगर्भित हैं और याद रखने लायक हैं। वे कहा करते थे कि “ कर्जको केवल भार ही न समझो; वह तुमको एक मुसीबत मालूम होगा। गरीबी ऐसी चीज है कि उसके कारण न तो हम दूसरोंका उपकार कर सकते हैं और न बुरे कामोंसे बच सकते हैं, इसलिए सब तरहके उचित उपायोंसे गरीबीसे बचना चाहिए।...सबसे पहले इस बातका ध्यान रक्खो कि तुम्हें किसीका कर्जदार न बनना पड़े। संकल्प कर लो कि हम गरीब न होंगे; जो कुछ तुम्हारे पास है उससे कम खर्च करो।

गरीबी हमारे सुखकी कट्टर दुश्मन है; उससे स्वाधीनताका निश्चय करके नाश हो जाता है। उसके कारण कुछ अच्छे काम तो हो ही नहीं सकते और कुछके करनेमें बड़ी कठिनाई होती है। मितव्ययता शान्ति और परोपकार दोनोंकी जड़ है। जो आदमी स्वयं सहायता चाहता है, वह दूसरोंको क्या सहायता देगा ? दूसरोंको देनेके पहले हमारे पास काफी सामान होना चाहिए। ''

हरएक मनुष्यका आवश्यक कर्तव्य है कि वह अपने कामकाजकी देखरेख रक्खे और अपनी आमदनी और खर्चका हिसाब रक्खे। इस तरह साधारण अंकगणितका थोड़ासा प्रयोग बहुत बहुमूल्य सिद्ध होगा। बुद्धिमानी इसी बातमें है कि मनुष्य अपने खर्चको अपनी आमदनीके बराबर नहीं किन्तु उससे कम रक्खे। परन्तु यह, खर्चका एक ऐसा सच्चा क्रम बनानेसे ही हो सकता है जिससे खर्च आमदनीके भीतर ही रहे। जान लाक उपर्युक्त उपाय पर बड़ा जोर देता था। वह कहा करता था कि " मनुष्यको अपने रोजमर्राके खर्चका हिसाब बराबर अपनी आँखोंके सामने रखना चाहिए, इससे बढ़कर दूसरी बात उसके खर्चको आमदनीके भीतर रखनेवाली नहीं है।'' जस्टिस महादेव गोविन्द रानडे अपने घरका सब हिसाब किताब स्वयं रखते थे। उन्होंने अपने यहाँके खर्चका क्रम बाँध रक्खा था। वे अपनी पत्नीको भोजन मात्रके लिए सौ रुपया दे कर कहते थे कि " इसमें महीने भरका सब खर्च चलाना।'' उनकी पत्नी उस रुपयेका सब खर्च लिखती पढ़ती थी। रानडे स्वयं रातको दिन भरके खर्चकी रोकड़ मिलाकर सोते थे। इसी तरह ड्यूक आफ वैलिंगटन भी अपनी आमदनी और खर्चका ब्योरेवार ठीक ठीक हिसाब रखते थे।

ऐडमिरल जर्विसने कर्ज न लेनेका ऐसा दृढ़ संकल्प कर लिया था कि एक बार उनको छः वर्ष तक पेट भरकर खाना न मिला, परन्तु वे ईमानदार बने रहे और उन्होंने कर्ज न लिया। ह्यूमने अँगरेजी राजसभामें अपने देशवासियोंके संबंधमें जो कुछ कहा था वह भारतवासियोंके विषयमें भी सर्वथा ठीक है। उन्होंने कहा था कि " इस देशके (इँग्लेंड के) लोगोंके खर्च बहुत बढ़ गये हैं। मध्यश्रेणीके मनुष्य बिलकुल अपनी आमदनीके बराबर खर्च करना चाहते हैं। उनका रहन सहन ऐसे ऊँचे दर्जेका हो गया है कि उससे समाजको बड़ी हानि पहुँचती है। हम अपने बच्चोंको जेन्टिलमैन

अर्थात् सज्जन बनाना चाहते हैं, परन्तु परिणाम उलटा होता है। उनको कपड़े, तमाशे और भोगविलासकी चीजोंका शौक लग जाता है; परन्तु विश्वास रक्खो कि इन चीजोंमें सुजनता नहीं है। हम उनको वास्तवमें जैन्टिलमैन न बनाकर फैशनका दास बना देते हैं।"

ईमानदारीको तिलांजुलि देकर हम लोग चिकने-चुपड़े बनना चाहते हैं और हमारी यही इच्छा रहती है कि चाहे हम असलमें धनाढ्य न हों, परन्तु दूसरोंको धनाढ्य मालूम हों। हममें यह शक्ति नहीं है कि हम धीरजके साथ निज अवस्थाकी उन्नति करते रहें; हमको फैशनेबिल बननेसे काम है। समाजरूपी थियेटरमें हमारी कोशिश बराबर यही रहती है कि हम सबसे आगेकी कुर्सियोंको घेर लें, परन्तु ऐसा करनेमें हममेंसे स्वार्थत्यागका श्रेष्ठ गुण जाता रहता है और हमारी बहुतसी अच्छी आदतें मिट्टीमें मिल जाती हैं। हम अपनी ऊपरी तड़क-भड़कसे दूसरोंको चक चौंधा डालना चाहते हैं। यह लिखनेकी कुछ जरूरत नहीं है कि इससे कितनी हानि होती है और कैसी गरीबी आजाती है। इसके बुरे परिणाम हजारों बातोंमें दृष्टिगोचार होते हैं। जो बेईमान होना पसंद करते हैं, परन्तु अपने आपको निर्धन प्रकट करना नहीं चाहते, वे लोग नीचसे नीच कर्म करते हैं। ऐसे मनुष्य अपने कुकर्मोंसे अपना सर्वस्व खो बैठते हैं, परन्तु इन पर हमें इतनी दया नहीं आती जितनी उन सैकड़ों निरपराध कुटुम्बोंपर आती है जो इनके साथ नाशको प्राप्त हो जाते हैं।

सेनापति सर चार्ल्स नेपियरने भारतवर्षमें एक बार सैनिकोंको अपने आज्ञा-पत्रमें यह लिखकर भेजा था कि "वास्तविक सज्जनके चरित्रसे ईमानदारी अलग नहीं की जा सकती;" और "बिना मूल्य दिये शराबपीना या घोड़ोंपर चढ़ना धूर्तका काम है, सज्जनका नहीं।" इस देशमें बहुतसे ऐसे वीर सैनिक हैं जो तोपोंके मुँहमें निधड़क चले जाते हैं, परन्तु उनमें इतना आत्म-बल नहीं है कि छोटेसे प्रलोभनसे भी मुँह मोड़ सकें। जब उनको आनन्द, अथवा आत्म-सुखका लोभ दिया जाता है, तब उनके मुँहसे दृढ़ताकी 'नहीं' नहीं निकलती। कहाँ तो रणक्षेत्रकी वह वीरता और कहाँ यह कायरता?

पहले संकल्प करो।

जब युवक अपने जीवनमें आगे बढ़ता है तब उसको अपने दोनों और लुभानेवालोंकी एक एक लम्बी कतार मिलती है और उनके लोभमें फँस जानेसे उसकी न्यूनाधिक अवनति अवश्य होती है। लुभानेवालोंका साथ करनेसे युवकके स्वाभाविक गुणोंका कुछ हिस्सा गुप्त रीतिसे निकल जाता है। उनसे बचनेका यही उपाय है कि वह वीरतासे 'नहीं' कह दे और उनके अनुसार चले। किसी प्रलोभनमें एक बार फँस जानेसे फिर उस प्रलोभनसे मुकाविला करनेकी ताकत कमजोर हो जाती है। मगर किसी प्रलोभनका वीरताके साथ सामना करनेसे सदाके लिए एक तरहकी शक्ति आ जाती है और कई बार ऐसा ही किया जाय तो वैसी ही आदत पड़ जाती है। छोटी उम्रमें जो अच्छी आदतें पड़ जाती हैं उन्हींसे हमारे चरित्रकी रक्षा होती है।

ह्यू मिलरने एक बार ऐसा दृढ़ संकल्प किया कि वे एक प्रलोभनसे खूब ही बच गये। जब ह्यू मिलर मजदूरी करते थे तब उनके मित्र मिलकर कभी कभी शराबका जलसा किया करते थे। एक दिन उन्होंने ह्यू मिलरको भी दो गिलास शराब पिला दी। जब मिलरने घर पहुँचकर पढ़नेके लिए किताब खोली अक्षर उनकी आँखोंके सामने नाचने लगे और वे कुछ भी न पढ़ सके। मिलरने अपना उस वक्तका हाल यों लिखा है:–"उस समय मुझे अपनी दशा बड़ी नीच मालूम हुई। मैं अपने ही कुकर्मसे बुद्धिकी ऊँची श्रेणीपरसे जिस पर मैं रहा करता था, नीचे गिर गया। यद्यपि वह दशा इरादा करनेके लिए बहुत अच्छी न थी, तो भी मैंने पक्का इरादा कर लिया कि मैं शराबकी खातिर अपने मानसिक सुखका कभी त्याग न करूँगा और परमात्माकी मददसे मैं अपने इरादेमें अटल बना रहा।" ऐसे ही इरादे मनुष्यके जीवनमें परिवर्तन कर देते हैं और उसके चरित्रको आगेके लिए पक्का करते हैं। जिस प्रलोभनसे ह्यू मिलर बच गये प्रत्येक नवयुवक और बड़े आदमीको उससे हमेशा बचते रहना चाहिए। शराब पीना बहुत बुरा है। इससे तन्दुरुस्तीको बड़ा भारी नुकसान पहुँचता है और फिजूलखर्ची भी बहुत होती है। **सर वाल्टर स्काट** कहा करते थे कि "सबसे बड़ा पाप जो मनुष्यके गौरवको कम कर देता है शराब पीना है।" यही नहीं बल्कि शराब पीना किफायतशारी, सफाई, तन्दुरुस्ती और ईमानदारीमें भी बाधा डालता है। किसी कुटेवको छोड़नेके लिए यह भी जरूरी है कि हम अपने धार्मिक आदर्शको

ऊँचा करें, अपने आचार विचारकी उन्नति करें और अपने नियमोंको सुधारें। ऐसा करनेके लिए हमको अपने स्वभावको पहिचानना चाहिए और अपने कामोंकी जाँच करनी चाहिए। हमको हरएक बातका एक नियम बना लेना चाहिए और फिर यह देखना चाहिए कि हमारे विचार और काम उसके अनुसार होते हैं या नहीं।

धन कमानेके गुप्त रहस्यपर बहुतसी सर्वप्रिय पुस्तकें लिखी गई हैं, परन्तु याद रक्खो कि धन कमानेका कोई गुप्त रहस्य नहीं है। मेहनत ही एक चीज है जिससे धन पैदा होता है। इस बातमें हजारों वर्षका अनुभव कूट कूट कर भरा है और सब देशोंके निवासी इस बातको मानते हैं।

जिस मनुष्यमें काम करनेकी साधारण योग्यता है वह भी मेहनत और किफायतशारीसे पहलेकी अपेक्षा अधिक स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है। यही बात मजदूरोंके विषयमें भी कही जा सकती है। एक पैसा बहुत छोटी ऐसी चीज है, परन्तु हजारों गृहस्थियोंका सुख पैसोंको ठीक तरह पर खर्च करने और जमा करने पर निर्भर है। अगर हम अपने पसीनेसे कमाये हुए पैसोंको शराब पीनेमें या इधर उधर नष्ट कर दें, तो हमारा जीवन पशुओंके जीवनके समान हो जायगा। परन्तु अगर हम इन्हीं पैसोंको अपने बाल-बच्चोंके निर्वाह और शिक्षाके लिए बचाते रहें, तो हमको इसका बदला यह मिलेगा कि हमारी शक्ति और सुख बढ़ जायगा, भविष्यका डर भी कम हो जायगा और यदि हमारे भाव ऊँचे हों, तो हम अपनी ही नहीं किन्तु दूसरोंकी भी सहायता कर सकेंगे। किसी मामूली मजदूरके लिए भी यह बात असंभव नहीं। टामस राइटने जो मैनचेस्टरमें एक साधारण मजदूर था, सैकड़ों अपराधियोंको सुधार दिया। टामस राइटने देखा कि जो अपराधी कैदखानेसे छूटकर आते हैं उनके लिए यह बड़ा कठिन होता है कि वे ईमानदारीके साथ किसी तरहकी मेहनत करके अपना निर्वाह करें—उनमें ईमानदारीकी आदतें नहीं पड़तीं, किन्तु वे वैसे ही धूर्त बने रहते हैं। इस बातका सुधार करना टामस राइटके जीवनका उद्देश हो गया। यद्यपि वह सबेरे छः बजेसे शामके छः बजेतक कारखानेमें काम करता था, तो भी उसे कुछ वक्तके लिए—खासकर इतवारकी छुट्टीमें—कुछ फुरसत मिल जाती थी और इस फुरसतके वक्तको वह अपराधियोंकी सेवामें लगा देता था। उस जमानेमें अपराधियोंकी दुर्दशा

पर कोई ध्यान न देता था। किसी अच्छे काममें हररोज कुछ मिनिट खर्च करनेसे ही बहुत कुछ हो सकता है। चाहे इस बात पर कोई यकीन न करे मगर यह सच है कि टामस राइटने अपने उद्देश पर कायम रहकर दश वर्षमें तीनसौ धूर्तोंको, जो चोरी, ठगी इत्यादि करके अपना निर्वाह करते थे, सुधार दिया। उसने बहुतसे लड़कोंकी आदतें सुधारकर उनको उनके मातापिताके पास भेज दिया; बहुतसे लड़के लड़कियोंको जो अपने घरोंसे भाग गये थे उनके घरोंपर पहुँचा दिया और बहुतसे अपराधियोंको ऐसा सुधारा कि वे बदमाशी छोड़कर ईमानदारी और मेहनतके साथ कोई धंधा करने लग गये। यह न समझो कि यह काम सहज था। इसके लिए रुपया, समय, उत्साह, बुद्धिमानी और इन सबके उपरान्त सच्चरित्रताकी जरूरत पड़ी होगी। क्योंकि जिस मनुष्यका चरित्र अच्छा होता है उसका दूसरे विश्वास करने लगते हैं। टामस राइट यह काम भी करता रहा, अपने कुटुम्बका सुखपूर्वक निर्वाह भी करता रहा और बड़ी सावधानी और किफायतके साथ अपने बुढ़ापेके लिए बचत भी करता रहा। उसको हफ्तेवार मजदूरी मिलती थी। वह हर हफ्तेमें अपनी आमदानीको बड़ी होशियारीसे कई हिस्सोंमें बाँट देता था–इतना खाने कपड़ेके जरूरी सामानके लिए, इतना मकानके किरायेके लिए, इतना बच्चोंकी शिक्षाके लिए और इतना दीन दुखियोंके लिए। वह इन सब मद्दोंका बराबर खयाल रखता था और कभी गड़बड़ी न होने देता था।

जमीन जोतना, कपड़े बुनना, औजार बनाना, दूकानदारी करना इत्यादि किसी भी धंधेके करनेमें अपमान नहीं है बल्कि इज्जत है। फुलरने कहा था कि " जो ईमानदारीसे जीविका पैदा करते हैं उनको क्यों लज्जित होना चाहिए? लज्जित तो उनको होना चाहिए जो ईमानदारीसे जीविका पैदा नहीं करते। " जिन मनुष्योंने किसी छोटे पेशेसे अपनी उन्नति की है उनको लज्जा न आनी चाहिए, बल्कि उनको तो इस बातका अभिमान होना चाहिए कि हमने कैसी कैसी कठिनाइयोंको झेलकर अपनी हालत सुधारी है। निसमीजके गिरजाका बिशप **फ्लेशिअर** अपने युवाकालमें मोमबत्ती बनानेका पेशा किया करता था। एक बार जब फ्रांसके एक डाक्टरने उसको पहलेकी पेशेकी याद दिलाकर उसपर ताना कसा, तब फ्लेशिअरने

जवाब दिया कि "अगर मेरे समान तुम भी मोमबत्ती बनानेवाले होते, तो तुम आज तक उसी पेशेको करते रहते; तुमसे अपनी तरक्की न हो सकती।"

यह बात प्रायः सर्वत्र ही देखनेमें आती है कि बहुतसे लोग रुपया इसलिए कमाते हैं कि उनके पास दौलत जमा हो जाय—इससे बढ़कर उनका कोई दूसरा उद्देश नहीं होता। ऐसा बहुत कम होता है कि कोई मनुष्य तन मनसे रुपया जमा करनेमें लग जाय और सफल न हो। इसमें बहुत थोड़ी बुद्धिका काम है। अपनी आमदनीसे कम खर्च करो, एक एक रुपया जोड़ते चले जाओ, किसी न किसी तरह बचत करते जाओ, बस कुछ समयमें रुपयोंका ढेर लग जायगा। ईरानका धनी आस्टर ओल्ड शुरूमें गरीब आदमी था। वह एक शराबखानेमें रोज शराब पीनेको जाता था और वहाँपर जितनी बोतलोंके काग उसे मिलते थे उन सबको जेबमें रखकर घर ले आता था। आठ वर्षमें उसके पास इतने काग हो गये कि वे सौ रुपयेमें बिके। इसी रुपयेसे उसके धनकी जड़ जम गई। उसने हुंडियोंकी दलालीमें बहुत रुपया कमाया और अपने मरनेके बाद वह लगभग बीस लाख रुपया छोड़ गया।

दूसरोंके पालनेके लिए, अपने सुखके लिए और बुढ़ापेमें स्वतंत्र रहनेके लिए रुपया जमा करना बहुत अच्छी बात है, परन्तु केवल धनके लालचसे धन जमा करना ओछे विचारवाले और कंजूस आदमियोंका काम है। इस तरहकी बेकायदा बचत करनेकी आदतसे बुद्धिमान् आदमीको बड़ी सावधानीसे बचना चाहिए। नहीं तो इस तरहकी किफायतशारी बुढ़ापेमें जाकर लालचमें बदल जायगी और जो काम पहले कर्तव्य समझकर किया जाता था वही एक तरहकी बुरी आदत बन जायगा। खुद रुपयेसे नहीं किन्तु रुपयेके लोभसे सब तरहकी खराबियाँ पैदा होती हैं। रुपयेका लोभ हमारे आत्माको संकीर्ण कर देता है और उसमें उदारताका प्रवेश नहीं होने देता।

धन इकट्ठा हो जानेसे संसारमें जो सफलता होती है वह सचमुच ही बड़ी प्रकाशमान है और सब लोग इस संसारी सफलताको स्वभावतः पसंद भी करते हैं; परन्तु चुस्त चालाक आदमी—जो रुपया पैदा करनेके मौकोंको हमेशा ताका करते हैं–संसारमें चाहे सफलता पैदा कर लें और कर ही लेते हैं, तथापि यह बिलकुल संभव है कि उनका चरित्र किंचित् भी ऊँचा न हुआ हो आर उनमें जरा भी भलमनसाहत न आई हो। जिस आदमीको रुपयेकी

धुनके सिवाय और किसी अच्छी बातका खयाल नहीं है वह चाहे अमीर हो जाय, परन्तु यह फिर भी संभव है कि उसका चरित्र दो कौड़ीका ही बना रहे। धनसे चरित्रकी उन्नति नहीं हो जाती; बल्कि जिस तरह जुगनूकी चमकके कारण जूगनू की भद्दी सूरत भी दिखलाई दे जाती है उसी तरह धनकी चमकसे उस धनके स्वामीकी चरित्रहीनतापर सबका ध्यान जाता है। सब लोग कहने लगते हैं कि यह इतना बड़ा आदमी होकर भी इतना दुराचारी है।

बहुतसे लोग धनके लोभपर अपने चरित्रको न्यौछावर कर देते हैं। वे उन बंदरोंके समान हैं जिनको आफ्रिकानिवासी बड़ी विचित्र रीतिसे पकड़ते हैं। वे लोग एक तंग मुँहवाले बरतनको किसी पेड़में कसकर बाँध देते हैं और उसमें चावल रख देते हैं। रातको बंदर वहाँ आता है, उस बरतनमें हाथ डालता है और अपनी मुट्ठी चावलोंसे भर लेता है; परन्तु वह मुट्ठी बड़ी होनेके कारण बरतनके तंग मुँहमेंसे बाहर नहीं निकलती। बंदरमें इतनी समझ नहीं कि मुट्ठी खोलकर अपना हाथ निकाल ले। बस इसी तरह सबेरे तक वह वहीं फँसा रहता है और पकड़ लिया जाता है। इच्छित पदार्थको हाथमें रखते हुए भी वह अत्यन्त मूर्ख मालूम होता है। इस संसारके बहुतसे मनुष्योंका भी यही हाल है।

प्रायः लोग रुपयेमें इतनी शक्ति समझ बैठे हैं जितनी कि उसमें असलमें नहीं है। संसारके सबसे बड़े काम धनी मनुष्योंके द्वारा अथवा चंदा इकट्ठा करनेसे नहीं हुए, किन्तु उन्हें प्रायः ऐसे मनुष्योंने किये हैं जिनके पास थोड़ा रुपया था। आधीसे भी जियादा दुनियामें ईसाई धर्मका प्रचार बहुत ही गरीब आदमियोंने किया है। बड़े बड़े विचारवान् अनुसंधानकर्ता, आविष्कारक और शिल्पकार मनुष्य, बहुत थोड़े रुपयेवाले थे; बल्कि उनमेंसे तो बहुतसे मजदूरोंके समान कंगाल थे। आगे भी ऐसाही होता रहेगा, अर्थात् धनहीनोंके द्वारा ही महत्वके काम होंगे। बहुत करके धन काम करनेमें उत्तेजना नहीं देता किन्तु रुकावट पैदा करता है। वह युवक जिसको अपने बापदादाओंका धन मिल जाता है सुखसे जीवन बिताना चाहता है और वह ऐसे ही जीवन पर संतोष कर लेता है। उसे काम करनेकी जरूरत ही नहीं जान पड़ती। उसका कोई खास उद्देश ही नहीं रहता जिसके लिए वह कोई उद्योग करे

और इस लिए उसे वक्त काटना भी दूभर हो जाता है। उसके चरित्र और आत्माकी उन्नति बिलकुल नहीं होती और वह समाजके लिए किसी कामका नहीं होता। उसका धंधा यही है कि वह समयको व्यर्थ नष्ट किया करता है।

यदि धनाढ्य मनुष्यमें उचित उत्साह पैदा हो जाय, तो वह आलस्यको निकम्मा समझकर दूर कर देगा और अगर वह समझ जाय कि धन और जायदादके स्वामीकी जिम्मेदारी कितनी बड़ी है, तो उसे निर्धन मनुष्योंसे भी जियादा काम करनेका शौक हो जायगा। परन्तु ऐसे लोग बहुत ही कम दिखलाई देते हैं। शायद सबसे अच्छे वे मनुष्य हैं जो न तो अमीर हैं और न गरीब। औसत दरजेके आदमी बड़े सुखी रहते हैं।

यह अच्छा है कि तुममें ऐसी योग्यता हो जाय जिससे दूसरे तुम्हारा आदर करने लगें। लेकिन अगर तुम केवल चिकने चुपड़े बनकर—अच्छे अच्छे कपड़े पहन कर—अपना आदर चाहो, तो यह बहुत बुरा है। बदचलन अमीर आदमीसे भला मानस गरीब आदमी कहीं जियादा अच्छा और आदरके योग्य है। सीधा सादा गरीब आदमी उस बदमाशसे अच्छा है जो खूब बनठनके रहता हो और गाड़ी घोड़ा रखता हो। हमको इस बातकी परवा न करनी चाहिए कि संसार हमारा कितना आदर करता है। इससे तो यह बहुत अच्छा है कि हम अपने ज्ञानको बढ़ावें और अपने विचारोंको और जीवनके उद्देशको लाभदायक बनावें। हमारी समझमें जीवनका सबसे बड़ा उद्देश यह है कि हम सदाचारी बनें और अपने शरीरकी, अंतःकरणकी, हृदयकी और आत्माकी यथाशक्ति उन्नति करें। यह तो हमारा लक्ष्य होना चाहिए और बाकी सब बातोंको इसके प्राप्त करनेका केवल साधन समझना चाहिए। इसलिए सबसे अधिक सफल जीवन वह नहीं है जिसमें हमको सबसे जियादा सुख, धन, अधिकार, अथवा ख्याति मिले; किन्तु वह है जिसमें हम सबसे जियादा मनुष्यत्व प्राप्त कर सकें, सबसे अधिक परोपकार कर सकें और अपने कर्तव्यका पालन कर सकें। यह ठीक है कि रुपयेमें एक तरहकी शक्ति है, परन्तु बुद्धिमत्ता, परोपकार करनेका भाव और सदाचार भी शक्तियाँ हैं और धनकी शक्तिसे कहीं जियादा श्रेष्ठ हैं।

धनाढ्य हो जानेसे कुछ मनुष्य निःसंदेह समाजमें प्रवेश कर सकते हैं, परन्तु समाजमें आदर पानेके लिए उनमें मानसिक योग्यता और शिष्टाचार

भी होना चाहिए, नहीं तो वे कोरे धनी हैं और कुछ नहीं। अब भी बहुतसे ऐसे धनाढ्य पड़े हैं जिनके पास अतुल धन है, परन्तु उनकी न तो कहीं बूझ होती है और न उनका कोई आदर करता है। इसका कारण क्या है? वे केवल रुपयेके थैले हैं और उनकी सारी शक्ति रुपयोंके संदूकमें बंद है। यह जरूरी नहीं है कि समाजके प्रतिष्ठित मनुष्य—जो औरोंके विचार अपने विचारोंके समान कर लेते हैं, जो सचमुच सफलता पाते हैं और दूसरोंका उपकार करते हैं—धनाढ्य ही हों, परन्तु वे पक्के सदाचारी और अनुभवी जरूर होते हैं।

दशवाँ अध्याय।

अपना सुधार, सुविधायें और कठिनाइयाँ।

"हरएक आदमीको दो तरहकी शिक्षा मिलती है—एक तो वह दूसरोंसे पाता है और दूसरी अपने आपको स्वयं देता है। दूसरी शिक्षा पहलीसे जियादा महत्त्वकी है।"—गिबन।

"जो मनुष्य कठिनाइयोंसे हताश हो जाता है और आपत्तिके सामने सिर झुका देता है, उससे कुछ नहीं हो सकता; परन्तु जो मनुष्य विजय पानेका संकल्प कर लेता है वह कभी असफल नहीं होता।"—जान हंटर।

"बुद्धिमान् और उद्योगी मनुष्य ही कठिनाइयोंपर विजय पाते हैं; क्योंकि वे कोशिश करते हैं। आलसी और मूर्ख लोग परिश्रम और भयको देखकर काँपते और हिचकिचाते हैं और कामको असंभव बनाकर उससे डरते हैं।"–रो।

एक विद्वान्‌का कथन है कि "मनुष्यकी शिक्षाका वही अंश सबसे अच्छा है जो वह अपने आप प्राप्त करता है।" यह बात बराबर मिलेगी कि साहित्य विज्ञान और शिल्पमें जिन मनुष्योंने नाम पाया है उन्होंने अपने आपको आप ही शिक्षा दी है। स्कूल या कालिजमें जो शिक्षा मिलती है वह केवल प्रारंभिक शिक्षा है और उसका मूल्य सिर्फ इस बातमें है कि उससे मस्तकको काम करना आ जाता है और निरंतर उद्योग और अध्ययन करनेकी आदत पड़ जाती है। परिश्रम और अखंड उद्योगसे

जो शिक्षा हमको अपने आप मिलती है उसकी अपेक्षा दूसरोंसे पाई हुई शिक्षा पर हम बहुत कम अधिकार पा सकते हैं। जो ज्ञान हम अपनी मेहनतसे प्राप्त करते हैं उसपर हमारा अधिकार हो जाता है—वह सर्वथा हमारी सम्पत्ति हो जाती है। ऐसे ज्ञानको हम खूब समझ जाते हैं; उसका परिणाम भी चिरस्थायी होता है और इस तरहसे जानी हुई बातें मस्तकमें गहरी बैठ जाती हैं। दूसरोंसे पाया हुआ ज्ञान बहुत असर नहीं रखता—वह ऊपर ही ऊपर रहता है। आत्मशिक्षासे शक्तियोंका विकाश होता है और बलकी उन्नति होती है। एक बातके हल हो जानेसे दूसरी बातपर अधिकार जमानेमें सहायता मिलती है; और इसतरह ज्ञानसे हमको एक तरहकी शक्ति मिल जाती है। याद रक्खो कि हमारा उद्योग सबसे जरूरी है। हमारे पास चाहे कितनी ही सुविधायें, पुस्तकें और शिक्षक हों और हम चाहे कितने ही पाठ रट-रटकर याद कर लें; परन्तु अपने उद्योगके बिना हमारा काम नहीं चल सकता।

बड़े बड़े शिक्षकोंने सहर्ष स्वीकार किया है कि अपने आपको स्वयं शिक्षा देनेमें बड़ा महत्त्व है। उनका कहना है कि विद्यार्थीमें इस बातका शौक पैदा करना चाहिए कि वह अपनी शक्तियोंका उद्योगपूर्वक प्रयोग करके ज्ञान प्राप्त करे। उन्होंने इस बातपर जियादा जोर दिया है कि विद्यार्थीकी शक्तियोंका विकाश करना चाहिए—उनमें सिर्फ ज्ञान ही न भर देना चाहिए। उन्होंने शिक्षा देनेके काममें अपने शिष्योंको भी हिस्सेदार बनानेका प्रयत्न किया है। इस तरह उन्होंने दिखला दिया है कि शिक्षाका अभिप्राय यह नहीं है कि विद्यार्थी स्वयं कुछ न करे और शिक्षक उसके मस्तकमें ज्ञानकी बूँदें टपका दिया करे। शिक्षकका आदर्श इससे बहुत ऊँचा होना चाहिए। डाक्टर अर्नल्डकी कोशिश यही रहती थी कि उनके शिष्य अपने ऊपर भरोसा करना सीखें और निज उद्योगसे अपनी शक्तियोंकी उन्नति करें। डाक्टर साहब उनको केवल मार्ग दिखाते थे, उपाय बतलाते थे, उत्तेजन देते थे और उत्साहित करते थे।

इस बातके अनेक उदाहरण दिये जा चुके हैं कि विज्ञान और साहित्यमें गरीब आदमियोंने बहुत नाम पाया है। इन उदाहरणोंसे यह स्पष्ट है कि सर्वोत्तम मानसिक उन्नतिमें परिश्रम बाधा नहीं पहुँचाता। औसत दरजेकी मेहनत तन्दुरुस्तीको बढ़ाती है और शरीरको भी अच्छी मालूम होती है।

जैसे अध्ययनसे मस्तकको शिक्षा मिलती है उसी तरह काम करनेसे शरीरको शिक्षा मिलती है । ऐसा समाज सबसे अच्छा है जिसमें हर एक आदमीके लिए फुरसतके वक्त कुछ काम मौजूद हो और कामसे कुछ फुरसत मिलती हो । जो धनाढ्य मनुष्य अपना समय बेकारीमें काटा करते हैं उनको भी कुछ न कुछ काम इसलिए करना पड़ता है कि कभी कभी वे बेकारीसे उकता जाते हैं। उनके जीमें काम करनेकी एक ऐसी इच्छा पैदा होती है कि वे उसे रोक नहीं सकते । कुछ लोग देश देशान्तरोंमें शैर करने चले जाते हैं और कुछ लोग दिल बहलावका कोई और काम करने लगते हैं । इसी लिए स्कूलोंमें नाव खेना, दौड़ना, गेंद खेलना, और व्यायाम करना इत्यादिकी शिक्षा दी जाती है और इस तरह मस्तक और शरीर दोनोंकी शक्तिको बढ़ानेकी कोशिश की जाती है ।

डेनियल मैलथस अपने पुत्रको, जो कालिजमें पढ़ता था, ज्ञान प्राप्त करनेमें खूब परिश्रम करने पर जोर दिया करता था, साथ ही वह उसको खेल खेलनेकी भी आज्ञा देता था । क्योंकि खेलनेसे मस्तककी काम करनेकी शक्ति पूरे तौरपर कायम रहती है और इससे मानसिक सुख भी भोगे जा सकते हैं । वे कहा करते कि " हरतरहके ज्ञानसे प्रकृति और मनुष्यकी बनाई हुई चीजोंकी देखभालसे—तुम्हारे मस्तकको आनन्द और बल मिलेगा । मुझे बहुत खुशी होगी अगर तुम क्रिकेट (गेंद–बल्ला) खेलकर अपने हाथ-पैरोंके बलको बढ़ाओगे । मैं इस बातको पसंद करता हूँ कि तुम कसरतमें बढ़े चढ़े रहो और मेरा विश्वास है कि बहुतसे मानसिक सुखोंका स्वाद उसी समय सबसे अच्छी तरह मिल सकता है जब साथ साथ खेलकूद भी जारी रक्खा जाय । " बराबर काममें लगे रहनेसे एक फायदा इससे भी बड़ा होता है । जर्मी टेलरने कहा है कि " आलस्यको दूर करो और हर वक्त कुछ न कुछ उपयोगी काम किया करो; क्योंकि जिस समय कुछ काम नहीं होता और शरीर आराममें होता है उस समय मनमें विषयवासनाओंका विचार आने लगता है । ऐसा कभी नहीं हुआ कि कोई आसूदा, तन्दुरुस्त और आलसी आदमी प्रलोभनोंके बीचमें आकर साफ बच गया हो। सब तरहके कामोंमें शरीरकी मेहनत सबसे उपयोगी है और बुरी वासनाओंको दूर भगानेमें रामबाण है । "

जीवनकी व्यावहारिक सफलताके लिए जितनी हम समझे हुए हैं उससे ज़ियादा तन्दुरूस्तीकी जरूरत है। भारतवर्षसे एक अँगरेजने अपने एक मित्रको इँग्लेण्ड पत्र भेजा और उसमें लिखा कि " मैं भारतवर्षमें सुखसे रहताहूँ क्योंकि मेरी पाचनशक्ति अच्छी है।" किसी व्यवसायमें निरंतर काम करनेकी शक्ति बहुत कुछ इसी पर निर्भर है। इसलिए तन्दुरुस्तीका खयाल रखना बहुत जरूरी है। मानसिक श्रममें भी इसकी जरूरत पड़ती है। विद्यार्थियोंमें जो असंतोष, असौख्य, अनुद्योग और चिन्ता देख पड़ती है और वे जो जीवनसे घृणा करने लगते हैं, सो सब कसरत न करनेका फल है।

सर आइजक न्यूटनका जीवन इस बातका उदाहरण है कि उन्होंने शुरूसे ही औजारोंसे काम लेकर कैसा लाभ उठाया था। वे पढ़नेमें तो सुस्त थे, परन्तु आरी, हतौड़ा और कुल्हाड़ी चलानेमें बड़ी मेहनत करते थे। वे अपने रहनेके कमरेमें भी खटपट किया करते थे, और हवासे चलनेवाली चक्कियों, गाड़ियों और तरह तरहकी कलोंके नमूने बनानेमें सदा ही व्यस्त रहते थे। जब वे बड़े हुए तब उनको अपने मित्रोंके लिए छोटी छोटी मेजें और आलमारियाँ बनानेमें बड़ा आनंद आता था। स्वीटन, वाट और स्टीफिन्सन भी बचपनमें औजारोंसे इसी तरह काम किया करते थे। यदि वे लड़कपनमें ही इतनी आत्मोन्नति न कर लेते, तो बड़े होनेपर शायद ही इतना काम कर सकते, जितना कि उन्होंने कर दिखाया। जिन आविष्कारकों और यंत्रकारोंका वर्णन हम पहले कर आये हैं उनकी प्रारम्भिक शिक्षा भी ऐसी ही हुई थी। लड़कपनमें उन्होंने अपने हाथोंसे खूब काम लिया था और इससे उन्होंने अपनी उपाय सोचनेकी शक्तिको और बुद्धिमानीको काममें लाना सीख लिया था। जिन मजदूरोंने हाथ-पैरकी मेहनत करते करते इतनी उन्नति कर ली है कि अब उन्हें केवल मानसिक परिश्रम ही करना पड़ता है। उन्होंने भी मानसिक परिश्रम करनेमें अपनी प्रारम्भिक शिक्षासे बड़ा लाभ उठाया है। एक ऐसे ही मनुष्यका कथन है कि " मुझे सफलतापूर्वक अध्ययन करनेके लिए सख्त मेहनत जरूरी मालूम हुई, इसलिए मैंने कई बार पढ़ना पढ़ाना छोड़कर, अपनी तन्दुरस्ती सुधारनेके लिए और मस्तककी शक्ति बढ़ानेके लिए अपनी पुरानी भट्टीपर लुहारका काम किया।"

युवकोंको यदि औजारोंसे काम करना सिखलाया जाय तो उनको साधारण बातोंकी जानकारी हो जानेके सिवाय और भी कई फायदे होंगे। वे अपने हाथोंसे काम लेना सीखेंगे, उनको स्वास्थ्यदायक काम करनेसे प्रेम हो जायगा, स्थूल पदार्थोंपर अपनी शक्ति आजमानेकी आदत पड़ जायगी, यंत्र-विद्याका कुछ व्यावहारिक ज्ञान हो जायगा, उनमें उपकार करनेकी योग्यता आ जायगी और उनके निरंतर शारीरिक श्रम करनेका अभ्यास हो जायगा। धनाढ्य मनुष्योंसे मजदूर लोग इस बातमें अच्छे हैं कि उनको बचपनसे ही कोई न कोई काम ऐसा करना पड़ता है जिसमें औजारोंका प्रयोग आवश्यक होता है। इस तरह वे हस्तकौशल सीखते हैं और उनको अपनी शारीरिक शक्तियोंसे काम लेना आ जाता है। मजदूरोंके काममें जो खास नुक्स है वह यह नहीं है कि वे शारीरिक श्रम करते हैं किन्तु यह है, कि वे केवल इसी काममें लगे रहते हैं और बहुधा अपनी आत्मिक तथा मानसिक शक्तियोंकी अवहेलना करते हैं। एक ओर तो धनाढ्य मनुष्योंका यह हाल है कि वे मेहनतको नीच समझकर उससे घृणा करते हैं और उस लिए वे शारीरिक काम–काज करना नहीं सीख पाते, और दूसरी ओर गरीब आदमियोंको अपने उद्योग–धंधेसे अवकाश नहीं मिलता, अतएव वे बहुत करके बिलकुल अशिक्षित रह जाते हैं। आवश्यकता है कि शारीरिक श्रम और मानसिक शिक्षाको मिलाकर ये दोनों त्रुटियाँ दूर कर दी जायँ। बहुतसे देशोंमें इस तरहकी शिक्षाका प्रचार होने भी लगा है।

जो मनुष्य बड़े बड़े पेशोंमें लगे हुए हैं उनको भी सफलता पानेके लिए तन्दुरुस्तीकी जरूरत कुछ कम नहीं है। एक प्रसिद्ध लेखकने यहाँ तक कहा है कि "बड़े आदमियोंके गौरवका संबंध शरीरके साथ उतना ही है जितना मस्तकके साथ। किसी सफल वकील या राजनीतिज्ञके लिए स्वास्थ्यदायक श्वासोच्छ्वासकी उतनी ही जरूरत है जितनी तीव्र बुद्धिकी।" मस्तकके व्यापारका आधार जिस शक्ति पर है उसको पूरे तौरपर कायम रखनेके लिये यह जरूरी है कि खून फेफड़ोंमें होकर साँसके द्वारा साफ होता रहे। वकीलको खचाखच भरी हुई अदालतोंमें गरमी सहन करनेसे ही सफलता प्राप्त होती है। राजनीतिज्ञको भी राज-सभामें बहुतसे आदमियोंके बीचमें देर तक विवाद करनेसे जो थकावट होती है उसको सहन करना पड़ता है। इस लिए वकीलों

और राजनीतिज्ञोंको अच्छी तरह काम करते समय बुद्धिसे भी अधिक शारीरिक सहनशीलता और उद्योगशीलताका परिचय देना पड़ता है।

सबसे पहले यह जरूरी है कि तन्दुरुस्तीकी मजबूत नींव डाल ली जाय; परन्तु यह भी याद रहे कि विद्यार्थीकी शिक्षाके लिए मानसिक उद्योगकी आदत डालना भी बहुत जरूरी है। " श्रमकी सर्वत्र जय होती है, " यह कहावत ज्ञान पर विजय पानेमें विशेष सच्ची है। सरस्वतीका भंडार उन सबके लिए एकसा खुला पड़ा है जो उससे लाभ उठानेके लिए काफी मेहनत और अध्ययन करते हैं। ऐसी कोई कठिनाई नहीं कि जिसपर दृढ़निश्चयी विद्यार्थी विजय न पा सके। अध्ययन और व्यापार दोनोंके लिए उत्साहकी जरूरत है। तीव्र इच्छा अवश्य होनी चाहिए। हमको गरम लोहेपर केवल चोटें नहीं लगानी चाहिए किन्तु चोटें लगाते लगाते लोहेको गरम कर देना चाहिए। यह जानकर बड़ा आश्चर्य होता है कि वे लोग अपनी कितनी उन्नति कर लेते हैं जो उत्साही और उद्योगी होते हैं, मौके पर चूकते नहीं और समयके उन छोटे छोटे अंशोंका भी सदुपयोग करते हैं जिनको आलसी लोग नष्ट कर देते हैं। फर्गुसन रातको भेड़की खाल ओढ़कर पहाड़ियों पर पड़े रहते थे और आकाशकी ओर देखा करते थे। इस तरह उन्होंने ज्योतिषशास्त्र सीख लिया। ड्यूने उच्च श्रेणीका दर्शनशास्त्र जूता बनानेसे जो अवकाश मिलता था उसीमें सीख लिया। जी. एस. परांजपेने अपने मालिकके कामसे जो अवकाश मिलता था उसीमें रसायनविद्या सीख ली। राली ब्रदर्सके कामसे जो थोड़ीसी फुरसत मिलती थी उसीमें हेमचन्द्रने कृषिविद्या सीख ली।

हम पहले भी कह चुके हैं कि सर जोशुआ रेनाल्डसको परिश्रमकी शक्ति पर बहुत विश्वास था। वे कहा करते थे कि सभी आदमी निपुणता प्राप्त कर सकते हैं अगर वे मेहनत और धीरजके साथ काम करें। उनका मत था कि प्रतिभाशाली बननेके लिए कठिन परिश्रमकी जरूरत है और शिल्पकारकी निपुणताकी हद उस वक्त तक नहीं होती जबतक कि वह अपनी मेहनतकी हद न कर दे। अगर वह मेहनत करता जाय तो उसकी निपुणता भी बराबर बढ़ती चली जायगी। वे किसी बातको ईश्वरकी तरफसे आई हुई न मानते थे। उन्हें अपने अध्ययन और परिश्रम पर ही भरोसा था। वे कहा करते थे कि " परिश्रमके सिवाय किसी और चीजसे निपुणता नहीं मिल

सकती। अगर तुम्हारी शक्तियाँ उच्च श्रेणीकी हैं, तो परिश्रमसे उनकी उन्नति होगी और अगर तुम्हारी शक्तियाँ औसत दरजेकी हैं तो परिश्रमसे उनकी कमी पूरी होगी।" परिश्रमके सदुपयोगसे सब कुछ मिल सकता है, परन्तु उसके बिना कुछ नहीं मिल सकता। अध्ययनकी शक्तिपर **सर फोवैल बक्सटन**का भी ऐसा ही विश्वास था। वे नम्रतापूर्वक कहा करते थे कि "मैं औरोंके बराबर काम कर सकता हूँ अगर मैं उनसे दूना परिश्रम करूँ और दूना समय खर्च करूँ"। उनका विश्वास था कि चाहे साधन साधारण हों, परन्तु उद्योग असाधारण होना चाहिए और यदि यह हुआ तो बस बेड़ा पार समझिए।

जिन लोगोंको हम प्रतिभाशाली कहते हैं वे सब कठिन परिश्रम करनेवाले और दृढ़ निश्चयी होते हैं। मनुष्यके कामोंसे ही उसकी प्रतिभाका पता लगता है। प्रशंसनीय कामोंके लिए परिश्रम और समयकी जरूरत है—केवल इरादा करनेसे या चाहनेसे कुछ नहीं हो सकता। किसी बड़े कामके करनेके लिए पहलेसे बहुत बड़ी तैयारी करनी पड़ती है। मेहनत करते करते आसानी भी आ जाती है। कोई काम ऐसा नहीं है जो इस वक्त आसान मालूम होता हो लेकिन पहले मुश्किल न रहा हो, यहाँ तक कि चलनेके विषयमें भी यही बात कही जा सकती है। किसी सुवक्ताको देखिए। उसकी चमकती हुई आँखें सुननेवालोंपर तुरन्त ही अपना प्रभाव डालती हैं। उसके होठोंसे उत्तम विचारोंकी नदी बहती है। ये विचार आशातीत होनेके कारण लोगोंको विस्मित कर देते हैं और इनमें कुछ ऐसी बुद्धिमत्ता और सच्चाई होती है कि सुननेवालोंके भी विचार ऊँचे हो जाते हैं। इतनी योग्यता धैर्य्यपूर्वक बार बार दुहरानेसे और अनेक बार निराश होनेसे ही आती है।

अध्ययनमें दो बातोंका खास तौरपर खयाल रखना चाहिए—एक तो जो कुछ सीखा जाय वह शुद्ध हो और दूसरे उसको पूरे तौरपर सीखा जाय—कोई विषय अधूरा न छोड़ा जाय। **फ्रांसिस हार्नर**ने जब अपने मस्तकके सुधारनेके लिए नियम लिखे थे तब इस बातपर बड़ा जोर दिया था कि किसी विषयपर पूरा अधिकार पानेके लिए अखंड उद्योग करनेका अभ्यास डालना चाहिए। इसी लिए वे थोड़ी किताबें पढ़ते थे और नियमपूर्वक पढ़नेपर बड़ा ध्यान रखते थे। ज्ञानका मूल्य उसकी मात्रा पर नहीं किन्तु उसके सदुपयोग

पर निर्भर है । ऊपरा-ऊपरी ज्ञान चाहे कितना भी हो परन्तु उसकी अपेक्षा थोड़ासा भी ज्ञान जो शुद्ध और संपूर्ण हो व्यवहारमें हमेशा अधिक मूल्य-वान् होता है ।

एक विद्वान्का कथन है कि "जो मनुष्य एक वक्तमें एक काम करता है वह सबसे जियादा काम कर लेता है।" चारोंतरफ हाथ-पैर फेंकनेसे हमारी शक्ति कम हो जाती है, हमारी उन्नति रुक जाती है और हमको डावाँडोल रहने और अधूरा काम करनेकी आदत हो जाती है । एक दूसरे विद्वान्ने अपने अध्ययन करनेकी विधि और अपनी सफलताका गुप्त रहस्य इस तरह बतलाया था:—" जब मैं कानून पढ़ने लगा तब मैंने इरादा कर लिया कि मैं जो बात सीखूँगा, उसपर अपना पूरा अधिकार जमा लूँगा और जब तक एक बातको पूरे तौर पर न सीख लूँगा तबतक आगे न बढ़ूँगा। मेरे बहु-तसे साथी एक दिनमें इतना पढ़ जाते थे जितना मैं एक हफ्तेमें पढ़ता था, परन्तु बारह महीने बाद मेरा ज्ञान बिलकुल ताजा बना रहा और उनका ज्ञान उनकी याददाश्तसे धीरे धीरे कूच कर गया ।"

बहुतसी पुस्तकें पढ़ लेनेसे ही कोई मनुष्य बुद्धिमान् नहीं हो जाता। बुद्धिमान् बननेके लिए कई और बातोंकी जरूरत है। पहली बात यह है कि विद्या ऐसी होनी चाहिए कि जिस उद्देशके लिए वह पढ़ी जाय उसको सिद्ध करती हो; दूसरे जिस विषयको पढ़ा जाय उस पर पढ़ते समय एकाग्रचित्त रहना चाहिए; और तीसरी बात यह है कि ऐसी आदत डालनी चाहिए जिससे मनकी प्रवृत्ति हमेशा ठीक रहे । एबरनेथी कहा करता था कि "मेरे मस्तकमें ज्ञान समानेकी एक हद है, और अगर मैं इस हदसे जियादा ज्ञान प्राप्त कर लेता हूँ तो जो ज्ञान मेरे मस्तकमें पहलेसे मौजूद रहता है उसका कुछ अंश निकल जाता है। गरज यह कि मेरे मस्तकमें जितनी गुंजाइश है उससे जियादा ज्ञान नहीं समाने पाता।" चिकित्साशास्त्रके अध्ययनके विष-यमें चर्चा करते समय उसने कहा था कि "अगर आदमी यह ठीक ठीक निश्चय कर ले कि मुझे क्या करना चाहिए, तो उसके उस कामके करनेके लिए उचित उपाय ढूँढ़नेमें बहुत ही कम असफलता होगी।"

सबसे अधिक लाभदायक अध्ययन वह है जो किसी निश्चित उद्देश और अभीष्टकी प्राप्तिके लिए किया जाता है। अगर हम किसी तरहकी विद्या पर

पूरा अधिकार जमा लें, तो उससे जब चाहें तभी आसानीसे काम ले सकते हैं। इस लिए सिर्फ यह काफी नहीं है कि हमारे पास पुस्तकें रक्खी हों या हम यह जानते हों कि अमुक अमुक बातें अमुक अमुक पुस्तकोंमें मिलेंगी। जीवनके व्यवहारके लिए हमारी बुद्धिमें ही ऐसी कार्यकुशलता होनी चाहिए कि हम उससे जब चाहें काम ले सकें। यह काफी नहीं है कि हमारे घरपर तो रुपयोंका ढेर लगा हो और जेबमें एक पैसा भी न हो। हमको चलते फिरते हरवक्त अपने पास ज्ञानरूपी सिक्का रखना चाहिए, नहीं तो मौका पड़ने पर हमको दुखी होना पड़ेगा।

व्यापारकी तरह आत्मोद्धारमें या अपनी उन्नति करनेमें भी निर्णयशक्ति दृढनिश्चय और तत्परताकी जरूरत है। इन गुणोंकी वृद्धि तभी हो सकती है जब नवयुवकोंमें स्वावलम्बनशील होनेकी आदत डाल दी जाय और उनको शुरू शुरूमें जहाँ तक हो सके स्वयं काम करनेमें स्वतंत्र कर दिया जाय। बहुत जियादा उपदेश करनेसे तथा रोकटोक करनेसे स्वावलम्बनकी आदतें नहीं पड़ने पातीं। अपने ऊपर विश्वास न होनेसे हमारी उन्नतिमें बहुत बाधा आ जाती है। अपने फलाँगते हुए घोड़ेको रोक लेना ही जीवनकी आधी असफलताओंका कारण है। डाक्टर जानसन कहा करते थे कि "मेरी सफ-लताका यही कारण है कि मुझे अपनी शक्तियोंपर भरोसा है।" जिस मनु-ष्यको अपनी शक्तियोंपर भरोसा नहीं होता उसमें कार्यकुशलता भी नहीं होती और इससे उसकी उन्नतिमें बहुत बाधा पहुँचती है। जो मनुष्य बहुत कम काम कर पाते हैं समझो कि वे कोशिश भी बहुत कम करते हैं।

बहुतसे मनुष्य अपना सुधार करनेकी इच्छा तो करते हैं परन्तु मेहनतसे जो उसके लिए बहुत जरूरी है—जी चुराते हैं। डाक्टर जानसन कहा करते थे कि "आज कलके लोगोंमें यह एक तरहका मानसिक रोग है कि वे अध्य-यन करते करते उकता जाते हैं।" यह बात इस जमानेमें भी पाई जाती है। आजकल बहुत लोगोंको पढ़नेकी इच्छा रहती है; परन्तु वे मेहनतसे जी चुराते हैं और ऐसी तरकीबें ढूँढ़ा करते ह जिनसे मेहनत कम करनी पड़े वे चाहते हैं कि हमको विज्ञान सीखनेका कोई सरल 'गुर' बतला देवे अथवा दो एक पुस्तकें पढ़-पढ़ाकर ही हम संस्कृत सीख जायँ। वे उस महिलाके समान हैं जिसने एक अध्यापक अपने पढ़ानेके लिए इस शर्तपर

रक्खा था कि वह उसको क्रिया और कृदन्त याद करनेका कष्ट न दे। आजकल भारतवर्षमें ऐसी पुस्तकें बहुत प्रकाशित हो रही हैं जिनका मन्तव्य 'बिना उस्तादके अँगरेजी सिखाना' है और हम देखते हैं कि युवक बड़े चावसे उनको मोल लेकर पढ़ते हैं। दो एक पुस्तकें देख-भालकर ही हम विज्ञानमें 'टूँ टाँ' करने लगते हैं। थोड़ेसे व्याख्यान सुनकर और कुछ प्रयोग (Experiments) देखकर हम रसायन सीख लेते हैं और जब हम हँसानेवाली गैस (लाफिंग गैस) सूँघ लेते हैं, हरे रंगके पानीको लाल रंगका होता हुआ देख लेते हैं और फासफरस (Phosphorus) को आक्सजन (Oxygen) में जलता हुआ देख लेते हैं तब समझ लेते हैं कि रसायनशास्त्री हो गये। ऐसा ज्ञान चाहे सर्वथा मूर्ख रहनेसे अच्छा हो, परन्तु वह किसी काममें नहीं आसकता। इस तरह हम बहुधा समझ लेते हैं कि हम शिक्षा पाते हैं, परन्तु असलमें हम तमाशा देखकर केवल खुश हो लेते हैं।

नवयुवक अध्ययन और परिश्रमके बिना ही ज्ञान प्राप्त करनेका सुलभ मार्ग ढूँढ़ते हैं। यह शिक्षा नहीं है। ऐसा करनेसे मस्तकके लिए कुछ काम तो निकल आता है, परन्तु वास्तवमें इससे कुछ काम नहीं निकलता। इससे कुछ देरके लिए जोश पैदा हो जाता है और मस्तकमें एक तरहकी तेजी आ जाती है; परन्तु चूँकि हमारा कोई निश्चित उद्देश नहीं रहता और सिवाय चित्त प्रसन्न करनेके और कोई बड़ा मतलब भी नहीं होता, इस लिए हमको कोई वास्तविक लाभ नहीं होता। ऐसे ज्ञानका केवल चलताऊ प्रभाव पड़ता है—सिर्फ एक तरहका जोश मालूम होता है, इससे जियादा नहीं। इस तरह बहुतसे मनुष्योंके सर्वोत्तम मानसिक गुण गहरी नींदमें सोया करते हैं। क्योंकि खूब उद्योग करनेसे और स्वतंत्रतापूर्वक काम करनेसे ही वे जागृत होते हैं। प्रायः ऐसा होता है कि इन गुणोंके दर्शन उस समय तक नहीं होते जब तक कोई आकस्मिक मुसीबत या कष्ट न आ जाय। ऐसी दशामें मुसबित या कष्ट आशीर्वादके तुल्य होता है; क्योंकि उससे बहुधा उत्साहकी जागृति होती है।

जो युवक ज्ञान प्राप्त करनेमें विनोद ढूँढ़ा करते हैं उनसे कठिन अध्ययन और परिश्रम नहीं हो सकता। वे खेलते कूदते ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं और ज्ञान प्राप्त करनेको खेल समझ बैठते हैं। इस तरह मनको उचाट खानेकी

आदत पड़ जाती है। जिससे कुछ समयमें मस्तक और चरित्र दोनोंमें बहुत निर्बलता आ जाती है। जिस तरह हुक्का पीनेसे दिमाग कमजोर हो जाता है उसी प्रकार तरह तरहकी किताबें पढ़नेसे भी मस्तकमें कमजोरी आ जाती है। लोग कहते हैं कि ऐसा करनेसे मस्तककी नींद दूर हो जाती है; परन्तु असली बात यह है कि इस कुटेवसे सबसे जियादा आलस्य और कमजोरी पैदा होती है।

यह कुटेव बढ़ती जाती है और इससे कई तरहकी हानियाँ होती हैं। छोटीसे छोटी हानि जो इससे होती है वह अल्पज्ञता है और बड़ीसे बड़ी हानि यह होती है कि स्थिर होकर मेहनत करनेसे घृणा हो जाती है और मनका उत्साह बहुत मंद हो जाता है। यदि हम वास्तवमें बुद्धिमान् होना चाहते हैं, तो हमको अपने पूर्वजोंकी तरह निरंतर उद्योग करना चाहिए; क्योंकि जितने मूल्यवान् पदार्थ हैं वे सब केवल परिश्रमसे मिलते हैं और भविष्यमें भी सदैव यही बात रहेगी। काम करनेमें हमारा कोई उद्देश जरूर होना चाहिए और हमको परिणामकी धैर्य्यपूर्वक प्रतीक्षा करनी चाहिए। हर प्रकारकी सर्वोत्तम उन्नति धीरे धीरे होती है; परन्तु सच्चे दिलसे और उत्साहके साथ काम करनेवालेको फल अवश्य मिलता है। यदि मनुष्यके दैनिक जीवनमें परिश्रमकी आदत पड़ जायगी, तो वह धीरे धीरे स्वार्थको छोड़कर बड़ी बड़ी और अधिक उपयोगी बातोंमें भी अपनी शक्तियोंका प्रयोग करेगा। हमको परिश्रम सदैव करते रहना चाहिए, क्योंकि आत्मोद्धार या आत्मोन्नतिके कामका अंत नहीं है। प्रसिद्ध कवि ग्रेका कथन है कि "काममें लगे रहनेसे मनुष्य सुखी रहता है।" बिशप कम्बरलैंड कहा करते थे कि "मोरचा लगकर नष्ट होनेसे घिस-घिस कर नष्ट हो जाना अच्छा है।"

अपनी शक्तियोंका सदुपयोग करनेसे ही हम आदरके अधिकारी बनते हैं। जो अपनी एक शक्तिसे अच्छी तरह काम लेता है उसका उतना ही आदर होना चाहिए जितना उस मनुष्यका होता है जिसके पास दस शक्तियाँ मौजूद हैं। जिस तरह अपने पूर्वजोंकी दौलत पा जानेमें अपनी योग्यताकी कोई अपेक्षा नहीं रहती, उसी तरह उत्तम मानसिक शक्तियोंका अधिकारी होनेमें भी अपनी योग्यताकी कुछ अपेक्षा नहीं रहती। निज योग्यताका परिचय तो इन बातोंसे मिलेगा कि उन शक्तियोंसे कैसा काम लिया जाता है

और उस दौलतका कैसा प्रयोग किया जाता है? यद्यपि किसी उपयोगी उद्देश्यको ध्यानमें न रखकर भी हम अपने मस्तकमें बहुतसा ज्ञान संग्रह कर सकते हैं; परन्तु ज्ञानके साथ भलमनसाहत और बुद्धिमानी भी आनी चाहिए और साथ ही साथ सच्चरित्रता भी होनी चाहिए। नहीं तो वह ज्ञान दो कौड़ीका है। एक विद्वान् तो कोरी मानसिक शिक्षाको हानिकारक बतलाया करता था! वह इस बात पर जोर दिया करता था कि ज्ञानकी जड़ोंको सुव्यवस्थित इच्छारूपी मिट्टीमें जमना चाहिए और उसीमेंसे अपना भोजन खींचना चाहिए। यह सच है कि मनुष्य ज्ञान प्राप्त करनेसे अधम पापोंसे बच सकता है; परन्तु वह स्वार्थ-परतासे नहीं बच सकता। स्वार्थपरतासे उसी वक्त छुटकारा मिल सकता है जब मनुष्य उत्तम नियम बना ले, उनके अनुसार चले और अच्छी आदतें डाल ले। यही कारण है कि नित्य ही हमारे देखनेमें ऐसे बहुत मनुष्य आते हैं जिनका ज्ञान तो विशाल होता है, परन्तु चरित्र सर्वथा भ्रष्ट होता है; उनमें स्कूली विद्या होनेपर भी व्यावहारिक बुद्धि बहुत कम होती है। ऐसे ज्ञानी मनुष्य अपने सच्चरित्रसे दूसरोंके लिए अनुकरणीय तो क्या होंगे, उलटे उनकी दुर्दशा देखकर उन जैसे चरित्रसे सावधान रहनेके लिए लोग उनकी पटतर देने लगते हैं! आज कल जहाँ तहाँ यही सुन पड़ता है कि "ज्ञान बल है" परन्तु पागलपन, अत्याचार और तृष्णा भी तो बल हैं! यदि शिक्षा बुद्धिमानीके साथ न दी जाय, तो ऐसे ज्ञानसे दुष्ट मनुष्य और भी भयंकर हो जायँ और वह समाज, जो उस ज्ञानको बहुत अच्छा समझता हो पिशाच-समाज बन जाय।

सम्भव है कि हम आज कल पुस्तकें पढ़ने-पढ़ानेमें बहुत जियादा महत्त्व समझते हों। चूँकि हमारे पास बहुतसे पुस्तकालय, विद्यालय और अजायब-घर हैं, इस लिए हम समझते होंगे कि हम बहुत उन्नति कर रहे हैं, परन्तु ऐसी सुविधायें सर्वोत्तम आत्मोद्धारमें जितनी सहायता देती हैं उतनी ही बाधा भी पहुँचा सकती हैं। जिस तरह धनके केवल स्वामी बन जानेसे उदारता नहीं आती, उसी तरह अपने पास केवल पुस्तकालय रख लेनेसे विद्वत्ता नहीं आती। यद्यपि हमारे पास अब भी बड़ी बड़ी सुविधायें मौजूद हैं, तो भी पहलेके समान यह अब भी सच है कि निरीक्षण, ध्यान, आग्रह और परिश्रमके प्राचीन मार्गपर चलनेसे ही हम बुद्धिके स्वामी बन सकते हैं।

अपने पास पुस्तकें इत्यादि ज्ञानके साधनोंका मौजूद होना और बुद्धिका होना ये दो बातें अलग अलग हैं। किताबें पढ़ लेनेसे ही बुद्धिकी प्राप्ति नहीं होती; क्योंकि पुस्तकोंमें हम दूसरोंके विचारोंको पढ़ते हैं पर हमारा मस्तक स्वयं कुछ काम नहीं करता। एक बात और भी है। हम पुस्तकें क्या पढ़ते हैं मानों एक तरहकी मानसिक मदिरा पीते है, जो थोड़ी देरके लिए हमको मदमत्त बना देती है, परन्तु हमारे मस्तककी उन्नतिमें अथवा चरित्रगठनमें कुछ भी सहायता नहीं देती। इस तरह बहुतसे मनुष्य यह समझते हैं कि हम पुस्तकें पढ़कर अपने मस्तककी उन्नति करते हैं, परन्तु असलमें वे अपने समयको वृथा खोया करते हैं जिससे केवल यही लाभ मालूम होता है कि वे बुरे कामोंसे बहुत कुछ बचे रहते हैं।

यह भी याद रखना चाहिए कि पुस्तकोंद्वारा प्राप्त किया हुआ अनुभव यद्यपि मूल्यवान् होता है तो भी उसकी गिनती विद्वत्ताहीमें हो सकती है; परन्तु जो अनुभव हम अपने जीवनमें स्वयं प्राप्त करते हैं उसकी गिनती बुद्धिमें है; और दूसरे प्रकारके अनुभवकी छोटीसी मात्रा भी पहले प्रकारके बड़ेसे बड़े ढेरसे अधिक मूल्यवान् है।

उत्तम पुस्तकोंका पढ़ना यद्यपि बड़ा लाभदायक और शिक्षाप्रद है तो भी मस्तककी उन्नति करनेका यह केवल एक उपाय है और चरित्रगठन पर व्यावहारिक अनुभव और उत्तम उदाहरणकी अपेक्षा इसका प्रभाव भी बहुत कम पड़ता है। संसारमें अनेक बुद्धिमान्, वीर और धर्मनिष्ठ महात्मा उस समय हो चुके हैं जब सर्व साधारणमें पुस्तकोंके पढ़नेका इतना प्रचार न था। यह अवश्य स्वीकार करना पडेगा कि सुधारका मुख्य उद्देश यह नहीं है कि हमारा मस्तक केवल दूसरोंके विचारोंसे भर जाय, किन्तु यह है कि हमारी बुद्धिमत्ता बढ़े और जिस प्रकारके जीवनमें हम प्रवेश करें उसमें अधिक उपयोगी और निपुण कार्यकर्ता सिद्ध हों। ऐसे बहुतसे उत्साही और उपयोगी कार्यकर्ता हो गये हैं जिन्होंने बहुत कम पुस्तकें पढ़ी थीं। रेलके अंजनके आविष्कारक **स्टीफिन्सन** और यंत्रकार **ब्रिंडलेने** युवा अवस्था तक पढ़ना लिखना बिलकुल न सीखा था, परन्तु फिर भी उन्होंने बड़े बड़े काम किये। **जान हंटरने** पढ़ना लिखना बीस वर्षकी उम्र तक न सीखा था, परन्तु वे मेज कुर्सी बनानेमें अच्छेसे अच्छे कारीगरीको मात कर देते थे। स्वामी विवे-

कानन्दके गुरु महात्मा रामकृष्ण परमहंस बहुत ही कम पढ़े लिखे थे; परन्तु उनके अनुभव ज्ञानकी इतनी प्रसिद्धि थी कि सैकड़ों विद्वान् उनके पास उपदेश सुननेको आया करते थे। महाराज शिवाजीने कितनी पुस्तकें पढ़ी थीं? महाराणा रणजीतसिंह पढ़ना लिखना कब जानते थे? सम्राट् अकबर भी बहुत ही कम पढ़े थे।

अतएव केवल बहुतसी पुस्तकें पढ़ लेने और याद कर लेनेमें कुछ महत्त्व नहीं है; महत्त्व तो पुस्तक पढ़नेके उद्देश्यमें है जिस उद्देश्यसे कि उस ज्ञानका उपयोग किया जाता है। ज्ञान प्राप्त करनेका यह उद्देश्य होना चाहिए कि हमारी बुद्धि परिपक्व हो और हमारे चरित्रकी उन्नति हो; हम अधिक उन्नत, सुखी और उपयोगी बनें; और जीवनके हरएक बड़े कार्यको सिद्ध करनेमें अधिक परोपकारी उत्साही और निपुण हो जायँ। जो मनुष्य सदाचारको भूलकर कोरे पांडित्यकी प्रशंसा किया करते हैं उनका शीघ्र ही पतन होता है। हमको स्वयं अच्छा बनना चाहिए और कुछ करके दिखलाना चाहिए। दूसरेके कामोंको पुस्तकोंमें केवल पढ़कर या मनन कर लेनेसे ही हमें संतोष न कर लेना चाहिए। हमारा सर्वोत्तम ज्ञान जीवनका अंश बन जाना चाहिए और हमारे सर्वोत्तम विचार कार्यरूपमें परिणत होने चाहिए। हम कमसे कम इतना तो कह सकें कि 'मैंने यथाशक्ति अपनी उन्नति कर ली। इससे अधिक और क्या हो सकता है?' क्योंकि यह प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि उसके ऊपर जितनी जिम्मेदारियाँ हैं और उसमें जितनी स्वाभाविक शक्तियाँ हैं उनके अनुसार वह अपनी उन्नति करे।

आत्मशासन और आत्मनिरोधसे ही कार्यकुशलताका आरंभ होता है और इनका आधार आत्मसम्मान है। इससे आशाका विकाश होता है और आशा अन्तर शक्तिकी सहेली और सफलताकी माता है। जो मनुष्य दृढ़ आशा करता है उसको चमत्कारोंके दर्शन होते हैं। छोटेसे छोटे मनुष्यके भी ये विचार होने चाहिएँ:—"अपनी कदर करना और अपना सुधार करना, यही मेरे जीवनका सच्चा कर्तव्य है। मैं एक बड़े समाजका अखंड अंश हूँ और मेरे ऊपर बड़ी बड़ी जिम्मेदारियाँ हैं। इसलिए समाजके प्रति मेरा यह कर्तव्य है कि मैं अपनी शारीरिक, मस्तकसम्बन्धी अथवा स्वाभाविक शक्तियोंको नष्ट न करूँ। नष्ट करना तो दूर रहा, बल्कि मेरा कर्तव्य है कि मैं

उनकी यथाशक्ति उन्नति करूँ। मुझे केवल बुरी आदतोंसे ही न बचना चाहिए, किन्तु अपने सद्गुणोंका विकाश करना चाहिए। चूँकि मैं अपना सम्मान करता हूँ इसलिए मुझे दूसरोंका भी वैसा ही सम्मान करना चाहिए और इसी तरह दूसरोंका भी कर्तव्य है कि वे मेरा सम्मान करें।" इन विचारोंके अनुसार चलनेसे पारस्परिक सम्मान न्याय और शान्तिका साम्राज्य जड़ पकड़ जायगा। सब कायदे कानून इन्हीं तीन बातोंके आधार पर बनाये जाते हैं।

आत्मसम्मान मनुष्यके लिए सबसे बढ़िया वस्त्र है और मस्तकमें फूँकनेके लिए सर्वोच्च भाव है। जिस मनुष्यमें आत्मसम्मानका ऊँचा विचार मौजूद है वह न तो विषयवासनाओंमें फँसकर अपने शरीरको अपवित्र करेगा और न मलीन विचारोंसे अपने मस्तकको गंदा करेगा। यदि इस विचारके अनुसार निरन्तर काम किया जाय तो मालूम होगा कि सफाई, संयम, शील, सदाचार, धर्मपरायणता इत्यादि सद्गुणोंकी जड़ यही विचार है। एक कविका कथन है कि "पवित्र और उचित आत्मसम्मानको हर एक अच्छे कामका मूल समझना चाहिए।" अपने आपको नीच समझनेसे मनुष्य अपनी और दूसरोंकी निगाहमें गिर जाता है। जैसे हमारे विचार होंगे वैसे ही हमारे काम होंगे। वह मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता जो नीचे देखता है; यदि वह उठना चाहता है, तो उसे ऊपर देखना चाहिए। छोटेसे छोटा मनुष्य भी इस विचारको धारण करके नीचे नहीं गिर सकता। और तो क्या निर्धनताको भी आत्मसम्मानके द्वारा उठाया जा सकता है और उन्नत किया जा सकता है। अगर कोई गरीब आदमी प्रलोभनोंके बीचमें आकर दृढ़ बना रहे और खोटे काम करके अपने आपको नीच न बनावे, तो उसका यह काम सचमुच ही बहुत प्रशंसनीय है।

हम ऐसे लोगोंके बहुतसे उदाहरण दे चुके हैं जो अपने ही आप स्वालम्बनसे उन्नति करके 'रंकसे राव' बन गये हैं। पर इससे यह न समझ लेना चाहिए कि सब मनुष्य 'राव' हो जायँ। सुधारका या अपनी उन्नतिका मतलब धनवान् होना नहीं है। यदि कोई मनुष्य अपना सुधार कर ले तो यह जरूरी नहीं है कि वह धनाढ्य भी हो जाय। यह बात हमेशा रही है कि अधिकांश मनुष्योंको, चाहे वे कितने ही शिक्षित हों, साधारण उद्योगधंधे

करने पड़ते हैं और समाजमें चाहे कितना ही सुधार हो जाय, परन्तु अधिकांश मनुष्योंको प्रतिदिनके काम-काजोंसे छुटकारा नहीं मिल सकता—ये काम-काज तो उन्हें करने ही पड़ते हैं। उन्हें मेहनत न करना पड़े इस प्रकारकी इच्छा रखना अनुचित है। यदि कोई इस प्रकारकी इच्छा करे भी, तो भी वह सफल नहीं हो सकती।

सब लोग मेहनत-मजदूरीके काम नहीं छोड़ सकते, यह कमी संसारमें हमेशा रहेगी। फिर भी हमारी समझमें यह कमी कई अंशोंमें दूर हो सकती है। अगर हम श्रमजीवियों या मेहनत मजदूरी करनेवालोंके विचार ऊँचे कर दें, तो उनकी दशा सुधर जाय—वे एक तरहके ऊँचे दर्जेके मनुष्य बन जायँ। श्रेष्ठ विचार गरीब और अमीर दोनोंको प्रकाशित कर देते हैं। गरीबसे गरीब आदमीके पास भी, चाहे वह बुरीसे बुरी झोंपड़ीमें रहता हो, वर्तमान और भूतकालके बड़े बड़े विचारवान् मनुष्य पुस्तकोंके रूपमें आकर बैठेंगे। किसी अच्छे उद्देशके लिए अध्ययन करनेकी आदत सर्वोत्तम आनन्द और आत्मोन्नतिका कारण हो सकती है और आचारपर अत्यन्त लाभदायक प्रभाव डाल सकती है। आत्मोद्धारसे भले ही धन न मिले, परन्तु उससे विचार तो सदैव ऊँचे रहेंगे। एक सेठने एक संन्यासीसे घृणाके साथ पूछा कि "तुमने दर्शनशास्त्र पढ़कर क्या पा लिया?" बुद्धिमान संन्यासीने उत्तर दिया कि "और कुछ नहीं तो मुझे अंतःकरणमें सत्संगति मिल गई है।"

बहुतसे मनुष्य आत्मोद्धारके काममें निराश और उत्साहहीन हो जाते हैं, क्योंकि वे संसारमें इतनी जल्दी नहीं फूलते फलते जितना वे अपने आपके योग्य समझते हैं। वे बीज बोकर यह चाहते हैं कि उसका तुरन्त ही वृक्ष बन जाय। वे ज्ञानको शायद बिक्रीकी चीज समझते हैं और इसलिए जब उनकी आशाके अनुसार ज्ञान नहीं बिकता तब उनकी जान सी निकल जाती है। एक बार एक स्कूलमें लड़कोंकी कमी होने लगी। अध्यापकने इसका कारण जानना चाहा। मालूम हुआ कि बहुतसे लोगोंको यह आशा थी कि उनके लड़के शिक्षा पानेसे पहलेसे अधिक धनवान् हो जायँगे; परन्तु यह जान कर कि शिक्षासे कुछ लाभ न हुआ उन्होंने अपने लड़कोंको स्कूल जानेसे रोक लिया और अब वे उनको शिक्षा देनेका कष्ट नहीं उठाना चाहते।

आत्मोद्धारके विषयमें भी ऐसा ही नीच विचार कुछ लोगोंमें फैला हुआ है। और समाजमें मानवी जीवनके विषयमें जो किम्बदन्तियाँ न्यूनाधिकरूपमें सदा प्रचलित रहती हैं वे इस विचारको और भी प्रबल कर देती हैं। आत्मोद्धार एक ऐसी शक्ति है जो चरित्रको ऊँचा करती है और आध्यात्मिक गुणोंको बढ़ाती है; परन्तु अगर हम उसको दूसरोंसे बाजी मारनेका अथवा मनके द्वारा मजा लूटनेका साधन समझ लें, तो हम उसके मूल्यको बहुत कम कर देते हैं। यदि मनुष्य अपनी उन्नतिके लिए और समाजमें अपनी स्थितिको ऊँचा करनेके लिए परिश्रम करे, तो यह निस्संदेह अत्यन्त श्रेष्ठ है; परन्तु ऐसा करते समय अपने आपको—अपने चरित्रको—बलिदान न कर देना चाहिए। मस्तकको शरीरका गुलाम बना देना बहुत बुरा है। जो मनुष्य सफलता प्राप्त न होनेपर अपने दुर्भाग्यको रोता है उसका मन बड़ा ही संकीर्ण और निकम्मा है; क्योंकि सफलता कोरे ज्ञानसे नहीं मिलती, किन्तु कामकाजकी बातोंमें परिश्रम करने और उनपर ध्यान देनेकी आदत डालनेसे प्राप्त होती है।

यदि हम शिक्षा पाकर केवल जोश दिलानेवाली और हँसानेवाली पुस्तकोंको पढ़-पढ़कर मनोविनोद किया करें, तो इससे भी शिक्षाका व्यभिचार होता है। आजकल बहुतसे मनुष्य ऐसा ही करते हैं। हँसी ठट्टा और जोश दिलानेवाली बातोंके लिए आजकल लोग ऐसे पागलसे हो रहे हैं कि हमारी पुस्तकोंमें ये दोनों बातें खूब घुस पड़ी हैं। आज कलकी पुस्तकों और पत्रा-पत्रिकाओंमें सर्वसाधारणकी रुचिके अनुसार खूब चटपटी बातें भरी रहती हैं, जो आनन्ददायक और हास्योत्पादक होती हैं और सब तरहके लौकिक और परमार्थिक नियमोंका उल्लंघन करती हैं। आज कल उपन्यास पढ़नेका शौक बहुत बढ़ता जाता है; परन्तु इस जमानेके अधिकांश उपन्यास ऐसे हैं जो सब लोगोंपर और विशेषकर नवयुवकोंपर बड़ा बुरा असर डालते हैं। वे उनको खयाली दुनियाकी सैर कराते हैं, उनको आलसी बना देते हैं और उनके चरित्रको भ्रष्टकर देते हैं।

मेहनतके बीचमें आराम करनेके लिए और कठिन कामोंके बोझसे हलका होनेके लिए किसी प्रतिभाशाली लेखककी लिखी हुई कहानी पढ़ना अच्छा है; क्योंकि उससे सच्चा मानसिक आनंद मिलता है। इस प्रकारके साहित्यको सब तरहके मनुष्य, क्या वृद्ध और क्या युवक, सभी बड़े चावसे पढ़ते हैं

और हम इस प्रकारके आनन्दकी उचित मात्रासे किसीको वंचित करना भी नहीं चाहते। परन्तु केवल इसी प्रकारकी पुस्तकोंको पढ़नेसे और मानवी जीवनकी बनावटी बातोंके पढ़नेमें अपने फुरसतके अधिकांश समयको लगा देनेसे केवल समय ही नष्ट नहीं होता, किन्तु और भी अनेक हानियाँ होती हैं। जो लोग सदैव उपन्यास पढ़ा करते हैं वे झूठे और बनावटी विचार दौड़ाया करते हैं, जिससे सच्चे और लाभदायक विचारोंके नष्ट हो जाने अथवा शिथिल हो जानेका डर है। झूठे किस्सोंके पढ़नेसे जो दयाभाव उत्पन्न होता है उससे दयामय कामोंके करनेकी शक्ति नहीं आती। ऐसे किस्सोंके पढ़नेसे हमारे हृदयमें जो कोमलता आजाती है उसके प्राप्त करनेमें हमको न तो कष्ट उठाना पड़ता है और न स्वार्थत्याग करना पड़ता है; इस लिए जिस हृदयपर झूठे किस्सोंका प्रभाव पड़ता रहता है उसपर अंतमें सच्ची बातोंका भी कुछ असर नहीं होता। उसके चरित्रमेंसे गंभीरता धीरे धीरे नष्ट हो जाती है और उसकी जिन्दादिली गुप्तरूपसे जाती रहती है।

औसत दरजेका विनोद लाभदायक होता है और हम उसे अच्छा समझते हैं; परन्तु अधिक विनोद स्वभावको बिगाड़ देता है। उससे हमें सावधानीके साथ बचे रहना चाहिए। कहा जाता है कि "यदि लड़के बिलकुल न खेलें और सदैव काममें जुटे रहें, तो वे सुस्त हो जाते हैं;" परन्तु यदि लड़के काम बिलकुल न करें और सदैव खेलते रहें, तो उनकी दशा और भी खराब हो जाती है। यदि युवकका चित्त विनोदमें ही डूबा रहे, तो उसके लिए इससे अधिक हानिकारक कुछ नहीं। ऐसा करनेसे उसके मस्तककी सर्वोत्तम शक्तियाँ निर्बल पड़ जाती हैं, साधारण खुशियोंमें कुछ मजा नहीं आता, उच्च श्रेणीके आनद भोगनेकी वाञ्छा जाती रहती है और जब जीवनके काम काज उसके सामने आते हैं और उसे कर्तव्यका पालन करना पड़ता है तब नतीजा यह होता है कि उसे इन कामोंसे नफरत हो जाती है। विषयासक्त मनुष्य जीवनकी शक्तियोंको नष्ट कर देते हैं और सच्चे सुखके द्वारको बंद कर देते हैं। वे छोटी उम्रमें ही बलहीन हो जाते हैं, इस लिए उनके चरित्र अथवा बुद्धिकी उन्नति नहीं हो पाती। जिस बालकमें सादगी न हो, जिस कुमारीमें भोलापन न हो, जिस लड़केमें सच बोलनेकी आदत न हो, वे उस मनुष्यसे अधिक करुणाजनक नहीं मालूम होते जिसने अपने यौवनको विषयभोगमें नष्ट कर

दिया है। जैसे हम किसीके साथ आज बुराई करते हैं तो उसका फल हमको दूसरे दिन भोगना पड़ता है, उसी तरह जो पाप हमने जवानीमें किये हैं उनका दंड हमको उतरती उम्रमें मिलता है। जवानीमें जो बुरे काम बिना सोचे समझे किये जाते हैं वे केवल स्वास्थ्यको ही नष्ट नहीं करते किन्तु पुरुषत्वको भी निकम्मा कर देते हैं। दुराचारी युवकमें धब्बा लग जाता है और यदि वह पवित्र होना भी चाहे तो साधारण प्रयत्नोंसे नहीं हो सकता। यदि उसका कोई इलाज हो सकता है तो वह यही है कि उसको अपने कर्तव्य-पालन पर खूब ध्यान रखना चाहिए और उपयोगी कामोंमें उत्साहपूर्वक लगे रहना चाहिए।

फ्रांस देशके निवासी **बैंजामिन कान्सटैंट**की प्रतिभा बहुत बढ़ी चढ़ी थी। उनकी मानसिक शक्तियाँ बड़ी विलक्षण थीं। वे साधारण परिश्रम और आत्मनिरोधसे बड़े बड़े काम कर डालते थे, परन्तु उन्होंने बीस वर्षकी उम्रमें ही अपने शारीरिक बलको नष्ट कर डाला और इसलिए उनका सारा जीवन दुःखमय हो गया। उन्होंने बहुतसे काम करना चाहे, परन्तु वे न कर सके। वे पुस्तकें बड़ी तेजीके साथ लिख सकते थे। उनकी गिनती उस समयके धुरंधर लेखकोंमें थी। उनकी इच्छा ऐसी कई पुस्तकें लिखनेकी थी जिनकी संसारमें हमेशा कदर हो। उनके विचार तो ऐसे ऊँचे थे, परन्तु उनका रहन-सहन बड़ा ही नीच था। यद्यपि उन्होंने कई श्रेष्ठ पुस्तकें लिखीं, परन्तु इससे उनके जीवनकी नीचता न छिप सकी। जब उनका मस्तक एक धर्मसंबंधी ग्रंथ तैयार करनेमें लगा था तब वे जुआ भी खेलते रहते थे। जिस समयमें वे अपनी एक और पुस्तक लिख रहे थे, उस समय उन्होंने एक ऐसा झगड़ा मोल ले लिया था जिससे उनकी बड़ी बदनामी हुई। उनमें इतनी मानसिक शक्तियाँ थीं, फिर भी वे शक्तिहीन थे। क्योंकि वे सच्चरित्रतासे कोसों दूर भागते थे। उन्होंने एक बार कहा था कि "उँह! सत्कार और बड़प्पन किस चिड़ियाका नाम है? ज्यों ज्यों मेरी उम्र बढ़ती जाती है त्यों त्यों मुझे साफ साफ मालूम होता जाता है कि उनमें कुछ नहीं है।" उसमें दृढ़ संकल्प न था—वे केवल इच्छा ही करना जानते थे। वे छोटी उम्रमें ही अपने जीवनकी शक्तियोंका नाश कर चुके थे, इसलिए उनके सब काम अधूरे रह गये। वे स्वीकार करते थे कि "मैं जीवनके नियमोंका

पालन नहीं करता और मेरा चित्त सदैव डावाँडोल रहता है।" इस तरह उनमें विलक्षण शक्तियाँ थीं, तो भी वे न कर सके। वे बहुत वर्षोंतक दुखी रहे और अंतमें कुढ़-कुढ़कर मर गये।

आगस्टिन थीअरीका जीवन कान्सटेंटके जीवनसे बिलकुल विपरीत था। उनका समस्त जीवन आग्रह, परिश्रम, आत्मोद्धार और विद्योपार्जनका विचित्र उदाहरण है। वे काम करते करते अंधे हो गये और निर्बल पड़ गये, परन्तु उन्होंने सत्यप्रियताको हाथसे न जाने दिया। जब वे ऐसे कमजोर हो गये कि उनको बच्चेके समान एक दाया अपनी गोदमें बिठालकर एक कमरेसे दूसरे कमरेमें ले जाती थी, तब भी उनके उत्साहने जवाब न दिया। यद्यपि वे अंधे और बेबस थे, तो भी उन्होंने साहित्यसेवाका अन्त करते समय इन उत्तम शब्दोंका प्रयोग किया था:–"यदि मेरे समान और लोगोंका भी यही खयाल है कि विद्या देशकी उन्नतिका एक बड़ा कारण है, तो मैंने अपने देशकी उस सैनिकके समान सेवा की है जो युद्धक्षेत्रमें देशके लिए अपनी जान दे देता है। मेरे परिश्रमका फल चाहे जो हो, परन्तु मुझे आशा है कि मेरा उदाहरण अमर रहेगा। इस उदाहरणको देखकर लोग आत्मिक निर्बलताका सामना करेंगे। आत्मिकनिर्बलताकी बुरी बीमारी आजकल बहुत फैली हुई है। मनुष्योंमें ऐसी आत्मिक निर्बलता समा गई है कि वे किसी बात पर विश्वास नहीं करते—वे यह नहीं जानते कि हमको क्या करना है। वे ऐसी चीजको ढूँढ़ा करते हैं जिस पर वे विश्वास ला सकें और जिसकी भक्ति कर सकें; परन्तु वह चीज उनको मिलती नहीं। ऐसे मनुष्योंका जीवन मेरे उदाहरणको देखकर सुधर जायगा। लोग क्यों कहते हैं कि संसारमें इतना काम नहीं है कि वह सब मनुष्योंके मस्तकके लिए काफी हो! क्या शान्तिपूर्वक सावधानीसे अध्ययन करनेका काम मौजूद नहीं है और क्या इस कामको सब लोग नहीं कर सकते? इस काममें लगे रहनेसे मुसीबतके दिन ऐसे गुजर जाते हैं कि हमको उनका भार नहीं मालूम होता। हरएक मनुष्य जैसे चाहे वैसे ही फल भोग सकता है। हरएक मनुष्य अपने जीवनको अच्छे कामोंमें लगा सकता है। मैंने ऐसा ही किया है और यदि मुझे दोबारा जीवन प्रारंभ करना पड़े, तो मैं फिर ऐसा ही करूँगा; मैं वैसे ही काम करूँगा जिनकी बदौलत मैंने इतनी उन्नति कर ली है। मैं अंधा हूँ और ऐसे दुखमें हूँ कि उससे

मेरा छुटकारा कभी नहीं हो सकता। इस हालतमें मैं एक ऐसी बात कहता हूँ कि उसपर किसीको संदेह न होगा। संसारमें एक ऐसी चीज भी है जो इन्द्रियोंके भोगविलाससे अच्छी है, धनसे अच्छी है बल्कि तन्दुरुस्तीसे भी अच्छी है—वह चीज विद्योपार्जन है।"

जो बात मनुष्यको निपुण बनाती है वह आराम नहीं है किन्तु उद्योग है—आसानी नहीं है किन्तु कठिनाई है। कदाचित् जीवनकी कोई स्थिति ऐसी नहीं है जिसमें निश्चित सफलता प्राप्त करनेके लिए कठिनाइयाँ न झेलनी पड़ें। जिस तरह भूलें होनेसे हमको सर्वोत्तम अनुभव प्राप्त होता है, उसी तरह कठिनाइयोंसे भी हमको सर्वोत्तम शिक्षा मिलती है। **चार्ल्स जेम्स फाक्स** कहा करते थे कि "जो मनुष्य आसानीके साथ कामयाब हो गये हैं, मुझे उनसे इतनी आशा नहीं हैं जितनी उन मनुष्योंसे है जो असफल हो गये हों, परन्तु उन्होंने असफल होनेपर भी परिश्रम करना न छोड़ा हो। यदि तुम मुझसे कहो कि अमुक मनुष्यने अपना प्रथम व्याख्यान देकर बड़ा नाम पैदा किया, तो यह अच्छी बात है। वह मनुष्य चाहे अधिक उन्नति करता रहे, चाहे अपनी प्रथम सफलता पर ही संतोष कर ले, यह उसकी मर्जी है; परन्तु मुझको एक ऐसा युवक दिखलाओ जिसको पहली बार सफलता न हुई हो, परन्तु वह फिर भी परिश्रम करता रहा हो। ऐसे मनुष्यके विषयमें मेरा विश्वास है कि वह ऐसे अधिकांश मनुष्योंसे अधिक सफलता पा सकेगा, जो प्रथम चेष्टामें ही सफल हो गये हैं।"

हमको सफलताकी अपेक्षा असफलतासे कहीं जियादा शिक्षा मिलती है। जब एक चीजसे काम नहीं चलता तब हम बहुधा यह जान जाते हैं कि अमुक चीजसे काम निकल जायगा। शायद जिसने कभी भूल नहीं की उसने कोई अनुसंधान भी नहीं किया। प्रायः सभी आविष्कारकोंको सफलता प्राप्त करनेके पहले असफलतायें हुई हैं। डाक्टर **जान हंटर** कहा करते थे कि "चीड़-फाड़के काममें उस समय तक उन्नति न होगी जब तक डाक्टर लोग अपनी असफलताओं और सफलताओंको प्रकाशित न करेंगे।" यन्त्रकार **वाट** कहा करते थे कि "यंत्रविद्याके लिए असफलताओंके इतिहासकी सबसे अधिक आवश्यकता है। हमको ऐसी पुस्तकोंकी बहुत जरूरत है जिनमें यह लिखा हो कि अमुक इंजीनियरको उसके प्रयत्नमें जो सफलता न हुई वह अमुक-

कारणोंसे न हुई और अमुकको अमुक कारणोंसे न हुई।" जब सर हम्फ्री डेवीको एक बार फुर्तीके साथ किया हुआ एक प्रयोग (Experiment) दिखाया गया, तब उन्होंने कहा कि "मैं ऐसा होशयार और फुर्तीबाज शुरूसे ही न था और इसके लिए मैं परमात्माको धन्यवाद देता हूँ। क्योंकि मैंने जितने महत्त्वपूर्ण अनुसंधान किये हैं वे सब अपनी भूलों ठोकरों और असफलताओंकी सहायतासे किये हैं।" एक और प्रसिद्ध वैज्ञानिकका कथन है कि "जब कभी अनुसंधान करते समय मुझे किसी बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता था, तब प्रायः कोई न कोई नया अनुसंधान हो जाता था।" सबसे जियादा महत्त्वके कार्य उत्तम विचार, अनुसंधान, आविष्कार इत्यादि बहुधा ऐसे समयमें हुए हैं जब उनके कर्ता किसी मुसीबतमें पड़े थे, अथवा शोकातुर हो रहे थे।

किसीने सच कहा है कि सेनापतिकी परीक्षा विजयसे नहीं, किन्तु पराजयसे होती है। वाशिंगटनने जितनी लड़ाइयाँ जीतीं उनसे जियादा लड़ाइयोंमें उनकी हार हुई; परन्तु उनको अंतमें सफलता हुई। शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरीको भारतवर्षपर विजय प्राप्त करनेमें पहले महाराज पृथ्वीराजके द्वारा हार खानी पड़ी। इसी तरह रोमवाले बड़े बड़े युद्धोंमें जीतनेके पहले हमेशा हारते रहे। मोरौके विषयमें उसके मित्र कहा करते थे कि वह ढोलके समान है जिसकी आवाज उसी वक्त सुनाई देती है जब उस पर चोट पड़ती है।" वैलिंगटनके समान महाराणा प्रतापके युद्ध-कौशलकी पूर्ति भी कठिनाइयोंका सामना करनेसे हुई थी। इन कठिनाइयोंने उनकी संकल्प-शक्तिको और भी पुष्ट कर दिया और उनकी वीरता और सुजनताको खूब प्रकाशित कर दिया।

कहा जाता है कि "सब्रका फल मीठा होता है।" इसी तरह आपत्तिके फल भी सचमुच मीठे होते हैं। उनके द्वारा हमको अपनी शक्तियोंका पता लगता है और हमारे उत्साहका विकाश होता है। जिस तरह खूशबूदार जड़ी बूटियोंको दबानेसे उनमेंसे सुगंध निकलती है, इसी तरह यदि तुम्हारे चरित्रमें यथार्थ गौरव है तो आपत्तिद्वारा दबाये जानेपर उसमेंसे भी सुगंध निकलेगी, अर्थात् उसकी खूबियाँ अच्छी तरह प्रकट हो जायँगी। एक विद्वान्ने कहा है कि "गरीबीमें ऐसी क्या बात है कि लोग उसकी शिकायत करते

हैं ?" एक कुमारी कानोंके छिदाते समय रोती है; परन्तु थोड़े ही समय बाद उन्हीं कानोंमें बहुमूल्य मोती पहनते समय हँसती है। गरीबीके दुःखको भी ऐसा ही समझना चाहिए। उसका परिणाम भी ऐसा ही होता है। जिस मनुष्यको कठिनाईका सामना नहीं करना पड़ता उसका जीवन अवश्य सुगम हो जाता है, परन्तु उसके गौरवका विकाश नहीं होने पाता। यदि कठिनाइयोंका बुद्धिमानीके साथ सामना किया जाय, तो उससे चरित्रकी उन्नति होती है और स्वावलम्बनकी शिक्षा मिलती है। इस तरह हमारे लिए आपत्ति भी अत्यन्त उपयोगी शिक्षक बन सकती है चाहे हम इस बातको समझ न सकें।

जिस तरह पहाड़ पर चढ़ते हुए युद्ध करनेमें बड़ी कठिनाई होती है उसी तरह अधिकांश मनुष्योंको जीवनरूपी युद्धमें भी बड़ी बड़ी मुसीबतें झेलनी पड़ती हैं और इस युद्धमें बिना लड़े-भिड़े विजय पानेमें नामवरी भी न समझनी चाहिए। यदि कठिनाइयाँ न हों, तो सफलता भी न होगी। यदि कोई ऐसी चीज ही नहीं है, जिसके पानेकी हम कोशिश करें, तो हमको कुछ मिलेगा भी नहीं। कमजोर आदमी कठिनाइयोंको देखकर चाहे हताश हो जायँ, परन्तु दृढ़निश्चयी और वीर मनुष्योंको कठिनाइयोंसे बड़ी बड़ी लाभदायक उत्तेजनायें मिलती हैं। जीवनके सभी अनुभव यह सिद्ध करते हैं कि मानवी उन्नतिके मार्गमें जो विघ्न आ जाते हैं वे सच्चरित्रता, उत्साह, उद्योग और आग्रहसे दूर किये जा सकते हैं; परन्तु इन सबके उपरान्त कठिनाइयोंपर विजय पाने और मुसीबतोंको बहादुरीके साथ झेलनेका दृढ़ संकल्प भी होना चाहिए।

जब कभी कठिनाई आ पड़े तब मनुष्यको वीरताके साथ उसका सामना करना चाहिए, चाहे उसका परिणाम कुछ भी हो। कठिनाईका सामना करनेसे मनुष्यको अपने बल और चातुर्यसे काम लेनेकी शिक्षा मिलती है और जिस तरह चढ़ाई पर दौड़ना सीख कर मामूली जमीन पर दौड़ना आसान हो जाता है उसी तरह उसके लिए छोटेमोटे कामोंको सिद्ध करनेकी चेष्टा करना आसान हो जाता है। सफलताके मार्गपर चलनेमें प्रायः ढालू पहाड़ पर चढ़नेके ऐसी कठिनता होती है। जो मनुष्य उसके शिखर पर चढ़ जाता है मानों उसकी शक्तियोंकी परीक्षा हो जाती है। मनुष्यको अनुभवसे शीघ्र ही मालूम हो जाता है कि कठिनाइयोंपर विजय तभी मिलती है जब

उनके साथ युद्ध किया जाता है। अगर हम किसी कामको करना चाहते हैं, तो इसके लिए सबसे जरूरी बात यह है कि हमारे दिलमें यह विश्वास हो कि हम उस कामको कर सकते हैं और उसे करके छोड़ेंगे। यदि कठिनाइयों पर विजय पानेका दृढ़ संकल्प कर लिया जाय, तो फिर कठिनाइयाँ खड़ी नहीं रहतीं—स्वयं ही भाग जाती हैं।

चेष्टा करनेसे ही मनुष्य बहुत कुछ काम कर सकता है। जब तक हम कोशिश न करेंगे तबतक कैसे मालूम होगा कि हम किसी कामको कर सकते हैं या नहीं? ऐसे मनुष्य बहुत कम हैं जो बिना मजबूरीके ही अपनी ताकतके माफिक कोशिश करते हों। निराश युवक ठंडी साँस लेकर कहता है कि "यदि मैं इस कामको कर सकूँ—"? परन्तु यदि वह केवल इच्छा ही करता रहेगा तो उससे कुछ न होगा। इच्छामें संकल्प और चेष्टारूपी फल अवश्य लगने चाहिएँ, और एक बार उत्साहपूर्वक चेष्टा करना हजार बार इच्छा करनेके बराबर है। 'यदि'-रूपी काँटे ही—जो निर्बलता और निराशासे उत्पन्न होते हैं—संभावनारूपी मैदानको चारों तरफसे घेर लेते हैं और हर कामके करनेमें बल्कि चेष्टा करनेमें भी बाधक होते हैं। एक विद्वान्का कथन है कि "कठिनाई ऐसी चीज है जिस पर अवश्य ही विजय प्राप्त करनी चाहिए।" कठिनाईसे तुरन्त ही भिड़ जाओ; अभ्यास करनेसे सुगमता आ जायगी और बार बार चेष्टा करनेसे बल और साहस बढ़ जायगा। इस प्रकार हमारा अपने मस्तक और चरित्रपर अच्छा अधिकार हो जायगा और उनके द्वारा हम ऐसी सफाई, उत्साह और स्वतंत्रताके साथ काम कर सकेंगे कि जिन मनुष्योंने ऐसा अनुभव प्राप्त नहीं किया वे देखकर दंग रह जायँगे।

हर एक बातके सीखनेमें हम एक कठिनाई पर विजय पालेते हैं और एक कठिनाई पर विजय पालेनेसे अन्य कठिनाइयों पर विजय पानेमें सहायता मिलती है। बहुतसी बातें—जैसे किसी मृत (अप्रचलित) भाषा अथवा रेषा गणितका सीखना—ऊपरी नजरसे देखनेमें अधिक शिक्षाप्रद नहीं मालूम होतीं, परन्तु वे वास्तवमें बड़ी मूल्यवान् होती हैं। उनका मूल्य इस बातमें नहीं है कि उनसे ज्ञान मिलता है किन्तु इस बातमें है कि उनसे हमारी समुन्नति होती है। ऐसे विषयोंके अध्ययनसे चेष्टा करनेकी आदत पड़ती है और उद्योगशक्तिकी वृद्धि होती है। इसतरह एक बातसे दूसरी

बात पैदा हो जाती है और यह क्रम जीवनपर्यंत जारी रहता है। कठिनाई-योंके साथ युद्ध करना उसी समय समाप्त होता है जब जीवन और उन्नतिका अंत हो जाता है। उत्साहहीन विचारोंको लेकर आजतक किसी मनुष्यने कठिनाईका सामना न किया है और न करेगा। जब कोई विद्यार्थी डी ऐलिमबर्टके पास जाकर यह शिकायत करता था कि मुझको गणितकी प्रारम्भिक बातें याद नहीं होतीं, तब वे कहते थे–" भाई, काम किये जाओ। कुछ ही समयमें तुमको अपनी सफलता पर विश्वास होने लगेगा और तुम्हारी शक्ति बढ़ जायगी।"

जो गानेवाले अथवा नाचनेवाले बड़े चतुर समझे जाते हैं उन्होंने धैर्यपूर्वक बारबार सीखने और अनेक बार असफल होनेके बाद ही चतुराई प्राप्त की है। एक बार जब कैरिसिमीके मधुर स्वरकी प्रशंसा की गई, तब उसने कहा कि "तुम्हें नहीं मालूम कि इस कलाके सीखनेमें कितना परिश्रम किया है और कितनी कठिनाइयाँ झेली हैं।" एक बार जब सर जौशुआ रेनाल्ड्ससे पूछा गया कि "आपको इस चित्रके बनानेमें कितना समय लगा," तब उन्होंने उत्तर दिया कि "मेरा समस्त जीवन।" अमेरिकाके प्रसिद्ध वक्ता हेनरीक्लेने नवयुवकोंको उपदेश देते समय अपनी सफलताका रहस्य इस प्रकार वर्णन किया था:– "मुझे अपने जीवनमें खास कर एक बातसे सफलता प्राप्त हुई है—वह यह है कि जब मेरी उम्र २७ वर्षकी थी तबसे मैं इतिहासके तथा दूसरे विषयोंके अच्छे ग्रन्थोंको बाँचनेमें लग गया और उनकी उक्तियाँ कण्ठ करके जहाँ तहाँ बोलने लगा। यह काम मैंने बरसोंतक जारी रक्खा और इस तरह मैं अनचिन्ते व्याख्यान देनेकी आदत डालने लगा। बिना तैयार किये हुए—बिना सोचे ही मैं कभी खेतोंमें जाकर व्याख्यान देता था और कभी जंगलोंमें। बहुधा मैं दूरके खलियानोंमें निकल जाता था और वहाँ व्याख्यान देने लगता था। वहाँ पर मेरे व्याख्यानोंको सुननेवाले केवल घोड़े और बैल रहते थे! शुरू शुरूमें इस तरह अभ्यास करनेसे ही मुझे प्रारम्भिक और बड़ी बड़ी उत्तेजनायें मिलीं, जिनसे मेरी उन्नति होती गई और मेरा शेष जीवन सुधर गया।"

जो मनुष्य आत्मोद्धारको अपना कर्तव्य समझ लेते हैं उनके काममें भारीसे भारी गरीबी भी बाधा नहीं डाल सकती। अध्यापक मूरेने अक्षर

लिखना जली हुई लकड़ियोंसे सीखा था ! उनके पिता अत्यन्त दरिद्र थे। वे उनके लिए लिखने पढ़नेका सामान न खरीद सकते थे। अध्यापक मोअर अपनी युवा अवस्थामें बड़े दरिद्र थे। एक बार उनको एक पुस्तककी जरूरत पड़ी। उनके पास इतना रुपया न था कि वे उसको मोल ले सकते। बस उन्होंने वह पुस्तक किसीसे माँग ली और उसको अपने हाथसे नकल कर डाला। बहुतसे निर्धन विद्यार्थियोंको अपने निर्वाहके लिए प्रतिदिन परिश्रम करना पड़ता था और इस परिश्रमके बीचमें कभी कभी इधर उधरसे ज्ञानकी एकाध बात उनके हाथ लग जाती थी। वे इसी तरह बराबर परिश्रम करते रहे और फिर उन्हें सफलताकी आशा हुई। एक प्रसिद्ध लेखक और प्रकाशकने युवकोंको उत्साहित करनेके लिए एक व्याख्यान दिया था जिसमें उन्होंने अपनी पहली गरीबीका हाल इस तरह बयान किया थाः—"तुम्हारे सामने एक स्वशिक्षित मनुष्य खड़ा है। शुरूमें मैंने स्काटलेण्डकी एक छोटीसी देहाती पाठशालामें थोड़ीसी शिक्षा पाई। इसके बाद मैं एडिनवर्ग नगरमें पहुँच गया। वहाँ मैं अपने निर्वाहके लिए दिनभर मेहनत करता था और रातको अपनी मानसिक शक्तियोंकी उन्नति किया करता था। सबेरे ७–८ बजेसे रातके ९–१० बजे तक मैं एक पुस्तक बेचनेवालेके यहाँ नौकरी करता था। इसके बाद मैं सोनेके वक्तमेंसे कुछ वक्त बचाकर पढ़ा करता था। मैं उपन्यास न पढ़ता था बल्कि विज्ञान और अन्य उपयोगी विषयोंका अध्ययन किया करता था। मैं फ्रेञ्च भाषा भी सीखता था। मैं उस जमानेको अब बड़े आनन्दके साथ याद करता हूँ। मुझे इस बातका खेद है कि मैं इस समय वैसा ही अनुभव प्राप्त नहीं कर सकता हूँ; क्योंकि मुझे आज महलमें सुखपूर्वक बैठे हुए उतना आनन्द नहीं मालूम होता जितना उस समय मालूम होता था जब मैं एडिनवर्ग नगरमें एक झोंपड़ीमें पढ़ा करता था और मेरे गाँठमें एक चवन्नी भी न रहती थी।"

महापुरुष ब्रह्मेन्द्र स्वामी महादेवभट्ट नामक भिक्षुकके पुत्र थे। महादेव भट्ट अपने पुत्रके बचपनमें ही मर गये। अनाथ ब्रह्मेन्द्रका संसारमें कहीं भी ठिकाना न रहा। वे बहुत दिनोंतक बनारस इत्यादि नगरोंमें मारे मारे फिरा किये। परन्तु उन्हें विद्यासे प्रेम था। ऐसी दरिद्र अवस्थामें भी उन्होंने इतना विद्योपार्जन किया कि वे वेदोंको खूब अच्छी तरह समझने लगे। ज्ञानवान्

होनेके साथ वे धर्मात्मा भी थे। वे साधु हो गये और शाहू महाराजाने उनको अपना धर्मगुरु माना। धीरे धीरे अनेक मनुष्य उनके शिष्य हो गये। डाक्टर विश्रामजी घोलेके पिता एक पल्टनमें साधारण नौकर थे। वे विश्रामकी बाल्यावस्थामें ही परलोक सिधार गये। विश्रामके मामाने विश्रामजीको कुछ पढ़ाया और फिर उनको ५) रु० मासिक पर नौकर करा दिया। वे ही विश्राम अपने उद्योगसे उन्नति करते करते पूनाके सिविल सर्जन हो गये। सन् १८९७ ईसवीमें उनको राय बहादुरकी पदवी मिली। उस समय लार्ड एलगन यहाँके वाइसराय थे। उन्होंने विश्रामजीको अपना आनरेरी सिविल सर्जन नियत किया। नारायण मेघाजी लोखंडे भी परम दरिद्र थे। वे बाल्यावस्थामें ही अनाथ हो गये। बड़ी मुश्किलसे उन्होंने मराठी और अँगरेजी पढ़ी और रेलवेमें लोको-सुपरिंटेण्डेन्टके यहाँ नौकर हो गये। उनको विद्याध्ययनसे बड़ा प्रेम था। धीरे धीरे उन्होंने इतनी योग्यता प्राप्त कर ली कि वे 'दीनबन्धु' पत्रमें लेख देने लगे और कुछ समयके बाद वे ही दीनबन्धुके सम्पादक हो गये। देश-सुधारकी ओर वे बड़ा ध्यान देते थे। मिलों और कारखानोंके मजदूरोंकी दशा देखकर उनको बड़ा तरस आता था। उन्होंने इस विषयमें बड़ा आन्दोलन किया। इन मजदूरोंको भी छुट्टियाँ मिला करें। उनको इस काममें सफलता भी बहुत हुई। सरकारने सन् १८९० ईसवी में उनको 'जे. पी.' की उपाधिसे विभूषित किया और पाँच वर्ष बाद उनको 'रायबहादुर' की पदवी प्रदान की। सर टी. मुत्तुस्वामी ऐय्यर भी बड़े निर्धन थे। उनके बाल्यकालमें ही उनके पिताका देहान्त हो गया था। उनकी माताने घरका असबाब बेचकर उनका पालन पोषण किया; परन्तु वे भी कुछ समय बाद परलोक सिधार गईं। मुत्तुस्वामीने अपने पिताके जीवनकालमें बहुत थोड़ा लिखना पढ़ना सीखा था पर उनमें उद्योग और चातुर्य विशेष था। इन गुणोंको देखकर एक तहसीलदारने उनको कुछ सहायता दी। उसे पाकर वे विद्योपार्जनमें अतिशय परिश्रम करने लगे। उन्होंने एम. ए. पास कर लिया और फिर नौकरी कर ली। धीरे धीरे उन्होंने ऐसी उन्नति की कि वे हाईकोर्टके जज हो गये और दिल्लीके दरबारमें सरकारने उनको सी. आई. ई. की उपाधिसे विभूषित कर दिया।

पं० ईश्वरचन्द्र विद्यासागर हमारे लिए एक बहुमूल्य उदाहरण छोड़ गये हैं। उनके माता पिता बहुत गरीब थे। पिता केवल दस रुपया मासिक

वेतन पाते थे और माता चर्खा कातकर निर्वाह करती थी, अतएव ईश्वरचन्द्रको अपनी आजीविका और विद्योपार्जनके लिए बड़ाभारी परिश्रम करना पड़ता था। वे रात दिनमें केवल दो घंटे सोते थे! उनके पिताको रातके समय घरपर बारह बजे तक काम करना पड़ता था। ईश्वरचन्द्र इधर रातके दस बजे सो जाते थे और अपने पितासे यह कह देते थे कि "जब आप बारह बजे अपना काम समाप्त करके सोया करें तब मुझे जगा दिया करें।" तदनुसार उनके पिता बारह बजे जगा देते थे और तब वे सबेरे तक पढ़ा करते थे। ईश्वरचन्द्र और उनके पिता कलकत्तेमें रहते थे; परंतु ईश्वरचन्द्रकी माता अपने घर पर एक गाँवमें रहती थी—इस डरसे कि शहरमें रहनेसे खर्च बहुत पड़ेगा। ईश्वरचन्द्र कलकत्तेमें रहकर पढ़ते थे। वे अपने लिए और अपने पिताके लिए भोजन बनाते थे, यहाँ तक कि बरतन भी उन्हींको माँजने पड़ते थे। वे बाजारका भी सब काम काज करते थे। कठिन परिश्रम करनेसे वे कईबार बीमार भी हो गये और इसी परिश्रमसे उनको कईबार छात्रवृत्तियाँ और पुरस्कार भी मिले। कुछ वर्षमें ईश्वरचन्द्रने इतनी संस्कृत पढ़ ली कि वे अपने समयके बड़ेभारी पंडित हो गये। उन्होंने संस्कृतमें कवितायें लिखीं और बंगभाषामें अनेक पुस्तकें रचीं। पहले पहल वे पचास रुपया मासिक पर फोर्टविलियम कालिजके प्रधान पंडित नियुक्त हुए। फिर उन्होंने धीरे धीरे इतनी उन्नति कर ली कि वे तीन सौ रुपया मासिक वेतन पर संस्कृत कालिजके प्रिंसिपल हो गये और इसके साथ ही साथ उनको दो सौ रुपया मासिक संस्कृत पाठशालाओंके निरीक्षणके मिलने लगे। अपनी पुस्तकोंकी बिक्रीसे भी उनको बहुत आमदनी होती थी; परन्तु वे यह सब धन गरीबोंकी सहायता करनेमें ही लगा देते थे। सच है—

"आदानं हि विसर्गाय सतां वारिमुचामिव*।"

औरोंकी सहायताके लिए वे कभी कभी ऋण तक ले लेते थे। उन्होंने गुप्त दान देकर अनेक दीन दुखियोंकी सहायता की। अपने सहपाठियोंको वे बहुधा कपड़े बनवा देते थे और पुस्तकें मोल ले देते थे। बंगालके सुप्रसिद्ध कवि माइकल मधुसूदन दत्त इंग्लेण्डमें एक बार बड़े कष्टमें पड़ गये। अपने

* बादलोंके समान सज्जनोंका लेना दूसरोंको देनेके ही लिए होता है।

कुटुम्बवालोंको उन्होंने सहायताके लिए पत्र लिखे, परन्तु उनको निराश होना पड़ा। ऐसे संकटमें ईश्वरचन्द्रने दस हजार रुपये भेजकर उनकी बड़ी भारी सहायता की! ईश्वरचन्द्रने अनेक ग्रामोंमें स्वयं अपने खर्चसे बहुतसी बालक तथा कन्या-पाठशालायें बनवाईं। वे अकालके दिनोंमें ग्रामोंमें जा-जाकर दीनोंको भोजन और वस्त्र बाँटा करते थे। जो मनुष्य लज्जाके मारे भोजन नहीं लेते थे उनके घर वे गुप्त रीतिसे रुपया भिजवा देते थे। एक दिन उनसे एक सज्जनने पूछा कि "महाशय गुप्तदानका क्या प्रयोजन है?" उन्होंने उत्तर दिया कि "लेनेवालेको सबके सामने लेनेमें लज्जा मालूम होती है, इस लिए दान गुप्तरूपसे ही देना चाहिए। जो प्रकाश रूपसे दान देते हैं वे केवल अपनी प्रतिष्ठाके अर्थ देते हैं। नाम व सन्मानका मैं भूखा नहीं हूँ।" उन्होंने विधवाओंकी दशा सुधारनेकी भी अनेक चेष्टायें कीं। उनकी गिनती बड़े बड़े समाज–सुधारकोंमें है। सरकारने उनके कामोंसे प्रसन्न होकर उनको सी. आई. ई. की पदवी प्रदान की। ईश्वरचन्द्रका जीवन-उद्देश ही दीनोंको सहायता पहुँचाना और समाजका सुधार करना था। वे केवल विद्यासागर ही नहीं, किन्तु दयासागर भी थे। वे दीन दुखियोंकी मददके लिए सदैव तैयार रहते थे। यहाँ पर उनकी दयालुताके दो एक उदाहरण दिये जाते हैं:—

बर्दवान नगरमें एक बार एक गरीब लड़केने ईश्वरचन्द्रसे एक एक पैसा माँगा। ईश्वरचन्द्रने कहा कि "यदि मैं चार पैसे दूँ, तो तू क्या करेगा?" लड़केने उत्तर दिया कि "भोजनके लिए दो पैसेका आटा मोल ले जाऊँगा और दो पैसे अपनी माताको दे दूँगा।" ईश्वरचन्द्रने फिर कहा कि "यदि मैं तुझे चार आने दूँ, तो क्या करेगा?" लड़का समझा कि ईश्वर हँसी कर रहे हैं, इस लिए वह वहाँसे जाने लगा। परन्तु ईश्वरचन्द्रने उसका हाथ पकड़ लिया और फिर वही बात पूछी। लड़केने कहा कि "खानेके लिए दो आनेके चावल मोल लूँगा और बाकी दो आनेके आम मोल लेकर बेचूँगा। ऐसा करनेसे मुझे दो एक आने और मिल जायँगे।" यह सुनकर ईश्वरचन्द्रने उस लड़केको एक रुपया दे दिया। लड़का रुपया लेकर चल दिया। कई वर्ष बाद ईश्वरचन्द्र फिर बर्दवानको गये। वहाँ एक दिन वे बाजारमें होकर जा रहे थे कि एक आदमी उनके पास आया और हाथ जोड़कर बोला कि "हे दयासागर! मेरी दूकानपर चलिए और उसको पवित्र कीजिए।

ईश्वरचन्द्रने कहा कि "हम तो तुमको जानते भी नहीं; तुम कौन हो?" उस आदमीने जवाब दिया कि "दयानिधे! आप मुझे नहीं पहचानते, परन्तु मैं आपको जानता हूँ। मुझे आपने एक पैसा माँगने पर एक रुपया दिया था। मैंने उस रुपयेमेंसे चौदह आनेके आम लेकर बेचे। उनसे मुझको कई आने और मिले। मैंने उनके भी आम लेकर बेचे। मैं इसी तरह आम ले-लेकर बेचता रहा और मुझे लाभ होता रहा और अब मैंने उन्नति करते करते एक दूकान खोल ली है, जिससे अब मेरा और मेरी माताका सुख-पूर्वक निर्वाह होता है।" यह सुनकर ईश्वरचन्द्र बड़े प्रसन्न हुए और उसकी दूकानमें जाकर थोड़ी देर बैठे।

एक बार ईश्वरचन्द्रको (एक पत्र द्वारा) मालूम हुआ कि नगर (कलकत्ता) में एक मद्रासी महाशय ठहरे हुए हैं और गरीब हो जानेके कारण कुछ दिनोंसे बड़े संकटमें हैं। ईश्वरचन्द्रने तुरन्त ही अपने एक आदमीको उनका हाल जाननेके लिए भेजा। वह आदमी उन मद्रासी महाशयके मकानपर पहुँचा। मकानका मालिक भी वहीं रहता था। पूछनेपर मकानके मालिकने कहा कि "हाँ, वे मेरे मकानके नीचेके हिस्सेमें रहते हैं। वे इन दिनों बड़े गरीब हो गये हैं, इस कारण उन्होंने कई महीनेसे मेरे मकानका किराया भी नहीं दिया। मैं कई बार माँग चुका हूँ, परन्तु वे दें तो कहाँसे दें। दो तीन दिनसे उनको और उनके बच्चोंको कुछ खानेको भी नहीं मिला। मुझे उनकी दशा देखकर बड़ी दया आती है।" फिर उस आदमीने मद्रासी महाशयके पास जाकर बातचीत की। मद्रासीने कहा कि "मैं आजकल बड़े संकटमें हूँ। इस नगरमें बहुत घूमने फिरनेपर भी मुझे कोई माईका लाल न मिला, जो मेरी कुछ सहायता करता। एक बाबूने कहा कि इस शहरमें एक विद्या-सागर महाशय रहते हैं। उनसे तुमको सहायता मिल जायगी और उन्होंने मेरी तरफसे एक पोष्ट कार्डपर विद्यासागरके लिए सब हाल लिख दिया। मैंने उस कार्डको डाँकमें डाल दिया है। अब देखिए, क्या होता है।" वह आदमी यह सुनकर विद्यासागरके पास लौट गया और उसने उक्त सब हाल कह सुनाया। विद्यासागरने तुरन्त ही अपने आदमीके हाथ उनके पास ३०) रु० मकानके किराएके लिए और १०) रु० भोजनके लिए भेजे और अपने आदमीसे यह भी कह दिया कि "यदि वे लोग मद्रास जाना चाहें, तो

उनसे सफर खर्च पूछते आना।" वह आदमी मद्रासी महाशयके पास गया और उसने उनको रुपये देकर ईश्वरचन्द्रकी सब बातें सुना दीं। मद्रासी महाशय ईश्वरचन्द्रकी दयालुता देखकर रो पड़े और बोले कि "यदि सौ रुपया हों, तो हम लोग घर जा सकते हैं।" आदमीने लौटकर ईश्वरचन्द्रसे यह बात कही। ईश्वरचन्द्रने उसी वक्त सौ रुपया भेज दिये और उनका आदमी उन लोगोंको होशियारीके साथ जहाजपर सवार कराके लौट आया।

बम्बईके विल्सन कालिजके संस्कृतके अध्यापक **श्रीधर गणेश** जिनसीवालेका जन्म एक बड़े दरिद्र घरमें हुआ था। बाल्यावस्थामें ही उनकी माताका देहान्त हो गया था। उनके पिता इतने गरीब थे कि कभी कभी उनको भीख माँगकर अपना निर्वाह करना पड़ता था। उन्होंने किसी तरह अपने पुत्र **श्रीधर गणेश**को एक स्कूलमें भेजनेका प्रबंध कर दिया और श्रीधर गणेशने शीघ्र ही अपनी उद्योगपरताका परिचय दिया। स्कूलके अध्यापक उनसे बड़े प्रसन्न रहते थे। उन्हें कई बार छात्रवृत्तियाँ मिलीं, जिनसे उनका निर्वाह होता रहा। फिर उन्होंने मैट्रिक्यूलेशनकी परीक्षा पास की। इस परीक्षामें भी उनका नम्बर बहुत अच्छा रहा और उन्होंने छात्रवृत्ति पाई। फिर वे पूना कालिजमें दाखिल हो गये। उनकी अँगरेजी वाक्यरचना पर प्रिन्सीपल ऐसे मुग्ध हुए कि वे उन्हें अपने पाससे आर्थिक सहायता देने लगे। सन् १८७६ ईसवीमें इस कालिजसे उन्होंने एम. ए. की परीक्षा पास की। फिर वे तुरन्त ही पूना हाईस्कूलमें अध्यापक हो गये और इसके बाद विल्सन कालिजमें संस्कृतके अध्यापक नियुक्त हो गये और रतलाम, ग्वालियर इत्यादि कई स्थानोंसे उनके पास निमंत्रण आये—वहाँके राजा उनको ५००) मासिक वेतन देनेको तैयार थे; परन्तु उनको पूना कालिजसे ऐसा प्रेम था कि वह उन्होंने न छोड़ा। उन्होंने अपने जीवनका बहुत बड़ा भाग विधवाओंको सहायता देनेमें बिता दिया।

भास्कर दामोदर पाळंदेके पिता अत्यन्त दरिद्र थे। भास्करके बचपनमें ही उनकी माताका स्वर्गवास हो गया। श्रीधर गणेशके समान उन्होंने भी बहुत कष्ट उठाकर विद्योपार्जन किया। अंतमें उन्होंने ऐलफिन्स्टन कालिजसे एम. ए. पास किया। फिर उन्होंने आपा साहब जमखिंडीकरके यहाँ १००) मासिक पर नौकरी कर ली, परन्तु कुछ समय बाद उन्होंने यह नौकरी

किसी कारणसे छोड़ दी और वे एक स्कूलमें ६०) मासिक पर अध्यापक हो गये। इसके बाद वे बम्बईके सेक्रेटेरिएटमें नौकर हो गये। इसी बीचमें उनके पिताका देहान्त हो गया। कुछ दिनों बाद उनका वेतन १२०) मासिक हो गया। उनमें यह बड़ा गुण था कि वे अपना काम बड़ी मेहनतके साथ जी लगाकर करते थे। वे शनैः शनैः उन्नति करते रहे। यहाँ तक कि अंतमें वे पूनामें ८००) रु० मासिक पर प्रथम श्रेणीके जज हो गये।

वामन शिवराम आपटेका जीवन धैर्यपूर्वक विद्याभ्यास और साहित्य-सेवा करनेका एक अति उत्तम उदाहरण है। वे बहुत दरिद्र थे। जब वे ४ वर्षके हुए तब उनके पिताका और जब ८ वर्षके हुए तब उनकी माताका देहान्त हो गया। वे थे तो बालक ही, परन्तु हिम्मत न हारे और मेहनत करके अपना निर्वाह करने लगे और साथ ही साथ फुरसतका वक्त निकाल कर कुछ पढ़ना लिखना भी सीखने लगे। कभी कभी उन्हें अपने निर्वाहके लिए दूसरोंसे भी सहायता लेनी पड़ती थी। जब उनके पास कुछ रुपया हो गया तब वे एक अँगरेजी स्कूलमें पढ़ने लगे। वे बड़े मेहनती थे। उन्होंने मैट्रीक्यूलेशनकी परीक्षा पास की और उसमें उनका नम्बर बहुत अच्छा आया, अतएव उनको एक छात्रवृत्ति मिलने लगी। उन्होंने संस्कृतकी एक परीक्षा भी पास कर ली जिससे उन्हें २५) रु० मासिककी छात्रवृत्ति सेठ जगन्नाथ शंकरके यहाँसे मिलने लगी। फिर वे पूना डैकिन कालिजमें पढ़ने लगे और वहाँ उन्होंने प्रथम वर्गमें एम. ए. पास किया। उन्होंने एक बार २००) रु० का और एक बार ४००) रु० का पुरस्कार पाया। फिर वे एक अँगरेजी स्कूलमें अध्यापक हो गये। यह नया स्कूल विष्णुशास्त्री चिपलूणकर, और महात्मा तिलक इत्यादि सज्जनोंने खोला था। वामन शिवराम आपटेने इस स्कूलको कालिज बनाना चाहा, परन्तु इसी बीचमें उनका देहान्त हो गया। उन्होंने कई उत्तम और उपयोगी पुस्तकें बड़े परिश्रमसे लिखीं। उनके संस्कृत—अँगरेजी और अँगरेजी संस्कृतकोश तो बहुत ही प्रसिद्ध और माननीय हैं।

रामचन्द्र विठोबा धामणस्करने भी अनेक कठिनाइयोंका सामना करके विद्याभ्यास किया और बड़ा यश लाभ किया। उनके पिता निर्धन थे। उन्होंने अपने पुत्र रामचन्द्रको किसी तरह रत्नागिरीके एक स्कूलमें पढ़ाना आरंभ किया। रामचन्द्र पढ़नेमें बड़े तेज थे। एक बार शिक्षा विभागके

डायरेक्टर उस स्कूलका निरीक्षण करने आये। उन्होंने अध्यापकसे पूछा कि "इस दरजेमें सबसे अच्छा लड़का कौन है?" अध्यापकने रामचन्द्रकी तरफ इशारा किया। डायरेक्टरने रामचन्द्रको कुछ रुपये दिये। रामचन्द्रने बहुत कष्ट उठा कर जैसे तैसे मट्रीक्यूलेशन पास किया। इस परीक्षामें उनका नंबर प्रथम आया। इसके आगे वे न पढ़ सकते थे; परन्तु उस समय स्कूलके हेडमास्टर डाक्टर भांडारकर थे। वे रामचन्द्रके ऊपर बड़ी कृपा रखते थे। उन्होंने रामचन्द्रको कालिजमें पढ़नेके लिए २०) मासिक छात्रवृत्ति देना स्वीकार कर लिया। तब वे कालिजमें पढ़ने लगे, परन्तु २०) रु० में कुटुम्बका निर्वाह और पढ़ाईका खर्च दोनों बातें कैसे हो सकती थीं? लाचार उन्होंने कालिजमें पढ़ना छोड़ दिया और स्कूलमें नौकरी कर ली। फिर उन्होंने कलक्टर साहबके दफ्तरमें नौकरी कर ली। वहाँ वे कई वर्षोंतक काम करते रहे। इससे उनका निर्वाह होता रहा; परन्तु उम्र जियादा हो जानेपर भी उन्होंने स्वाध्यायको न छोड़ा। वहाँसे उन्होंने लोअर स्टेण्डर्ड हायर स्टेण्डर्ड इत्यादि सात परीक्षायें दीं और उनमें उत्तीर्ण हुए। फिर वे डिप्टी कलक्टर हो गये। जब महाराज गायकवाड़ने उनकी योग्यताकी प्रशंसा सुनी तब उन्होंने रामचन्द्रको अपने यहाँ ४५०) रु० मासिक वेतन पर सूबेदार नियत करके बुला लिया। कुछ दिनोंतक वे बड़ोदेके नायब दीवान भी रहे। अंतमें सन् १८८७ ईसवीमें महाराज गायकवाड़ उनको चीफ आफिसर बनाकर अपने साथ इँग्लेण्ड ले गये। उनकी विद्वत्ता और योग्यताके कारण महाराज गायकवाड़ उनका बड़ा सन्मान करते थे।

श्यामाचरण सरकारका जीवन आत्मोद्धारका बहुत उत्तम उदाहरण है। श्यामाचरणने एक सम्पत्तिशाली घरानेमें जन्म लिया था। उनके पिता रानी इन्द्रावतीके दीवान थे। इस लिए अपने पिताके जीवनकालमें श्यामाचरणको सब प्रकारका सुख मिला। उनके पिता बड़े दानी थे। इसलिए वे अपनी कमाईका अधिकांश भाग दान देनेमें खर्च कर दिया करते थे। धनसंचय करना तो वे जानते ही न थे। जब श्यामाचरण पाँच वर्षके हुए तब उनके पिताका देहान्त हो गया। श्यामाचरणकी माताने अपनी जायदाद बेंच डाली और उससे जो कुछ रुपया मिला उसीसे अपना और श्यामाचरणका निर्वाह करने लगी। परन्तु दुर्भाग्यवश कुछ दिनों बाद उस धनको चोर चुरा ले गये।

अब तो श्यामाचरण और उनकी माताके दुःखका कुछ ठिकाना न रहा। वे दाने दानेको मुहताज हो गये। तेरह वर्षकी अवस्था तक श्यामाचरण बिलकुल अशिक्षित रहे। उनकी इस दीन दशाको देखकर हरिश्चन्द्र सरकारको बड़ा तरस आया। उन्होंने श्यामाचरणको अपने घर बुला लिया और उनके पढ़नेका प्रबंध कर दिया। उन दिनों बंगालमें फारसीका अधिक प्रचार था। फारसी जाननेवालोंको नौकरी आसानीसे मिल जाती थी। इसलिए हरिश्चन्द्रने श्यामाचरणको फारसीके प्रसिद्ध पंडित श्रीनाथ लाहिड़ीके सुपुर्द कर दिया। हरिश्चन्द्र श्यामाचरणको केवल दो वक्त भोजन देते थे। उनमें इतनी गुंजाइश न थी कि वे इससे अधिक सहायता देते। श्यामाचरण लाहिड़ीके यहाँ बिना फीस पढ़ते थे। परन्तु उनके पास किताबें खरीदने और रातको पढ़नेके लिए तेल मोल लेनेके लिए खर्च न था। इस लिए वे अपने हाथसे दूसरोंकी पुस्तकें नकल कर लिया करते थे और रातमें चौधरी बाबूकी बैठकमें पढ़नेके लिए जाते थे। चौधरी बाबूकी बैठकमें रातभर दीपक जला करता था। श्यामाचरणने इन्हीं कठिनाइयोंके साथ सात वर्ष तक विद्याध्ययन किया। इस बीचमें उनकी माताने भी किसी न किसी तरह अपनी उदरपूर्ति की। परन्तु आगे चल कर इस प्रकार निर्वाह करना कठिन हो गया। इसलिए श्यामाचरणको नौकरीकी फिक्र पड़ी। उनके पिताके मित्र रीड साहबने उनको १०) मासिककी एक जगह अपने दफ्तरमें दे दी। नौकरी लग जानेके कारण श्यामाचरणने सोचा कि मैं अब अपनी माताकी सहायता कर सकूँगा। परन्तु उनकी यह आशा भी थोड़े ही दिनोंमें निर्मूल सिद्ध हुई। रीड साहब पर एक मुकद्दमा लगाया गया और उसमें श्यामाचरणको गवाहीमें तलब किया गया। श्यामाचरण जानते थे कि उस मामलेमें रीड साहब अपराधी थे। उन्होंने सोचा कि इस जगह पर रहनेसे मुझे झूठी गवाही देनी पड़ेगी। इसलिए उन्होंने वह नौकरी छोड़ दी। श्यामाचरण फिर मुसीबतमें फँस गये और कामकी तलाशमें फिर इधर उधर भटकने लगे। फिरते फिरते वे बाबू रामतनु लाहिड़ीके घर पहुँचे। बाबू रामतनु अपने दो भाइयों सहित पटलडाँगामें रहते थे। उनके घर कोई नौकर चाकर अथवा रसोइया न था। तीनों भाई मिल कर घरके सब काम-काज किया करते थे। बाबू रामतनुने श्यामाचरणको बड़ी प्रसन्नतासे अपने घर

ठहरा लिया। घरके काम-काजके बटवारेमें श्यामाचरणको पानी भरनेका काम सोंपा गया। कुछ दिनोंमें श्यामाचरणको बाबू रामतनुके प्रयत्नसे कुछ अँगरेजोंको देशी भाषा सिखानेका काम मिल गया। इससे वे लगभग तीस रुपया मासिक कमाने लगे। साथ ही साथ वे कुछ समय बचा कर अँगरेजी सीखने लगे। क्योंकि उनको ज्ञान प्राप्त करनेकी बड़ी प्रबल इच्छा थी। अँगरेजी सीखनेमें उनको अपने पड़ौसी रामगोपाल घोषसे बहुत सहायता मिलती थी। इस प्रकार कुछ अँगरेजी सीख कर श्यामाचरणने हिन्दू कालिजमें भरती होना चाहा। परन्तु उस समय उनकी अवस्था २१ वर्षकी थी। इसलिए वे उमर अधिक होनेके कारण कालिजमें भरती न हो सके। परन्तु इससे वे निराश न हुए और सेन्ट जेवियर कालेजमें भरती हो गये। उनको अँगरेजोंके पढ़ानेसे जो तीस रुपया मासिक मिलता था उसमेंसे वे आठ रुपया मासिक कालिजकी फीस दे देते थे। उन्होंने कालिजमें अँगरेजीके सिवाय ग्रीक, लैटिन और फ्रेञ्च भाषाएँ भी सीखीं।

इसी समय श्यामाचरणको कलकत्ता मदरसामें पहले तो पच्चीस रुपया और फिर चालीस रुपया मासिककी जगह मिल गई। इन दिनों श्यामाचरणको घोर परिश्रम करना पड़ता था। वे सवेरे ६ बजेसे १० बजे तक मदरसेमें नौकरी करते थे। फिर शामके ४ बजे तक सेंट जेवियर कालिजमें स्वयं पढ़ते थे और रातको ९ बजे तक अँगरेजोंको देशी भाषा पढ़ाते थे। बीचमें केवल दो बार बड़ी कठिनाईसे भोजन कर पाते थे। दिनमें अवकाश न मिलनेके कारण वे रातको ९ बजेके बाद अपने हाथोंसे भोजन बनाते थे और उसीमेंसे कुछ खाना बचाकर सवेरेके लिए रख छोड़ते थे। इस प्रकार घोर परिश्रम करते करते उनको पाँच वर्ष हो गये। तत्पश्चात् उनको संस्कृत कालिजमें सत्तर रुपया मासिककी एक जगह मिल गई। यहाँ पर उनको जयनारायण तर्कालंकार, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, प्रेमचंद्र तर्कवागीश इत्यादि विद्वानोंके संसर्गका अवसर मिला। इनके पास श्यामाचरण संस्कृतमें दर्शनशास्त्र, धर्मशास्त्र इत्यादिका अध्ययन करने लगे। फारसी, अरबी और उर्दू तो वे पहले ही सीख चुके थे। इस प्रकार उन्होंने पूर्वी और पश्चिमी कई भाषाओंका ज्ञान प्राप्त किया।

संस्कृत कालिजमें रहकर श्यामाचरणने बड़ी ख्याति पाई और उनको शिक्षाविभागके एक अफसरकी सिफारिशसे सदर अदालतमें जज साहबकी

सरिश्तेदारीकी जगह मिल गई और अब उनको सौ रुपया मासिक मिलने लगे। अदालतका काम उन्होंने थोड़े ही दिनोंमें सीख लिया। श्यामचरणकी विद्वत्ता और चतुराईके कारण जज साहबको बहुत सुविधा होने लगी। श्यामाचरण जज साहबके लिए देशी भाषामें लिखे हुए कागज पत्रोंका अनुवाद सरल और सुंदर अँगरेजीमें कर दिया करते थे। इस अनुवादसे जज साहबको बहुत सहायता मिलती थी। इस सुविधाको देखकर हाई-कोर्टमें भी अनुवादक (ट्रान्सलेटर) का एक नया पद मुकर्रर किया गया। इस पद पर श्यामाचरण नियुक्त किये गये और उनको अब चारसौ रुपया मासिक वेतन मिलने लगा। इसके बाद श्यामाचरणको हाईकोर्टके प्रधान दुभाषियाका पद मिल गया। इस पदका वेतन छःसौ रुपया मासिक था। यह सब श्यामाचरणके कठोर परिश्रम और दृढ़ संकल्पका ही फल था।

श्यामाचरण सरकारके समान मद्रास हाईकोर्टके जज सर **मधुस्वामी** ऐयरका जीवन भी आत्मोन्नतिका अच्छा उदाहरण है। उनका जन्म एक ऐसे निर्धन घरमें हुआ था कि उन्हें बारह वर्ष की अवस्थामें ही एक ओवरसियरके दफ्तरमें एक रुपया मासिक पर नौकरी करनी पड़ी थी। परन्तु वे छोटे छोटे कामोंके करनेमें भी शक्तिभर प्रयत्न करते थे। इसी गुणके कारण उन्होंने इतनी उन्नति करली। जब वे उक्त ओवरसियरके दफ्तरमें नौकर थे तब एक नदीके पुलके टूट जानेकी खबर आई। इस समाचारको सुनकर ओवरसियर महाशय बहुत घबड़ाये। वे किसी ऐसे आदमीको खोजने लगे जो वहाँ जा कर पुलके टूटनेका पूरा पूरा हाल लासके। परन्तु उनको उस समय वहाँ कोई आदमी न मिल सका। इस लिए उसने मजबूर हो कर बालक मधु-स्वामीको ही उस काम पर भेजा। मधुस्वामीने वहाँ जाकर केवल इतना ही नहीं देखा कि पुल कितना टूटा है और उसके टूटनेसे पानीने आस पासके गावोंको कितनी हानि पहुँचाई है, किन्तु उन्होंने यह भी मालूम किया कि पुल की मरम्मतके लिए इधर उधरके गावोंसे कितने मजदूर और कितना सामान मिल सकता है। जब मधुस्वामीने लौट कर ओवरसियर महाशयको यह सब समाचार सुनाया तब वे बहुत प्रसन्न हुए, क्योंकि उनको उस बाल-कसे इतने समाचार मिलनेकी आशा न थी। मधुस्वामीकी बातोंकी परीक्षा लेनेके लिए फिर उन्होंने अपने एक चतुर कर्मचारीको वहाँ भेजा। कर्मचारीसे

मालूम हुआ कि मधुस्वामीने जो कुछ कहा था बिलकुल सच यर महाशय यह जान कर मधुस्वामी पर बहुत स्नेह करने लगे। मधु अपनी नौकरीसे अवकाश पाने पर एक पाठशालामें चले जाया करते थे। थोड़े ही दिनोंमे मधुस्वामीको अँगरेजी वर्णमालाका ज्ञान हो गया।

मधुस्वामीकी इस विद्याभिरुचिको देखकर ओवरसियरने उन्हें नौकरीसे छुड़ा कर एक स्कूलमें भरती करा दिया। स्कूलकी शिक्षा समाप्त करनेके बाद मधुस्वामी मद्रासके एक कालिजमें भेज दिये गये। वहाँ पर मधुस्वामीने बड़ा नाम पाया। वहाँके अध्यापक मधुस्वामीकी उद्योगशीलता और विलक्षण बुद्धिको देखकर मुग्ध हो गये। एक निबंध लिखनेके लिए मधुस्वामीको ५००) का पुरस्कार मिला। तत्पश्चात् वे ६०) मासिक पर अध्यापक नियुक्त हो गये। कुछ दिनों बाद उनको तंजौरकी कलक्टरीमें एक जगह मिल गई। फिर वे १५०) मासिक पर स्कूलोंके डिपुटी-इन्सपेक्टर हो गये। इस पद पर रहकर उन्होंने शिक्षाविभागको खूब उन्नति दी और बड़ा नाम पाया। उन्हीं दिनोंमें मद्रास प्रान्तकी सरकारने वकालतकी परीक्षा कायम की। वकालतमें अधिक आमदनीकी संभावना देखकर मधुस्वामी कानूनका अभ्यास करने लगे। वे कानूनकी परीक्षामें पास हो गये और उन्हें मुन्सिफीका पद मिल गया। तंजौरके जज उनके न्यायचातुर्यको देख कर ऐसे प्रसन्न हुए कि उन्होंने मुक्तकंठसे मधुस्वामीकी प्रशंसा की। कुछ दिनोंके बादही मद्रास सरकारने मधुस्वामीको डिपुटी कलक्टरके पद पर नियुक्त कर दिया। इस बीचमें मधुस्वामीने जर्मन-भाषा भी सीख ली। कुछ वर्षके बाद मधुस्वामीको मद्रासके स्मालकाजकोर्टके जजका पद मिल गया और तत्पश्चात् वे सी. आई. ई. की उपाधिसे विभूषित किये गये। सरकारने फिर उनकी कार्यकुशलता और योग्यताको देख कर उन्हें हाईकोर्टका जज नियुक्त कर दिया। मधुस्वामीकी इतनी बड़ी उन्नतिका कारण यही था कि वे छोटेसे छोटे कामोंको भी जी लगा कर करते थे और अटूट परिश्रम करनेसे कभी मुँह न मोड़ते थे।

बंगसाहित्यके ख्यातनामा लेखक अक्षयकुमार दत्तने धैर्यपूर्वक अविश्रान्त परिश्रम करके साहित्य-सेवामें बहुत नाम पाया है। १८ वर्षकी अवस्था तक अक्षयकुमारने बहुत थोड़ी शिक्षा प्राप्त की। उस समय दफ्तरोंमे फारसीका ही

प्रचार था। अँगरेजी शिक्षाकी चर्चा थोड़ी ही फैली थी। बहुधा पादरी ही अँगरेजीकी शिक्षा दिया करते थे। सर्व-साधारण अपने बालकोंके मत भ्रष्ट हो जानेके भयसे पादरियोंके स्कूलोंमें अँगरेजी सीखनेके लिए भेजनेमें हिचकिचाते थे। इसलिए अक्षयकुमारको अपने पितासे अँगरेजी सीखनेकी अनुमति बड़ी कठिनाईसे मिली। १८ वर्षकी अवस्थामें अक्षयकुमार पर गृहस्थीका भार आ पड़ा। वे इधर उधर कई जगह नौकरीके लिए फिरे, परन्तु निराशाके सिवाय कुछ हाथ न लगा। निदान कुछ समय बाद उनको तत्त्वबोधिनी पाठशालामें आठ रुपया मासिककी नौकरी मिल गई। इतने थोड़े वेतनमें उनका निर्वाह बड़ी कठिनाईसे होता था। कुछ दिनों बाद उनको 'तत्त्वबोधिनी पत्रिका'के सम्पादनका काम भी मिल गया। यद्यपि उन्होंने बचपनमें थोड़ी शिक्षा पाई थी। तथापि उन्होंने जो कुछ पढ़ा था वह बहुत जी लगाकर सीखा था। अब उनको अपने पूर्वसंचित ज्ञानकी वृद्धि करनेका अच्छा अवसर मिल गया। उन्होंने अँगरेजी दर्शनशास्त्र, गणित और विज्ञानका अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। कलकत्तेके मेडिकल कालिजमें जाकर उन्होंने रसायन और वनस्पति-शास्त्रका भी अध्ययन किया। बारह वर्ष तक इस प्रकार घोर अध्ययन करने पर उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया। जीवनके शेष ३१ वर्ष उनको शिरोरोगसे बड़ा कष्ट पहुँचता रहा। परन्तु ऐसी दशामें भी उन्होंने साहित्य-सेवासे मुँह न मोड़ा। शारीरिक दुख एवं चिन्ताओंके लगे रहने पर भी उन्होंने 'भारत-वर्षका उपासक सम्प्रदाय' नामक ग्रंथ लिखा। इस ग्रंथके लिखने और छपानेमें उनको बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। वे इतने रोगी और निर्बल हो गये थे कि किसी प्रकारके मानसिक अथवा शारीरिक श्रमसे प्राय: असमर्थ हो गये थे। शारीरिक कष्टके कारण जब वे ग्रंथको स्वयं न लिख सकते थे तब वे किसी दूसरे मनुष्यसे लिखनेको कहते थे। यदि उस समय कोई मनुष्य उनके पास न होता था तो वे गाड़ी पर बैठे कर अपने किसी मित्रके पास जाते थे और उससे लिख देनेको कहते थे। कभी कभी वे अपने नौकरसे ही भला बुरा जैसा हो सकता था लिखा लेते थे। कभी कभी उनकी ऐसी दशा हो जाती थी कि दूसरोंसे लिखानेमें भी उन्हें बड़ा कष्ट होता था। ऐसी अव-स्थामें ग्रंथका लिखना उनकी प्रबल इच्छा शक्ति और दृढ़ संकल्पका ही फल था।

हमको एक फ्रांसीसीका पता लगा है जिसका जीवन अखंड उद्योग और

आग्रहका विचित्र उदाहरण है। वह पहले फ्रांसमें रहता था परन्तु एक राजनैतिक मामलेमें अपने देशसे निकाल दिया गया, इस कारण लंडनमें आकर रहने लगा। वह पहले संगतराशीका काम करता था। लंडनमें कुछ समय तक तो उसे काम मिला, परन्तु फिर यह धंधा सुस्त पड़ गया। उसका रोजगार जाता रहा और उसको गरीबीकी भयंकर सूरत दिखाई देने लगी। इस संकटमें वह अपने एक मित्रके पास गया जो उसीके समान देशसे निकाल दिया गया था, परन्तु लंडनमें फ्रेंच भाषा पढ़ानेका काम करके अच्छी कमाई कर लेता था। संगतराशने अपने मित्रसे पूछा कि "मैं अपने निर्वाहके लिए क्या धंधा करूँ?" मित्रने उत्तर दिया, "अध्यापक हो जाओ!" संगतराशने कहा, "अध्यापक हो जाऊँ? मैं? तो केवल मजदूर हूँ और प्रान्तीय बोली बोलता हूँ। तुम मेरी हँसी करते हो।" उसके मित्रने कहा कि "मैं हँसी नहीं करता, किन्तु सच कहता हूँ, और मैं तुमको फिर सलाह देता हूँ कि तुम अध्यापक बन जाओ। तुम मेरे शिष्य हो जाओ, मैं तुम्हें पढ़ानेका काम सिखला दूँगा।" संगतराशने उत्तर दिया, "नहीं, नहीं! यह असम्भव है। मेरी उम्र बहुत जियादा है, इस लिए मैं कुछ नहीं पढ़ सकता—मुझमें विद्वान् बननेकी योग्यता नहीं है। मैं अध्यापक नहीं हो सकता।" बस वह चल दिया और संगतराशीका काम ढूँढ़ने लगा। वह लंडनको छोड़कर अन्य प्रान्तोंमें गया और कई सौ मील घूमा, परन्तु उसका सारा प्रयत्न निष्फल गया; उसको कहीं काम न मिला। निदान घूम फिर कर वह लंडनको लौट आया और अपने मित्रसे कहने लगा कि "मैंने सर्वत्र काम ढूँढा, परन्तु कहीं न मिला। अब मैं अध्यापक होनेकी ही कोशिश करूँगा।" इसके बाद वह विद्याध्ययन करनेमें लग गया और चूँकि उसकी उद्योग शक्ति अच्छी थी, समझ प्रखर थी और बुद्धि तीव्र थी, इस लिए उसने व्याकरणके मूल मंत्र, वाक्यरचनाके नियम और फ्रेंच भाषाके शब्दोंका शुद्ध उच्चारण शीघ्र ही सीख लिया। जब उसके मित्रने, जो उसका शिक्षक था, देखा कि अब उसे दूसरोंके पढ़ानेकी अच्छी योग्यता हो गई है तब उसने एक अध्यापककी जगहके लिए, जो उस समय खाली हो गयी थी, उससे एक अर्जी भिजवा दी और वह जगह उसको मिल गई। इस तरह वह संगतराश अंतमें अध्यापक हो गया! जिस विद्यालयमें उसको जगह मिली वह लंड-

नके पास उस ग्राममें था जहाँ पर उसने पहले संगतराशीका काम किया था। जब वह सवेरे सोकर उठता था और अपने कमरेकी खिड़कीमेंसे बाहर देखता था, तब उसको पहले पहल मकानोंकी वे चिमनियाँ दिखलाई देती थीं जो उसने स्वयं अपने हाथोंसे बनाई थीं। कुछ दिनों तक उसे यह चिन्ता रही कि ग्रामवाले कहीं मुझे पहचान न लें कि मैं वही पुराना संगतराश हूँ और इस लिए मेरे कारण इस प्रसिद्ध व प्राचीन विद्यालय पर कलंक लग जाय। परन्तु उसको इस प्रकारकी चिन्ता करनेकी आवश्यकता न थी, क्योंकि वह परम योग्य अध्यापक निकला और एक बार एक सार्वजनिक सम्मेलनमें उसके शिष्योंकी फ्रेंच भाषाकी योग्यताकी खूब प्रशंसा की गई। इस बीचमें उसके सभी जान पहचानवाले—सहयोगी, अध्यापक और शिष्य उसका सन्मान करने लगे; और जब उन लोगोंको उसके प्रयत्नोंकी, कठिनाइयोंकी और प्राचीन स्थितिकी खबर पड़ी तब उन लोगोंने उसकी और भी प्रशंसा की।

सर **सेमुएल रोमीली**ने भी आत्मोद्धारके लिए कुछ कम परिश्रम नहीं किया। वे एक जौहरीके पुत्र थे। उन्होंने बचपनमें बहुत कम शिक्षा पाई थी; परन्तु बड़े होनेपर उनको पढ़नेका ऐसा शौक लगा कि वे इस विषयमें बिना-थके हुए उद्योग करने लगे। उन्होंने १५-१६ वर्षकी अवस्थामें लैटिन भाषाका अध्ययन करना शुरू किया। इससे पहले वे लैटिन व्याकरणके केवल कुछ मोटे मोटे नियम जानते थे। तीन चार वर्षमें ही उन्होंने लैटिनकी अधिकांश गद्य पुस्तकें पढ़ डालीं। इसी बीचमें उन्होंने एक लेखककी कई पुस्तकोंका अनुवाद भी कर डाला और कुछ पुस्तकें कई बार पढ़ डालीं। उन्होंने भूगोल, प्राकृतिक इतिहास, और दर्शन-शास्त्रका अध्ययन किया और बहुतसे अन्य विषयोंका सामान्य ज्ञान भी प्राप्त कर लिया। उन्होंने वकालत भी की और कुछ समयमें वे उच्च श्रेणीके सरकारी वकील नियत हो गये; परन्तु उन्होंने परिश्रम करना कभी न छोड़ा।

हिब्रू भाषाके अध्यापक डाक्टर लीने भी धैर्यपूर्वक परिश्रम करके साहित्यसेवामें अच्छा नाम पाया था। वे बड़े गरीब थे, इस लिए उनको शुरूमें एक खैराती स्कूलमें पढ़ना पड़ा था। उस समय उनके अध्यापक कहा करते थे कि " मेरे पास आज तक ऐसा रद्दी लड़का पढ़नेको नहीं आया।" फिर

वे एक बढ़ईके यहाँ काम सीखने लगे और युवा-काल तक यही काम करते रहे। जब उन्हें कामसे अवकाश मिलता था तब वे कुछ न कुछ पढ़ा करते थे। उनके पास कई अँगरेजीकी किताबें थी जिनमें लैटिन भाषाके कुछ वाक्य लिखे थे। उनको इन वाक्योंके अर्थ जाननेकी उत्कंठा हुई। बस उन्होंने लैटिन भाषाका एक व्याकरण मोल ले लिया और लैटिन सीखना शुरू कर दिया। वे सबेरे जल्दी उठते थे और रातको देर तक काम किया करते थे। उन्होंने बढ़ईका काम सीख लेनेके पहले ही लैटिन भाषा सीख ली। एक बार ग्रीक भाषाकी एक पुस्तक उनके हाथ पड़ गई। बस उन्हें तुरन्त ही ग्रीक भाषा सीखनेका शौक हो गया। अब उन्होंने लैटिनकी कुछ पुस्तकें बेच दीं और ग्रीक भाषाका एक व्याकरण और एक कोष मोल ले लिया। उन्हें विद्याध्ययनसे बड़ा प्रेम था। इस लिए उन्होंने ग्रीक भाषा भी शीघ्र ही सीख ली। उन्हें न कोई पढ़ानेवाला था और न उन्हें नामवरी या इनाम पानेकी आशा थी! वे केवल अपने शौकको पूरा करनेके लिए पढ़ा करते थे। उन्होंने और भी कई भाषाओंका सीखना शुरू किया; परन्तु अधिक अध्ययन करनेसे उनके स्वास्थ्यको हानि पहुँचने लगी और रातको देर तक पढ़ते रहनेसे उनकी आँखोंमें रोग हो गया। यह देखकर कुछ समयके लिए उन्होंने किताबें उठाकर रख दीं। इस बीचमें वे बढ़ईका काम बराबर करते रहे। इस धंधेमें उन्होंने कुछ तरक्की भी की और जब उनके पास कुछ धन जुड़ गया तब उन्होंने अपना विवाह भी कर लिया। उस समय उनकी उम्र २५ वर्षकी थी। उनको अब अपने कुटुम्बके पालनकी ओर ध्यान देना पड़ा, इस लिए उन्होंने साहित्यसंबंधी आनन्दको छोड़ दिया और अपनी सब पुस्तकें बेच दीं। निर्वाहके लिए वे बढ़ईका काम करते रहे। वे आजन्म यही काम करते रहते; परन्तु एक बार उनके घरमें आग लगी और उनके सब औजार जल गये। यही औजार उनके जीवनके मूलाधार थे। इस लिए उनको दारिद्यने फिर घेर लिया। वे इतने गरीब थे कि अब नये औजार न खरीद सकते थे! इस लिए उन्होंने लड़कोंको पढ़ाना शुरू किया, क्योंकि इस काममें सबसे कम पूँजीकी जरूरत है। यद्यपि वे कई भाषायें सीख चुके थे, तो भी उनका सामान्य बातोंका ज्ञान ऐसा दोषयुक्त था कि वे शुरू शुरूमें लड़कोंको न पढ़ा सकते थे। परन्तु वे अपनी धुनके पक्के थे, इस लिए उन्होंने फिर परिश्रम शुरू किया और इतना हिसाब

किताब और लिखना सीख लिया कि वे छोटे बालकोंको इन विषयोंमें शिक्षा देनेके योग्य हो गये। उनका स्वभाव ऐसा सीधा सादा और अच्छा था कि धीरे धीरे बहुतसे मनुष्य उनके मित्र हो गये और उनकी नामवरी दूर दूर तक फैल गई। डाक्टर स्काटने उनको एक खैरातीस्कूलका अध्यापक नियत कर दिया और पूर्वी भाषाओंके एक सुप्रसिद्ध विद्वान्से उनकी मुलाकात करा दी। इस विद्वान्ने डाक्टर लीको पूर्वीय भाषाओंकी कुछ पुस्तकें दीं। जिनकी सहायतासे लीने अरबी, फारसी और कई हिन्दुस्तानी भाषायें सीख लीं। लीने अपना अध्ययन बराबर जारी रक्खा। अंतमें वे अपने दयालु मित्र डाक्टर स्काटकी सहायतासे केम्ब्रिज नगरके क्वीन्स कालिजमें भरती हो गये। वहाँ पर उन्होंने गणितका अध्ययन किया। इसी बीचमें अरबी और हिब्रू भाषाओंके अध्यापककी जगह खाली हुई और डाक्टर ली उस जगहके लिए चुन लिये गये। वे अध्यापकीका काम करनेके अतिरिक्त ईसाईधर्म-प्रचारकोंको भी—जो पूर्वी देशोंमें जाकर वहींकी भाषाओंमें धर्मप्रचार करना चाहते थे—मुफ्त पढ़ाते थे। उन्होंने बाइबिलका कई पूर्वी भाषाओंमें अनुवाद किया। उन्होंने न्यूजीलेण्ड नामक द्वीपकी भाषाको सीखा और उसका एक व्याकरण और एक कोष तैयार किया, जो न्यूजीलेण्डके स्कूलोंमें अबतक पढ़ाये जाते हैं। डाक्टर सेमुएल लीका जीवनचरित उस अटूट परिश्रमका एक नमूना है जो अनेक साहित्यसेवियों और विज्ञानवेत्ताओंने आत्मोद्धारके लिए किया है।

इसी तरह और भी अनेक सुप्रसिद्ध विद्वानोंके नाम लिये जा सकते हैं जो यह सिद्ध करते हैं कि मनुष्य जब चाहे तब विद्याध्ययन शुरू कर सकता है और यदि कोई मनुष्य अध्ययन करनेका दृढ़ संकल्प कर ले, तो जियादा उम्र हो जाने पर भी वह बहुत कुछ कर सकता है। सर हेनरी स्पैलमेनने विज्ञानका अध्ययन ५०–६० वर्षकी उम्रसे पहले शुरू ही न किया था। ड्राइडन और स्काट ४० वर्षकी उम्रमें लेखक बने थे। बुकेकियोने ३५ वर्षकी उम्रमें साहित्यसेवा शुरू की थी और ऐलफाइरीने ४६ वर्षकी उम्र हो जानेपर ग्रीक भाषाका अध्ययन शुरू किया था। जेम्स वाटने ४० वर्षकी उम्रमें फ्रेंच, जर्मन और इटालियन भाषायें सीखीं थीं। टामस स्काटने ५६ वर्षकी उम्र हो जाने पर हिब्रू भाषा सीखना शुरू किया था।

राबर्ट हालने अपने बुढ़ापेमें इटालियन भाषा सीखी थी। हम सैकड़ों मनुष्योंके नाम लिख सकते हैं जिन्होंने जियादा उम्र हो जानेपर एक नया मार्ग ग्रहण किया और सर्वथा नई विद्यायें सीख लीं। तुच्छ और आलसी आदमीके सिवाय और कोई यह न कहेगा कि "मेरी उम्र इतनी जियादा हो गई है कि मैं अब कुछ नहीं सीख सकता।"

यहाँ पर हम पहले कही हुई एक बातको फिर दुहराते हैं। वह यह कि प्रतिभाशाली मनुष्य संसारमें इतनी हलचल नहीं मचाते और न इतने अग्रसर होते हैं। जितने वे लोग जो दृढनिश्चयी होते हैं और बिना थके अटूट परिश्रम करते हैं। यद्यपि हम मानते हैं कि अनेक प्रतिभाशाली मनुष्योंने छोटी उम्रमें ही प्रौढ़ता प्राप्त कर ली है, तो भी यह बात सच है कि अकाल-प्रौढ़ता यह सूचित नहीं करती कि वे बड़े होकर कितनी उन्नति करेंगे। छोटी उम्रकी प्रौढ़ता कभी कभी तो मानसिक बलकी सूचक नहीं होती, किन्तु रोगकी सूचक होती है। उन बच्चोंका क्या हुआ जो छुटपनमें बड़े तेज थे? अव्वल रहनेवाले और इनाम पानेवाले लड़के कहाँ हैं? उनके जीवनोंको देखो तो तुमको मालूम होगा कि बहुधा वे लड़के जो स्कूलमें उनके नीचे गिरे रहते थे, अब उनके आगे बढ़े हुए हैं। चतुर लड़कोंको पुरस्कार मिलते हैं, परन्तु ये पुरस्कार उनके लिए हमेशा लाभदायक नहीं होते। पुरस्कार तो चेष्टा, परिश्रम और आज्ञापालनके लिए देना चाहिए। जिस लड़केकी शक्तियाँ औरोंकी अपेक्षा हीन हों, परन्तु वह फिर भी यथाशक्ति परिश्रम करता हो, उसको सबसे अधिक उत्साहित करना चाहिए।

ऐसे अनेक मनुष्य प्रसिद्ध हो चुके हैं जो अपने बचपनमें महामूढ़ और रद्दी गिने जाते थे। उनके विषयमें एक मनोहर अध्याय लिखा जा सकता है, परन्तु यहाँपर स्थानाभावके कारण सिर्फ थोड़ेसे उदाहरण दिये जाते हैं। प्रसिद्ध चित्रकार **पाइट्रो डी कोरटोना** बाल्यावस्थामें ऐसी स्थूल बुद्धिका था कि लोग उसे 'गधेका सिर' कहा करते थे। **न्यूटन** जब स्कूलमें पढ़ता था तब उसका नम्बर अपने दरजेमें सबसे नीचे रहता था। **ऐडम क्लार्क** जब छोटा था तब उसके पिता उसको 'शोचनीय मूढ़' कहा करते थे। प्रसिद्ध नाट्यकार **शैरीडन** जब छोटा था तब ऐसा मूर्ख था कि उसकी माताने उसको एक अध्यापकके सुपर्द करके कहा था—"यह ऐसा मूढ़ है

कि इसका सुधार हो ही नहीं सकता।" प्रसिद्ध लेखक वाल्टर स्काट बचपनमें महामूढ़ था उसके अध्यापकने उसके विषयमें यह कहा था कि "यह तो मूढ़ है और जन्म भर मूढ़ रहेगा।" चैटरटनकी माता भी शुरू शुरूमें यही कहा करती थी कि "यह ऐसा सिड़ी है कि किसी मतलबका न निकलेगा।" ऐलफाइरी कालिज छोड़ने पर भी ऐसा ही मूढ़ बना रहा जैसा वह भरती होनेके समय था। परन्तु कालिज छोड़नेके बाद उसने बहुत विद्या सीख ली और वह एक सुप्रसिद्ध विद्वान् गिना जाने लगा। लार्ड क्लाइव जिसने भारतवर्षमें अँगरेजी राज्यकी नींव डाली थी एक मूढ़ लड़का था। उसके कुटुम्बवालोंने उससे अपना पीछा छुड़ानेके लिए उसे भारतवर्ष भेज दिया था। नैपोलियन और वैलिंगटन दोनों ही लड़कपनमें मंदबुद्धिके थे। उन्होंने स्कूलमें कभी ख्याति न पाई। डाक्टर कैलमर्स और डाक्टर कुक जब स्कूलमें पढ़ते थे तब बहुत ही मूढ़ और उपद्रवी थे। मास्टरने इन दोनोंको यह कह कर निकाल दिया था कि "ये मूढ़ कभी नहीं सुधर सकते।" मनुष्यजातिका परमहितैषी जान हव्वर्ड सात वर्ष तक स्कूलमें पढ़ता रहा, परन्तु तब तक उसके लिए काला अक्षर भैंसे बराबर ही रहा।

डाक्टर आरनल्डने जो कुछ लड़कोंके विषयमें कहा है वह मनुष्योंके विषयमें भी बिलकुल सत्य है—"हम दो लड़कोंमें जो भेद देखते हैं उसका क्या कारण है? उसका मुख्य कारण यही है कि उनमें उत्साहकी कमी जियादती है। स्वाभाविक योग्यताकी कमी जियादतीसे उतना फरक नहीं पड़ता, जितना उत्साहकी कमी जियादतीसे पड़ जाता है। जिस लड़केमें अटूट परिश्रम करनेकी शक्ति है उसमें उत्साहका संचार भी शीघ्र ही हो जाता है। जिस मूढ़ लड़केमें आग्रह और उद्योग है वह उस चतुर लड़केसे आगे बढ़ जाता है जिसमें ये गुण नहीं होते। धीरे धीरे परन्तु निश्चितरूपसे काम करनेसे सफलता अवश्य होती है। कुछ लड़कोंकी हालत बड़े होनेपर बिलकुल उल्टी हो जाती है। इसका कारण धैर्यपूर्वक परिश्रमकी कमी या जियादती है। हमको यह देखकर आश्चर्य होता है कि कुछ लड़के बड़े चतुर होते हैं; परन्तु बड़े होनेपर वे बिलकुल साधारण समझे जाते हैं; और कुछ लड़के ऐसे भी देखनेमें आते हैं जो बड़े सुस्त होते हैं, उनसे किसी तरहकी

आशा नहीं की जा सकती और उनकी शक्तियाँ बड़ी मंद होती हैं, परन्तु धुन बाँधकर निरन्तर काम करते करते वे बड़े होनेपर समाजके नेता बन जाते हैं। इस पुस्तकके मूल लेखक डाक्टर सेमुएल स्माइल्स जब स्कूलमें पढ़ते थे तब उनके दरजेमें एक महामूढ़ लड़का भी पढ़ता था। सब मास्टरोंने बारी बारीसे उसको शिक्षा देनेमें अपनी चतुराई दिखाई; परन्तु किसीको सफलता न हुई। वह पीटा गया, उसको मूर्खोंकी टोपी (Fool's Cap) पहनाई गई, वह फुसलाया गया और समझाया गया, परन्तु उसके एक भी बात न लगी। कभी कभी तमाशा देखनेके लिए वह दरजेके सब लड़कोंके ऊपर प्रथम नम्बरपर खड़ा कर दिया जाता था। फिर उससे और दरजेके दूसरे लड़कोंसे सबक सुना जाता था और प्रश्न किये जाते थे; परन्तु वह कुछ भी जवाब न दे सकता था; और यह देखकर बड़ी हँसी आती थी कि वह नम्बर उतरते उतरते अंतिम नम्बरपर शीघ्र ही पहुँच जाता था! उसके विषयमें मास्टरोंने यह कह दिया था कि इस मूढ़का इलाज दुनियाके परदे पर नहीं है। परन्तु मंद होनेपर भी इस मूढ़में काम करनेका कुछ उत्साह था, जो उसकी उम्रके साथ साथ बढ़ता चला गया। जब उसने बड़े होने पर जीवनके कामकाजमें हाथ डाला तब वह अपने बहुतसे स्कूली साथियोंसे बढ़कर निकला और उनमेंसे अधिकांशको वह अपनेसे बहुत पीछे छोड़ गया। डाक्टर स्माइल्सको उसके विषयमें जब अन्तिम बार खबर मिली तब वह उस नगरका, जो उसका जन्म-स्थान था, प्रधान मैजिस्ट्रेट था!

हम ऐसे अनेक मनुष्योंके उदाहरण दे चुके हैं जिन्होंने विद्याभ्यास एवं साहित्य सेवा करके अपनी उन्नति की है। अब हम व्यापारी वर्गमें से भी ऐसे दो मनुष्योंके उदाहरण देते हैं जिन्होंने स्वावलम्बन द्वारा अपनी उन्नति की है। रामदुलाल सरकार बाल्यकालमें परम निर्धन थे। जो कुछ इधर उधरसे मिल जाता था उसीसे अपनी उदरपूर्ति कर लेते थे। ऐसी अवस्थाके कारण उन्होंने बहुत ही थोड़ा लिखना-पढ़ना सीखा। वे ऐसे गरीब थे कि कागजके बजाय केलेके पत्तों पर लिखा करते थे। कुछ बड़े होने पर उनको कलकत्तेमें पाँच रुपया मासिककी नौकरी मिल गई। इस छोटीसी नौकरी पर रह कर भी वे मालिकका काम बड़ी सावधानी और ईमानदारीके साथ करते थे। उनको अपने मालिकका रुपया वसूल करनेके लिए कलकत्तेसे बाँकीपुर पैदल जाना

पड़ता था। गर्मी, धूप, जाड़ा, मेंह उनको सब कुछ रास्तेमें सहन करना पड़ता था। उन दिनों कलकत्तेसे बाँकीपुर जाना भी बड़ा जोखिमका काम था, क्योंकि मार्गमें लुटेरोंका भय सदा लगा रहता था। एक बार कलकत्तेको लौटते समय रामदुलालको मार्गमें रात हो गई। मालिकका रुपया उनके पास था। इस भयसे कहीं उस रुपयेको कोई लूट न लेवे आस पासके गांवोंमें किसीके घर नहीं ठहरे। वरन् एक पेड़के नीचे गरीब मुसाफिरकी तरह पड़ रहे। उन्होंने कष्ट उठा कर सारी रात उसी पेड़के नीचे काट दी। मालिकके धनकी रक्षा करना वे अपना परम धर्म समझते थे। उनको अपने मालिकके कामके लिए जहाज पर भी जाना पड़ता था। वहाँ वे दो बार पानीमें डूबनेसे बचे। यही कर्त्तव्य परायणता और ईमानदारी रामदुलालकी भावी उन्नतिका मुख्य कारण हुई। एक घटना ऐसी हुई कि जिसके कारण रामदुलालके सारे दरिद्रका अंत हो गया। एक बार मालिकने रामदुलालको चौदह सौ रुपयां दे कर जहाज खरीदनेके लिए टाला भेजा। टालामें जलमग्न जहाजोंका नीलाम हुआ करता था। रामदुलालने अपने मालिकके यहाँ रह व्यापार संबंधी ज्ञान खूब प्राप्त कर लिया था। जलमें डूबे जहाजोंके मूल्यका अनुमान करनेमें वे बड़े सिद्धहस्त हो गये थे। जब रामदुलाल टाला पहुँचे उस समय नीलाम हो चुका था। अतएव उन्हें निराश होना पड़ा। परन्तु वहाँ पर उन्हें मालूम हुआ कि उसी दिन एक दूसरे जलमग्न जहाजका नीलाम होने वाला था। इस जहाजका बहुत कुछ हाल उन्हें पहलेसे ही मालूम था। जब नीलाम हुआ तो उस जहाजके दाम बहुत कम लगे। रामदुलाल ताड़ गये कि जहाजकी मालियत बहुत जियादाकी थी। इस लिए उन्होंने अपने मालिकसे बिना पूछे ही अपनी जोखिम पर उस जहाजको खरीद लिया। खरीदनेके बाद एक अँगरेज व्यापारी वहाँ आ पहुँचा। उसने रामदुलालसे उस जहाजको खरीदना चाहा। रामदुलालने एक लाख रुपया नफा लेकर उस जहाजको उस अँगरेजके हाथ बेंच डाला। रामदुलालके मालिकको इस व्योहारकी कुछ भी खबर न थी। परन्तु रामदुलालने लौट कर बिक्रीका सारा रुपया अपने मालिकके सामने रख दिया और जहाज खरीदनेका सारा हाल कह सुनाया। रामदुलालके स्वामी बड़े बुद्धिमान थे और मनुष्यकी कदर करना जानते थे। इसलिए उन्होंने नफाका एक लाख रुपया स्वयं न लेकर रामदुलालको ही दे

डाला। यदि रामदुलाल चाहते तो नफाका सारा रुपया चुपचाप अपने पास रख लेते और अपने मालिकको उसकी खबर भी न देते। परन्तु उन्होंने ऐसा न किया। यह ईमानदारीका कैसा उज्ज्वल उदाहरण है! रामदुलालने मालिकसे एक लाख रुपया पाकर स्वयं व्यापार करना शुरू कर दिया। फिर क्या था, कुछ ही वर्षमें वे मालामाल हो गये। वे कई देशोंसे व्यापार करने लगे। उनके मालसे लदे हुए जहाज दुनियाके प्रायः सभी समुद्रों पर तैरते थे। इतने धनाढ्य हो कर भी उन्होंने परिश्रम और सत्यनिष्ठाको एक दिनके लिएं भी न छोड़ा।

सर जमसेदजी जीजीभाईने बाल्यकालमें परम निर्धन हो कर भी व्यापारमें आश्चर्यजनक उन्नति की और बड़ा नाम पाया। उनके माता-पिता उनकी बाल्यावस्थामें ही चल बसे। वे अपने जीवनकालमें जमसेदजीका विवाह एक व्यापारीकी लड़कीके साथ कर गये थे। माता-पिताके मरने पर जमसेदजी बिलकुल निराश्रय हो गये। अतएव वे अपने श्वसुरके यहाँ जाकर रहने लगे। वहाँ पर उनको खाना-कपड़ा मिलता था और कुछ रुपये खर्चको मिलते थे। श्वसुरके यहाँ रहकर उन्होंने व्यापार संबंधी बहुतसी बातें सीख लीं और बड़ी किफायतके साथ रह कर अपने जेब खर्चमेंसे १२०) बचा लिये। सोलह वर्षकी उम्रमें वे एक पारसी व्यापारीके यहाँ गुमास्ता हो गये। उसी समय उन्हें मालिकके काम पर चीन जाना पड़ा। चीन जाते समय वे अपना सर्वस्व १२०) भी लेते गये। चीन देशमें रह कर उन्होंने अपने मालिकका काम बड़े परिश्रम और सावधानीके साथ किया। वे समयका सदुपयोग करना खूब जानते थे। मालिकके कामसे जब उनको अवकाश मिलता था तब वे उस देशकी व्यापार संबंधी अनेक बातोंको ध्यान लगा कर देखा और सीखा करते थे। थोड़े ही समयमें उन्होंने यह पता लगा लिया कि भारतवर्षमें पैदा होनेवाले किस किस मालकी खपत चीनमें होती है और ऐसे मालके व्यापारमें कितने नफेकी संभावना है। धीरे धीरे उन्होंने चीनके बाजारकी स्थितिका ज्ञान भी प्राप्त कर लिया। बम्बईमें अपने श्वसुरकी दुकान पर रह कर उन्होंने जो व्यापार संबंधी ज्ञान प्राप्त किया था वह अब बहुत बढ़ गया। उनके मनमें अपनी पूँजीसे विदेशोंके साथ व्यापार करनेकी बड़ी प्रबल इच्छा पदा होगई। परन्तु उनके पास इतने बड़े कामके लिए पूँजी कहाँ थी? जब

वे चीनसे लौट कर भारतवर्षमें आये तब उनके देशभाइयोंमें उनकी ख्याति फैलने लगी। इससे कुछ सज्जन उनकी सहायता करनेको तैयार हो गये। चीनमें रह कर उन्होंने अपने वेतनमेंसे कुछ रुपया बचाया था। परन्तु विदेशी व्यापारके लिए वह रुपया नहीं के बराबर था। इस लिए वे अपने मित्रों और शहरवालोंसे रुपया कर्ज लेकर पूँजी इकट्ठा करने लगे। लोग जानते थे कि जमसेदजी बड़े परिश्रमी और अपनी बातके धनी थे। इसलिए जमसेदजीकी मनोकामना सफल हो गई। कुछ ही समयमें उन्होंने पेंतीस हजार रुपया इकट्ठा कर लिया। जमसेदजीने फिर अपने नफामें से यह बड़ी रकम व्याज सहित चुका दी।

कुल मिलाकर जमसेदजीने पाँच बार चीनकी यात्रा की। चौथी बार जब वे बम्बईको लौट रहे थे तब वे एक बड़े संकटमें फँस गये। उस समय अँगरेजों और फ्राँसवालोंके बीचमें युद्ध छिड़ा हुआ था। जमसेदजीका जहाज जब सीलोनके पास आया तब फ्राँसवालोंने उसे पकड़ लिया और जमसेदजीको कैद करके केपगुपहोप भेज दिया। कैदमें रह कर जमसेदजीने अनेक कष्ट सहे। दिनभरमें उनको केवल पावभर चावल और एक बिसकुट खानेको मिलता था। उनका बहुतसा रुपया और माल फ्राँसवालोंने लूट लिया। परन्तु वे इतना कष्ट सह कर और इतनी हानि उठाकर भी उत्साह भंग नहीं हुए। जब वे कैदसे छुटे तो एक बार पुनः चीन गये और फिर वहाँसे लौट कर स्थायीरूपसे बम्बईमें व्यापार करने लगे। उन्होंने एक कम्पनी बनाई और उसमें अपने कई मित्रोंको साझी किया। यदि वे चाहते तो निजी पूँजीसे ही उतना व्यापार कर सकते थे, परन्तु उन्होंने ऐसा न करके अपने मित्रोंकी भलाई पर भी ध्यान रक्खा। कुछ वर्षोंमें ही उन्होंने दो करोड़ रुपया कमा लिया! उन्होंने अकाल इत्यादिके अवसर पर अपने देशभाइयोंका दुख दूर करनेके लिये लाखों रुपये दान कर दिये। बम्बईमें ८० हजार रुपया लगाकर एक धर्मशाला बनवाई जो अबतक मौजूद है। उन्होंने अस्पताल भी खुलवाये। इस देशभक्तिको देख कर महारानी विक्टोरियाने उनको नाइट (सर) की पदवीसे विभूषित किया।

धुन बाँधकर चलनेवाला कछुआ आलसी खरगोशसे बाजी जीत लेता है। यदि कोई युवक परिश्रमी हो, तो उसके मंद होनेमें कुछ हर्ज नहीं है।

शक्तियोंकी तेजी एक प्रकारका दोष भी हो सकती है। क्योंकि जो लड़का जल्द याद कर लेता है वह बहुधा उतना ही जल्द भूल जाता है; और एक बात यह भी है कि उसको अखंड उद्योग और आग्रहके गुणोंकी उन्नति करनेकी जरूरत नहीं पड़ती, परन्तु मंदमति युवक इन गुणोंको काममें लाने पर मजबूत हो जाता है। ये गुण हरतरहकी अच्छी आदत डालनेके लिए बड़े मूल्यवान् हैं। डेवीने कहा था कि "मैं जैसा हूँ वैसा मैंने अपने आपको स्वयं बनाया है।" यही बात हरएक मनुष्यके विषयमें सच है। मनुष्य अपने आपको जैसा चाहे वैसा ही बना सकता है।

कहनेका मतलब यह है कि जब हम स्कूल या कालिजमें पढ़ते हैं तब हमारा सर्वोत्तम सुधार मास्टरोंद्वारा उतना नहीं हो सकता जितना हम बड़े होने पर मेहनत करके स्वयं कर सकते हैं। इस लिए मातापिताको इस बातकी जल्दी न होनी चाहिए कि उनके बच्चोंकी शक्तियोंकी उन्नति उचित समयसे पहले ही चटपट हो जाय। उनको चाहिए कि वे संतोषपूर्वक बाट देखते रहें; उत्तम उदाहरण और शान्त शिक्षाको अपना काम करने दें और शेष उनके भाग्य पर छोड़ दें। उनको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि युवक किसी न किसी तरहका शारीरिक व्यायाम करता रहे, जिससे वह खूब तन्दुरुस्त हो जाय। उनको चाहिए कि वे युवकको आत्मोद्धारके मार्ग पर लगा दें और उसके उद्योग और आग्रहकी आदतोंकी सावधानीके साथ वृद्धि करें। इसका परिणाम यह होगा कि अगर उसमें कुछ भी स्वाभाविक शक्ति है, तो वह ज्यों ज्यों बड़ा होता जायगा त्यों त्यों जियादा मजबूतीके साथ और जियादा अच्छी तरह अपना सुधार करता चला जायगा।

ग्यारहवाँ अध्याय।
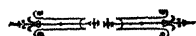
उदाहरण-आदर्श।

"चाहे हम बच्चोंको गला घोंटकर मार डालें परन्तु अपने कर्मोंको नहीं मेट सकते, चाहे हमको मालूम पड़े या न पड़े परन्तु हमारे कर्म सदैव अमर रहते हैं।

—जार्ज इलिअट

"इस संसारमें मनुष्यका कोई कर्म ऐसा नहीं है जिसके साथ परिणामोंका एक लम्बा क्रम न बँध जाता हो; और कोई मनुष्य इतना दूरदर्शी नहीं है कि वह इस क्रमको अंततक देख सके।"

—टामस।

उदाहरण बिना जीभके शिक्षा देता है, परन्तु उसकी शिक्षा बड़ी प्रभावशालिनी होती है। उदाहरण एक ऐसी पाठशाला है जिसमें मनुष्यको व्यवहारकी शिक्षा दी जाती है—उसमें मौखिक उपदेश नहीं दिया जाता, किन्तु कामकाज करना सिखलाया जाता है। उदाहरणकी पाठशालामें सब बातें करके दिखाई जाती हैं और शब्दोंकी अपेक्षा कामोंका असर हमेशा जियादा पड़ता है। मौखिक उपदेश हमको मार्ग बतला सकता है, परन्तु हमको उस मार्गपर चलानेवाला उदाहरण होता है। उदाहरण अपने मुखसे कुछ नहीं कहता, परन्तु उसको देखते देखते हमारी आदतें वैसी ही हो जाती हैं। उत्तम उपदेश सारगर्भित तो होता है, परन्तु यदि उसके साथ उत्तम उदाहरण न हो तो उसका प्रभाव कम पड़ता है। यदि कोई मनुष्य दूसरोंको ईमानदार रहनेका उपदेश करता हो, परन्तु स्वयं चोरी करता हो तो उसके कहनेका असर दूसरोंपर बहुत कम पड़ेगा। बहुतसे लोग अकसर कहा करते हैं कि "मेरी आज्ञाके अनुसार चलो, मेरे कामोंका अनुकरण न करो;" पर हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि जीवनमें लोग प्रायः इस उपदेशको उलट कर काममें लाते हैं, अर्थात् वे दूसरोंको जैसा करते हुए देखते हैं वैसा ही स्वयं करने लगते हैं—उनके उपदेशकी कुछ परवा नहीं करते।

सभी मनुष्योंका स्वभाव है कि वे कानोंसे सुनकर इतना नहीं सीखते जितना आँखोंसे देखकर सीखते हैं। किसी बातको केवल सुन लेनेसे या पढ़

लेनेसे उतना असर नहीं होता जितना प्रत्यक्ष देख लेनेसे होता है। बच-पनमें यह बात विशेष कर देखनेमें आती है। क्योंकि उस जमानेमें ज्ञानके आनेका प्रधान द्वार आँख होती है। बच्चे जैसा दूसरोंको करते देखते हैं वैसा ही स्वतः करने लगते हैं—वे बिना जाने बूझे ही अनुकरण करने लगते हैं। जिस तरह एक प्रकारके छोटे कीड़े जिस रंगकी पत्तियाँ खाते हैं उसी रंगके स्वयं हो जाते हैं, उसी तरह बच्चे अपने आसपासवाले आदमियोंके समान हो जाते हैं। इस लिए बच्चोंको जो शिक्षा घरोंमें मिलती है वह बड़े महत्त्वकी चीज है। स्कूलोंकी शिक्षा चाहे कितनी ही उत्तम हो, परन्तु जो उदाहरण हम अपने घरोंमें बच्चोंके सामने रखते हैं उनका प्रभाव उनके चरित्रगठनपर बहुत पड़ता है। समाज घरमें बनता है—घर ही जातीय चरित्रका केन्द्र है। घरमें जैसी बातें हम सीखते हैं वैसी ही हमारी जीवनकी आदतें, नियम और उद्देश हो जाते हैं। घरोंमें ही जातिकी उत्पत्ति होती है। राष्ट्रीय भावोंका अंकुर भी घरोंमें जमता है और घरोंमें ही हम परोपकार सीखते हैं। एक विद्वान्का कथन है कि "जो मनुष्य अपने घरवालोंसे प्रेम करता है वह अपने देशसे प्रेम करना भी सीख जाता है।" छोटेसे घरमेंसे हम प्रेमको बढ़ाते बढ़ाते सारे संसारमें फैला सकते हैं और संसारके सब जीवोंपर दयाभाव प्रेम-भाव रख सकते हैं; क्योंकि यद्यपि परोपकार घरमें शुरू होता है, परन्तु घरमें उसका अंत नहीं हो जाता।

आचरणके संबंधमें किसी छोटी बातका उदाहरण भी कुछ कम महत्त्वकी चीज नहीं है; क्योंकि वह दूसरे मनुष्योंके जीवनोंमें भी निरंतर प्रवेश करता रहता है और उनके स्वभावोंको भला या बुरा बनानेमें योग देता है। इसी नियमके अनुसार माता-पिताकी आदतें उनके बच्चोंमें भी आ जाती हैं। बच्चे अपने माता-पिताके प्रेम, शासन, परिश्रम और आत्मनिरोधके कामोंको रोज देखते रहते हैं। इन कामोंका असर बच्चोंके जीवनमें उस समय भी पाया जाता है जब उनको सुनी हुई बातोंको भूले हुए बहुत काल हो चुकता है। कहाँ तक कहा जाय, कभी कभी तो माता-पिताका कोई मामूली काम या विचार भी बच्चोंके चरित्र पर ऐसी छाप मारता है कि वह कभी नहीं मिटती। यदि माता-पिताके विचार अच्छे हों, तो इसका परिणाम यह होता है कि उनके बच्चे कुकर्मों और कुविचारोंसे बचे रहते हैं। इस तरहसे जराजरा सी

बातें भी मनुष्योंके चरित्र पर बड़ा प्रभाव डालती हैं । वेस्टका कथन है कि " एक बार मेरी माताने मुझे प्यारसे चूमा था। इसका असर यह हुआ कि मैं चित्रकार बन गया ! " ये बातें देखनेमें छोटी मालूम होती हैं, परन्तु मनुष्यका भावी सुख आर सफलता बचपनमें ऐसी बातोंका योग मिल जानेपर निर्भर है। जब फाक्सवैल बक्सटन अपने जीवनमें एक उच्च पद पर पहुँच गया तब उसने अपनी माताको लिखा था कि " आपने शुरूमें मेरे मस्तक पर जो सिद्धान्त अंकित कर दिये हैं उनके असरका मैं निरंतर अनुभव किया करता हूँ । यह असर मुझे खासकर उस वक्त अनुभूत होता है जब मैं दूसरोंके लिए कुछ काम करता हूँ । " बक्सटन एक अशिक्षित मनुष्यका भी बहुत अहसान मानता था। बक्सटन इस मनुष्यके साथ खेल खेला करता था, सवार होकर जाता था और शिकार खेला करता था । वह मनुष्य लिखना पढ़ना तो बिलकुल न जानता था, परन्तु बड़ा समझदार और हाजिर-जवाब था। बक्सटनने उसके विषयमें एक बार कहा था कि " वह मनुष्य खास कर इस लिए बड़े कामका था कि वह ईमानदारी और आत्म-गौरवके नियमोंके अनुसार चलता था। जब मेरी माता मेरे पास न होतीं थीं तब भी वह कोई ऐसी बात न कहता था कि उसको सुनकर मेरी माता नापसंद करतीं । वह अपने सामने सदैव ईमानदारीका सबसे ऊँचा आदर्श रखता था और बड़े बड़े विद्वानोंकी पुस्तकोंमें जैसे पवित्र और उदार विचार मिलते हैं वैसे ही विचारोंसे वह मेरे मस्तकको भरा करता था। वह मनुष्य मेरा प्रथम और सर्वोत्तम शिक्षक था । " लैंगडलने अपनी मातासे जो शिक्षा पाई थी उसके विषयमें वह कहा करता था कि " यदि सारा संसार तराजूके एक पलड़ेमें रक्खा जाय और मेरी माता दूसरे पलड़ेमें, तो मेरी माता भारी निकलेगी ।" माताओंका समाज पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है।

मनुष्यका कोई कर्म या शब्द ऐसा नहीं है कि उसके साथ परिणामोंका एक क्रम न बँध जाता हो। बातमेंसे बात निकलती चली जाती है और हमको यह कदापि नहीं मालूम हो सकता कि उसका अन्त कहाँ होगा। हमारा कोई कर्म या शब्द ऐसा नहीं है जो हमारे जीवनमें कुछ न कुछ परिवर्तन न करता हो और गुप्तरूपसे दूसरोंके जीवनपर भी प्रभाव न डालता हो। यदि हम कोई अच्छा काम करें या कोई अच्छी बात कहें, तो उसका असर

जरूर होता है । यह दूसरी बात है कि हम उस असरको देख न सकें । इस तरह बुरे काम या बुरे शब्दोंका प्रभाव भी अवश्य पड़ता है । कोई छोटेसे छोटा मनुष्य भी यह नहीं कह सकता कि मेरा उदाहरण दूसरोंपर भला या बुरा प्रभाव न डालेगा । मनुष्योंका प्रभाव कभी नष्ट नहीं होता। वह सदैव जीवित रहता है और हमारे बीचमें फैलता रहता है ।

असलमें इस लोकमें भी मानवी जीवनमें अमरत्वका अंश है । कोई व्यक्ति इस लोकमें अकेला नहीं है । वह एक ऐसी व्यवस्थाका अंश है, जिसके व्यक्ति एक दूसरेके अधीन हैं । वह अपने कर्मोंसे मानवी कल्याणको सदैवके लिए बढ़ा देता है या घटा देता है और जिस तरह वर्तमान कालकी जड़ भूतकालमें ही जम जाती है और हमारे पूर्वजोंके जीवन और उदाहरण हमारे ऊपर अब भी बहुत कुछ प्रभाव डालते हैं, उसी तरह हम अपने रोजमर्रोके कामोंसे भविष्य कालकी स्थिति और रूपको बनाया करते हैं । मनुष्य एक ऐसा फल है जिसके बननेमें और पकनेमें पिछली तमाम शताब्दियोंकी उन्नति लग गई है; और हम लोग, जो इस जमानेमें रहते हैं अपने कामों और उदाहरणोंसे उस आकर्षणशील प्रवाहको जारी रखते हैं जो अत्यन्त प्राचीन भूलकालको अत्यन्त दूरवर्ती भविष्य कालके साथ जकड़ देगा । किसी मनुष्यके कर्म सर्वथा नष्ट नहीं होते । चाहे उसका शरीर मिट्टी और हवामें मिल जाय, परन्तु उसके कर्मोंका बुरा या भला परिणाम अवश्य होता रहेगा और आगामी संतानों पर उनका प्रभाव सदैव पड़ता रहेगा। यह बात बड़ी महत्त्वपूर्ण और गम्भीर है; क्योंकि इसीके कारण मनुष्यको अपनी जिम्मेदारियोंका खयाल रहता है और कुकर्मोंका भय रहता है । हरएक मनुष्यका कर्तव्य है कि वह अपने जीवनको ऐसा बनावे कि उसका प्रभाव उसकी संतान पर अच्छा पड़े ।

हरएक काम जो हम करते या देखते हैं और हरएक शब्द जो हम बोलते या सुनते हैं उसमें कुछ ऐसी शक्ति होती है कि वह केवल हमारे ही संपूर्ण भावी जीवनमें परिवर्तन नहीं करती, किन्तु संपूर्ण समाज पर अपना प्रभाव डालती है । बात यह है कि हम इस शक्तिको अपने बच्चों मित्रों और साथियों पर तरह तरहसे प्रभाव डालते हुए बहुधा देख नहीं पाते; परन्तु वह शक्ति मौजूद जरूर रहती है और सदैव अपना काम किया करती है । यही कारण है कि हमको दूसरोंके सम्मुख अच्छा उदाहरण रखना चाहिए ।

अच्छे उदाहरणसे दूसरोंको शिक्षा मिलती है और गरीबसे गरीब और छोटेसे छोटा आदमी भी ऐसी शिक्षा दूसरोंको दे सकता है। कोई मनुष्य ऐसा नहीं है जो इस साधारण किन्तु अमूल्य शिक्षाके लिए दूसरोंका ऋणी न हो। इस प्रकार दरिद्रसे दरिद्र मनुष्य भी उपकारी बन सकता है; क्योंकि प्रकाशवान् वस्तु घाटीमें रक्खे जानेसे भी वैसा ही प्रकाश देती है जैसा पर्वतपर रक्खे जानेसे। मनुष्य चाहे झोंपड़ियोंमें रहे चाहे महलोंमें, चाहे गाँवोंमें रहे चाहे बड़े नगरोंकी तंग गलियोंमें, और उसकी हालत चाहे कितनी ही खराब क्यों न मालूम हो परन्तु वह दूसरोंके लिए आदर्श हो सकता है। जैसे कोई लखपती आदमी जी लगाकर किसी अच्छे उद्देशके लिए काम कर सकता है उसी तरह एक गरीब किसान भी, जो थोड़ीसी जमीन जोत बोकर अपना निर्वाह करता है, काम कर सकता है। इस लिए बहुत मामूली शिल्पशाला भी एक ओर परिश्रम, विज्ञान और सदाचारकी शिक्षा दे सकती है और दूसरी ओर आलस्य मूर्खता और दुराचार भी सिखला सकती है। मनुष्य इन दोनों तरहकी शिक्षाओंमेंसे कौनसी शिक्षा ग्रहण करेगा, यह उसी पर निर्भर है और इस बात पर भी निर्भर है कि वह उन अवसरोंसे किस प्रकार लाभ उठाता है जो उसको अपने कल्याण करनेके लिए मिलते हैं।

अपने बच्चोंके लिए और संसारके लिए उत्तम जीवन और सच्चरित्रताका उदाहरण छोड़ मरना कोई छोटी चीज नहीं है। इससे धर्मपरायणताकी सर्वोत्तम शिक्षा मिलती है और पापका अत्यन्त कठोर तिरस्कार होता है। सर्वोत्तम सम्पत्तिका आधार भी इसीपर है। वह धन्य है कि जो यह कह सकता है कि "मुझे इस बातका बड़ा संतोष है कि मुझे अपने माता-पिताके चरित्रके कारण कभी लज्जित न होना पड़ा और मेरे चरित्रपर मेरे माता पिताको कभी शोक करनेका अवसर न मिला।"

इतना ही काफी नहीं है कि हम दूसरोंसे सिर्फ यह कह दिया करें कि "ऐसा करो।" नहीं, हमको वह काम स्वयं करके दिखलाना चाहिए। मिसेज चिसहोमने अपनी सफलताका जो गुप्त रहस्य बतलाया है वह सबोंके विषयमें ठीक है। उन्होंने कहा था कि "अगर हम चाहते हैं कि कोई काम हो जाय, तो हमको उस कामको स्वयं करना चाहिए, केवल मुँहसे

बकनेसे कुछ नहीं होता ।" जो वक्ता केवल बोलना जानता है वह किस कामका ? यदि मिजेस चिसहोम व्याख्यान देनेपर ही संतोष कर लेतीं, तो वे कुछ काम न कर पातीं; परन्तु जब लोगोंने देखा कि वे क्या कर रही हैं और उन्होंने कितना काम कर लिया है, तब वे उनकी बातें मानने लगे और उनकी सहायता भी करने लगे । अतः अत्यन्त उपकारी कार्यकर्त्ता वह नहीं है जो सुवक्ता हो अथवा जिसके विचार ऊँचे हों, किन्तु वह है जो अत्यन्त श्रेष्ठ काम करता हो ।

जो मनुष्य सच्चे दिलसे काम करते हैं और कर्मवीर हैं वे गरीब होनेपर भी अच्छे कामोंमें बहुत योग दे सकते हैं । यदि ईश्वरचन्द्र विद्यासागर स्त्री-शिक्षाके लिए और भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र हिन्दी भाषाके प्रचारके लिए केवल बातचीत ही करते रहते तो वे कुछ न कर पाते; परन्तु उन्होंने ऐसा न किया और वे स्वयं काम करने लग गये । काम करनेके सिवाय उन्हें और कुछ धुन न थी । उनके उदाहरणोंका समाज पर बहुत असर हुआ ।

सदाचारकी शिक्षा बहुत कुछ आदर्श मनुष्योंपर ही निर्भर है । हमारे ऊपर पड़ौसियोंके चरित्र, शिष्टाचार, स्वभाव और विचारोंका बहुत प्रभाव पड़ता है । उत्तम नियमोंसे लाभ होता है, परन्तु उत्तम आदर्श मनुष्योंसे बहुत जियादा लाभ होता है । क्योंकि आदर्श मनुष्योंसे हम कार्यरूपमें शिक्षा पाते हैं—उनमें हम बुद्धिको काम करते हुए देखते हैं । उत्तम उपदेशकके साथ बुरे उदाहरणका होना ऐसा है जैसे एक हाथसे मकान बनाना और दूसरेसे गिराते जाना । अतएव मित्रोंको बड़ी सावधानीके साथ चुनना चाहिए । खासकर युवावस्थामें तो इस बातका बहुत खयाल रखना चाहिए । युवकोंमें एक ऐसी आकर्षण-शक्ति होती है जो उनको एक दूसरेके समान बनाती रहती है । मिस्टर ऐजवर्थको पक्का विश्वास था कि सहानुभवके कारण युवक बिना इच्छा किये हुए ही अपने साथियोंके स्वभावका अनुकरण किया करते हैं । वे कहा करते थे कि "युवकोंको यह शिक्षा मिलना बहुत जरूरी है कि वे अपने सामने सर्वोत्तम आदर्श रक्खें ।" उनका सिद्धान्त था कि "या तो सत्संगति करो, नहीं तो संगति ही न करो ।" लॉर्ड कलिङ्गवुडने अपने एक मित्रको लिखा था कि "इस बातको गिरहमें बाँध लो कि बुरे आदमियोंका साथ करनेसे अकेले रहना बहुत अच्छा है । ऐसे मनुष्योंका साथ करो जो

तुम्हारे समान हों या तुमसे अच्छे हों; क्योंकि यह नियम है कि मनुष्यके साथी जैसे होते हैं वैसा ही वह स्वयं हो जाता है।" चित्रकार सर पीटर लैलीका यह नियम था कि वे जहाँतक हो सकता था किसी खराब तसवीर-को न देखते थे। उनका इस प्रकारका विश्वास था कि उन्होंने जब कभी किसी खराब तसवीरको देखा तभी उनकी पैन्सिलमें उसका असर आगया और वे स्वयं अच्छी तसवीर न बना सके। इसी तरहसे जो मनुष्य प्रायः बुरे आदमियोंको देखता रहेगा और उनका साथ किया करेगा, वह धीरे धीरे अवश्य उन्हींके समान हो जायगा।

अतएव युवकोंको भले मानसोंकी संगति करनी चाहिए और अपने आपसे अधिक ऊँचे आदर्शपर पहुँचनेकी चेष्टा करनी चाहिए। फ्रान्सिस हार्नरको महानुभाव और बुद्धिमान् मनुष्योंके समागमसे जो लाभ हुआ उसके संबंधमें उन्होंने कहा था कि "मैं निधड़क कह सकता हूँ कि मैंने जितनी पुस्तकें पढ़ी हैं उनसे मेरी मानसिक उन्नति उतनी नहीं हुई है जितनी इन महात्माओंके द्वारा हुई है।"

सत्संगतिसे कल्याण हुए बिना कभी नहीं रहता। जिस तरह रास्ता चलनेवालोंके कपड़ोंमें रास्तेके फूलोंकी सुगंध आ जाती है उसी तरह सत्संगति करनेसे हम महात्माओंका आशीर्वाद पाते हैं। मुन्शी गंगाप्रसाद वर्मा रायबहादुरको जो लोग जानते थे उन्होंने कहा है कि वे अपने मिलने-वालोंपर बड़ा लाभदायक प्रभाव डालते थे। यही बात जान स्टर्लिंगके विषयमें भी कही जाती है। बहुतोंने उनसे मिलकर पहले पहल आत्मोद्धार करना सीखा—उन लोगोंने समझा कि हम क्या हैं और हमको क्या होना चाहिए। मिस्टर ट्रेंचने उनके संबंधमें कहा है कि "उस महात्माके साथ समागम होनेसे यह असंभव था कि मनुष्यमें श्रेष्ठता न आ जाय और वह अपने साधारण उद्देशोंको छोड़कर बड़े बड़े उद्देशोंके क्षेत्रमें न पहुँच जाय। मैं जब कभी उनके पास जाता था तभी इस बातको अनुभव करता था।" महात्माओंका प्रभाव ऐसा ही पड़ता है। उनकी संगतिसे हमारे विचार स्वतः ऊँचे हो जाते हैं। वे जैसा अनुभव करते हैं वैसा ही हम भी अनुभव करने लगते हैं और हमारे विचार उन्हींके विचारोंके समान हो जाते हैं। मनुष्योंके मस्तक एक दूसरेपर ऐसा ही प्रभाव डालते रहते हैं।

इसी नियमके अनुसार शिल्पकार भी अपनेसे अधिक चतुर शिल्पकारको देख कर उत्साहित होते हैं। हैनडेल बाजा बजानेमें बड़ा चतुर था। हाइडनकी प्रतिभाको पहले पहल उसीने उत्तेजित किया था। जब हाइडनने हैनडेलको बाजा बजाते हुए देखा तब उसे तुरन्त ही नये राग रागनियाँ निकालनेका शौक पैदा हो गया। हाइड्नने लिखा है कि "यदि यह घटना न हुई होती, तो मैं अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'क्रिएशन' भी कदापि न लिख सकता।" उसने हैनडेलके संबंधमें कहा था कि "वह जब चाहे तभी अपने बाजेमें बिजलीकासा असर पैदा कर सकता है। उसका एक सुर भी ऐसा नहीं है जो जोश पैदा न करे।"

वीरोंका उदाहरण कायरोंको उत्साहित करता है; क्योंकि उनकी मौजूदगी रगोंमें जोश पैदा कर देती है। इसीके कारण साधारण मनुष्य भी वीरोंके आधिपत्यमें रहकर वीरताके आश्चर्यजनक कामकर डालते हैं। वीरोंके कामोंका स्मरण मात्र ही तुरहीके शब्दके समान मनुष्योंके खूनमें जोश पैदा कर देता है। वीरवर जिसका अपनी खाल बोहीमिआवालोंको इसलिए दे मरा था कि उनकी वीरताको उत्तेजित करनेके लिए वह खाल ढोलके काममें लाई जाय। जब इपिरसका राजकुमार सिकंदरबेग मरा तब तुर्कोंने उसकी हड्डियोंको इस लिए ले लेना चाहा कि वे उसकी हड्डियोंका एक एक टुकड़ा अपने गलेमें लटका लें। तुर्कोंको विश्वास था कि ऐसा करनेसे वे उस वीरताका कुछ अंश प्राप्त कर लेंगे जो सिकंदर बेगने अपने जीवनमें प्रकट की थी और उन्होंने युद्धमें देखी थी।

जीवनचरितोंका पढ़ना खासकर इस लिए उपयोगी है कि उनमें सचरित्रताके बहुत उत्तम उदाहरण होते हैं। जब हम अपने महान् पूर्वजोंका हाल पढ़ते हैं तब हमारे ऊपर उनका ऐसा प्रभाव पड़ता है कि मानों वे अब भी जीवित हैं। उनके किये हुए काम नष्ट नहीं हो सकते। वे हमारे ऊपर बड़ा प्रभाव डालते हैं। उनके कामोंका कुछ ऐसा प्रभाव बाकी रहता है कि हमको यही मालूम होता है कि हमारे पूर्वज अब भी हमारे साथ उठते बैठते हैं। उनके उदाहरण हमारे लिए कल्याणकारी हैं। हम उन उदाहरणोंका अध्ययन कर सकते हैं, उनकी प्रशंसा कर सकते हैं और उनका अनुकरण कर सकते हैं। वास्तवमें जिस मनुष्यका जीवनचरित श्रेष्ठ होता है वह संततिके

लिए कल्याणका एक चिरस्थायी भांडार छोड़ जाता है; क्योंकि उसका जीवन दूसरोंके लिए आदर्श हो जाता है दूसरे मनुष्य भविष्यमें उसके जीवनका अनुकरण कर सकते हैं। उसका जीवन मनुष्यमें सदैव नवजीवन फूँकता रहता है और उनको इस बातके योग्य बनाता है कि वे वैसा ही जीवन व्यतीत कर सकें। अतएव जिस पुस्तकमें किसी सत्पुरुषका जीवन-चरित लिखा हो, वह बहुमूल्य बीजोंसे भरी है। वह पुस्तक एक जीवन-वाणी है या यों कहिए कि वह बुद्धि है। ऐसी पुस्तकें सर्वोत्तम उदाहरणोंसे भरी हुई होती हैं। हम उन उदाहरणीय महात्माओंके कामोंका अनुकरण करके अपना परम कल्याण कर सकते हैं।

ऐसा नहीं हो सकता कि कोई मनुष्य महात्मा गोपाल कृष्ण गोखले, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर इत्यादिके जीवनचरित पढ़े और उसके विचार ऊँचे न हो जायँ। ऐसे जीवनचरित पढ़नेसे यह मालूम होता है कि मनुष्य क्या हो सकता है और क्या कर सकता है। ऐसे जीवनचरित पढ़नेसे मनुष्यके पास निराशा नहीं फटक सकती और उसके जीवनके उद्देश ऊँचे हो जाते हैं। सर्वोत्तम संगति करनेसे, सर्वोत्तम पुस्तकें पढ़नेसे और उनकी सर्वोत्तम बातोंका अनुकरण करनेसे बड़ा भारी लाभ होता है।

कभी कभी ऐसा भी हुआ है कि किसी मनुष्यको समय काटनेके लिए इधर उधरसे कोई ऐसी किताब हाथ पड़ गई जिसमें जीवनका कोई उत्तम आदर्श था, और उस पुस्तकके पढ़नेसे उस मनुष्यमें ऐसा उत्साह पैदा हो गया जिसके अस्तित्वकी आशा भी न थी। जब एलफाइरीने प्लूटार्ककी लिखी हुई पुस्तक पढ़ी तभीसे उसे विद्याध्ययनका बड़ा भारी शौक लग गया। उस पुस्तकमें जीवनचरित लिखे थे। लोयोला पहले एक सैनिक था। वह एक युद्धमें घायल हो गया। उसने अपना जी बहलानेके लिए एक पुस्तक पढ़नेके लिए माँगी। किसीने उसको एक पुस्तक दे दी जिसमें साधु-ओंके जीवनचरित लिखे थे। बस उस पुस्तकके पढ़नेसे उसके दिलमें कुछ ऐसा जोश पैदा हुआ कि वह उसी समयसे एक धार्मिक संप्रदायकी स्थापनामें लग गया। ईसाई धर्ममें उसका एक संप्रदाय ही जुदा गिना जाता है। इसी तरह जर्मनीमें लूथरने ईसाइयोंके प्रोटेस्टेन्ट मतके स्थापित करनेमें जो परि-श्रम किया था उसका कारण यह था कि उसने एक पुस्तक पढ़ी थी जिसमें

जान हुसका जीवनचरित और लेख लिखे थे। ' फ्रान्सिस जेविअरके जीवन-चरित ' का डाक्टर बुल्फ पर इतना प्रभाव पड़ा कि उन्होंने अपना जीवन धर्म-प्रचारके लिए अर्पण कर दिया।

जो मनुष्य प्रसन्नतासे काम करते हैं वे युवकोंके सम्मुख एक अत्यन्त उपयोगी उदाहरण उपस्थित करते हैं। इस उदाहरणका प्रभाव दूसरोंपर तुरन्त ही पड़ता है। प्रसन्नतासे मनमें ग्रहणशीलता आती है। प्रसन्नताके सामने भूत प्रेत उलटे पैरों भाग जाते हैं—उनका डर पास भी नहीं फटकने पाता है, कठिनाइयोंसे निराशा नहीं होती है, क्योंकि उनका सामना करते समय हमको सफलताकी आशा रहती है; और मस्तकमें ऐसी कुछ खुशी पैदा हो जाती है कि उसके कारण मनुष्य सुयोगोंको हाथसे नहीं जाने देता और उसको असफलता भी बहुत कम होती है। जिसकी तबीयतमें जोश होता है वह मनुष्य सदैव प्रसन्नचित्त रहता है। ऐसा मनुष्य स्वयं प्रसन्नतासे काम करता है और दूसरोंको भी काम करनेमें उत्साहित करता है। जोशके साथ काम करनेसे अत्यन्त साधारण कामोंमें भी गौरव आ जाता है। सबसे अधिक सारगर्भित काम बहुधा वही होता है जो भरपूर उत्साहके साथ किया जाता है और जो ऐसे मनुष्यके हाथोंके या मस्तकके द्वारा होता है जिसका चित्त प्रसन्न रहता है। ह्यूम कहा करते थे कि " मुझे प्रसन्नचित्त रहना पसन्द है, परन्तु लाख रुपयेकी आमदनीवाली जायदादका मालिक बनकर भी उदास रहना पसन्द नहीं है। "

ग्रीनविल शार्प दिन भर सख्त मेहनत करके शामके वक्त गाना गाकर और बाजा बजाकर अपना जी खुश किया करते थे। फक्सवेल बक्सटन भी बड़े प्रसन्नचित्त रहते थे। उन्हें मैदानोंमें जाकर तरह तरहके खेल खेलना बहुत पसन्द था। वे अपने बच्चोंको साथ लेकर घोड़ेकी सवारी किया करते थे और उनके साथ सब तरहके घरेलू खेलोंमें शरीक होते थे।

डाक्टर आर्नल्ड एक उत्तम कर्मवीर थे। वे बड़ी प्रसन्नता और उत्साहके साथ काम करते थे। उन्होंने अपना सारा जीवन नौजवानोंको शिक्षा देनेमें लगा दिया। वे अपना काम मन लगाकर करते थे। उनकी मंडलीके सभी लोग प्रसन्नचित्त होकर काम करते थे। जो नया मनुष्य उनकी मंडलीमें जाता था

उसको तुरन्त ही अनुभव होता था कि यहाँपर कोई बड़ा काम बहुत उत्साहके साथ हो रहा है। उस मंडलीके हरएक शिष्यको अनुभव होता था कि मेरे लिए यहाँपर काम मौजूद है और उस कामको करना मेरा कर्तव्य है; मेरा सुख भी उसीपर निर्भर है। इस तरह वहाँ प्रत्येक युवकमें काम करनेका उत्साह पैदा हो जाता था। उसको यह जानकर बड़ी खुशी होती थी कि मैं भी कुछ काम करके दूसरोंका उपकार कर सकता हूँ और इसलिए मेरा जीवन आनन्दमय हो सकता है। उसको अपने शिक्षक (डाक्टर आर्नल्ड)से प्रेम हो जाता था और वह उनका आदर करता था, क्योंकि डाक्टर आर्नल्ड उसको जीवनकी कदर करना और आत्म-सम्मान करना सिखलाते थे और यह बतलाते थे कि संसारमें रहकर उसको क्या काम करना चाहिए और उसके जीवनका क्या उद्देश होना चाहिए। आर्नल्डके विचारोंमें संकीर्णता न थी। उनके विचार बड़े उदार और सच्चे थे। वे हरतरहके कामकी कदर करना जानते थे और किसी भी कामको बुरा न समझते थे। वे समाजके लिए और पृथक् पृथक् मनुष्यके लिए हरएक कामकी उपयोगिताको खूब समझते थे। आर्नल्डने जनसेवाके लिए बहुतसे मनुष्योंको तैयार किया था। उनमेंसे एक महाशय भारतवर्षमें भी आये थे। उन्होंने अपने एक पत्रमें अपने पूज्य शिक्षकके विषयमें यह लिखा था:—" उन्होंने मेरे ऊपर जो प्रभाव डाला है उसके बड़े स्थायी और महत्त्वपूर्ण परिणाम हुए हैं। उस प्रभावको मैं भारतवर्षमें भी अनुभव करता हूँ; इससे अधिक और क्या लिखूँ!"

जो मनुष्य सच्चे दिलसे और उत्साहके साथ परिश्रम करता है वह अपने पड़ौसियों और अधीनोंपर बड़ा अच्छा प्रभाव डालता है और बहुत कुछ स्वदेशसेवा कर सकता है। इस बातका उदाहरण सर जान सिंक्लेरके जीवनसे बढ़कर शायद ही कहीं मिल सके। सर जान सिंक्लेरके विषयमें एक महाशयने कहा है कि " उनके बराबर बिना थके हुए परिश्रम करनेवाला मनुष्य समस्त यूरोपमें कोई न था।" सर जान सिंक्लेर एक जमींदार थे। उनकी जमींदारी स्काटलेण्डके एक ऐसे जिलेमें थी जिसमें सभ्यताकी हवा भी न पहुँची थी। वह जिला समुद्रके किनारे था और उसमें जंगल और पहाड़ोंकी भरमार थी। जब सर जान सिंक्लेर सोलह वर्षके हुए तब उनके पिताका देहान्त हो गया, इस लिए उनको छोटी उम्रसे ही अपनी

जमींदारीका प्रबंध करना पड़ा। जब वे अठारह वर्षके हुए तब उन्होंने अपनी जमींदारीकी उन्नति करने पर कमर कसी और अंतमें वह इस सीमापर पहुँच गई कि सारे स्काटलेण्डका सुधार उसीके प्रभावसे हो गया। उस समय खेतीकी बहुत ही बुरी दशा थी। न खेतोंके चारों तरफ मेंड़ बनाई जाती थी और न सिंचाईका ही कुछ ठीक प्रबंध था। छोटे छोटे किसान ऐसे दरिद्र थे कि वे एक घोड़ा भी बड़ी कठिनाईसे रख सकते थे। मेहनतका काम जियादातर स्त्रियाँ करती थीं और वे ही बोझा ढोनेका काम करती थीं। यदि किसी किसानका घोड़ा मर जाता था अथवा खो जाता था, तो वह प्रायः किसी स्त्रीसे विवाह कर लेता था; क्योंकि स्त्री सस्ती पड़ती थी और घोड़ेका सा काम देती थी। उस जिलेमें न तो सड़कें थीं और न पुल; नदियाँ पार करनेके लिए चरवाहोंको अपने पशुओं सहित नदियोंमे तैरना पड़ता था। उस जिलेमें आने जानेके लिए जो खास रास्ता था वह एक ऊँचे पहाड़ पर होकर था। यह रास्ता पहाड़ पर खड़ा चला गया था। इसलिए चढ़नेमें बहुत मेहनत पड़ती थी और नीचे समुद्र लहरें मारता था। यद्यपि अभी सर जान सिंक्लेरने युवावस्थामें ही कदम रक्खा था, तो भी उन्होंने पहाड़ पर एक नई सड़क बनानेका संकल्प कर लिया। कुछ जमींदारोंका खयाल था कि यह काम नहीं हो सकता और इस लिए वे लोग इस कामसे नफरत करते थे; परन्तु सर जानने स्वयं उस सड़कके लिए पहाड़ पर चिह्न बनाये और उन्होंने एक दिन सबेरे लगभग १२०० मजदूर इकट्ठे करके उनको ही एक साथ काम पर लगा दिया। वे मजदूरोंके कामकी देख-भाल स्वयं करने लगे और उनको अपनी मौजूदगी और अपनी मेहनतसे उत्साहित करने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि रात होनेसे पहले ही पहले वह रास्ता, जो बड़ा भयानक समझा जाता था और छः मील लम्बा था, गाड़ियोंके आने जानेके लायक हो गया—मानों यह सब काम देखते ही देखते जादूसे हो गया। इस काममें सर जानने विचित्र उत्साह दिखलाया और मजदूरोंसे बड़ी उत्तम रीतिसे काम लिया। अतएव इस उदाहरणका आसपासके रहनेवालोंपर अत्यन्त लाभदायक प्रभाव पड़े बिना न रहा। इसके बाद सर जानने और भी कोई सड़कें बनवाईं, मिल स्थापित किये, पुल बनवाये और पड़ती जमीनमें खेती करना शुरू कर दिया। उन्होंने खेती करनेके नये नये और उत्तम

तरीके जारी किये, फसलोंका क्रम बाँध दिया और लोगोंमें उद्योग-धंधोंका शौक पैदा करनेके लिए उनको थोड़ा थोड़ा रुपया भी दिया। इस तरह सर जानका जहाँ तक प्रभाव पड़ सका वहाँ तक उन्होंने सब लोगोंमें जागृति पैदा कर दी और किसानोंमें एक बिलकुल नया जोश फैला दिया। वह जिला जिसमें अबतक पहुँचना भी बहुत कठिन था और जिसको सभ्यताकी हवा सबसे कम लगी थी अब अपनी सड़कों और काश्तकारीके कारण दूसरोंके लिए नमूना बन गया। सर जानके युवाकालमें सप्ताहमें केवल एक बार डाक आती थी, परन्तु अब सर जानने संकल्प कर लिया कि मैं ऐसा प्रबंध करके छोड़ूँगा जिससे यहाँ पर डाककी गाड़ी हर रोज आया करे। पड़ौसियोंको विश्वास था कि यह बात कभी न हो सकेगी। यहाँ तक कि यह बात एक कहावत सी हो गई थी। जब कभी किसी असंभव बातका जिक्र आता तब लोग कह उठते थे कि "अजी, यह बात तो तभी होगी जब सर जानके कथनानुसार हर रोज डाक आने लगेगी!" परन्तु सर जानके जीवन-कालमें ही उनकी इच्छा पूरी हो गई और डाक हर रोज आने लगी।

अब सर जानने अपने उपकारकी सीमाको धीरे धीरे बढ़ाना शुरू किया। उन्होंने देखा कि ऊन, जो उस देशकी एक मुख्य पैदावार थी, घटिया होती जाती है। बस उन्होंने ऊनकी उन्नति करनेपर कमर बाँध ली। उन्होंने अपने निजी उद्योगसे 'दि ब्रिटिश वुल सोसायटी' नामक सभा इस कामके लिए स्थापित की और वे अपने निजी खर्चसे अनेक देशोंसे ८०० उत्तम भेड़ें मँगाकर उन्नतिके मार्गमें अग्रसर हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि उन भेड़ोंसे जो मैंमने पैदा हुए उनसे स्काटलेण्डमें भेड़ोंकी एक प्रसिद्ध नस्ल (वंश) की जड़ जम गई। भेड़ोंकी संख्या भी कुछ वर्षोंमें इतनी हो गई कि उनके कारण चरागाहोंका मूल्य बढ़ गया और जो जमीन पहले बेकार पड़ी रहती थी वह बहुत लगानपर उठने लगी।

उस जिलेके निवासियोंने सर जानको राजसभा (पार्लियामेंट) में भेजनेके लिए अपना प्रतिनिधि चुना और वे तबसे तीस वर्ष तक राजसभाके मेम्बर रहे। इस पदपर रहनेसे उनको परोपकार करनेके और भी अनेक मौके मिले, जो उन्होंने हाथसे न जाने दिये। एक बार राज-मंत्री मिस्टर पिट यह

जानकर बड़े खुश हुए कि सर जान जनसेवाके लिए धैर्यपूर्वक कितना उद्योग करते हैं। उन्होंने सर जानको बुलाकर कहा कि "आप जो बात चाहें उसीमें मैं आपकी सहायता करनेको तैयार हूँ।" यदि और कोई होता तो इस समय वह अपनी उन्नति या अपने लाभकी इच्छा प्रगट करता; परन्तु सर जानने अपने स्वभावके अनुसार उत्तर दिया कि "मैं अपने लिए कोई अनुग्रह नहीं चाहता। मुझे तो सबसे जियादा खुशी इस बातमें है कि आप एक कृषि-संबंधी जातीय परिषद् स्थापित करनेमें मुझे सहायता दें।" पिटने इस बातकी बाजी बद ली कि ऐसा परिषद् कभी स्थापित नहीं हो सकता; परन्तु सर जानने कठिन परिश्रम करके जनसाधारणका ध्यान इस ओर आकर्षित किया और राजसभाके अधिकांश सदस्योंको अपने पक्षमें कर लिया। अन्तमें सर जान इस परिषद्के स्थापित करनेमें सफल हुए और वे स्वयं उसके सभापति नियत किये गये। इस परिषद्से कितना लाभ हुआ इसके लिखनेकी यहाँ जरूरत नहीं है, परन्तु उससे कृषिसंबंधी ऐसा जोश फैला कि करोड़ों एकड़ जमीन जो पहले बंजर पड़ी थी उपजाऊ बना ली गई।

सर जान जिस कामको हाथमें लेते थे उसमें स्वयं उत्साह दिखाते थे जिससे बेकार मनुष्योंमें जागृति पैदा होती थी, आलसी मनुष्योंमें जोश पैदा होता था और आशायुक्त मनुष्योंमें उत्साह पैदा होता था। वे और लोगोंके साथ खुद भी काम किया करते थे। एक बार जब यह खबर लगी कि फ्राँसवाले इँग्लेण्डपर आक्रमण करनेवाले हैं तब सर जानने मिस्टर पिटसे कहा कि "मैं अपने जिलेमेंसे एक अच्छी सेना तैयार करूँगा आशा है कि आप उसे अवश्य स्वीकार करेंगे।" इसके बाद सर जानने ६०० आदमियोंकी एक पलटन तयार की। थोड़े ही समयमें इस पलटनमें १००० सैनिक हो गये और यह स्वयं-सेवकोंकी अति उत्तम सेना समझी जाने लगी। इस पलटनके सैनिकोंमें सर जानके ही समान देशभक्तिका भाव भरा हुआ था। सर जानने कई तरहके काम अपने हाथमें ले रक्खे थे, परन्तु फिर भी उनको पुस्तकें लिखनेका समय मिल जाता था। इन पुस्तकोंसे उन्होंने बड़ा यश लाभ किया। उन्होंने जिस विषयपर पुस्तक लिखी वह उस विषयकी सर्वोत्तम पुस्तक समझी जाने लगी। उनकी एक पुस्तक ११ जिल्दोंमें समाप्त हुई। इस पुस्तकमें स्काटलेण्डके निवासियोंकी जन-संख्या और पेशे

इत्यादिका संपूर्ण विवरण दिया हुआ है। इस पुस्तकके लिखनेमें सर जानको लगभग आठ वर्षतक कठिन परिश्रम करना पड़ा और उसके संबंधमें बीस हजार चिट्ठियाँ लिखनी पड़ीं। उन्होंने यह पुस्तक केवल देश-सेवाके लिए लिखी। इस पुस्तकके लिखनेसे उनकी नामवरी तो अवश्य हुई, परन्तु इसके सिवाय उनको और कोई निजी लाभ न हुआ। पुस्तककी विक्रीसे जो आमदनी हुई वह सब उन्होंने धर्मप्रचारके लिए एक सभाको दे दी। इस पुस्तकके प्रकाशनसे सर्वसाधारणको बहुत लाभ हुआ; क्योंकि उसकी सहायतासे स्काटलेण्डमें कृषि-शिक्षा इत्यादिके संबंधमें अनेक सुधार किये गये।

सर जानने एकबार एक संकटके समयमें व्यापारियोंकी बड़ी सहायता की, जिससे उनकी कार्यकुशलता और उत्साहका अच्छा परिचय मिलता है। सन् १७८३ ईसवीमें युद्धके कारण व्यापारका काम ऐसा बंद हुआ कि सैकड़ों सौदागरोंके दिवाले निकल गये और मैनचैस्टर और ग्लासगोकी बहुत सी बड़ी बड़ी कोठियों (मालगोदामों) का काम चौपट होने लगा। इसका कारण यह न था कि उनके पास माल न हो, किन्तु युद्धके कारण व्यापारके सब मार्ग बंद हो रहे थे। ऐसी हालतमें मजदूरोंके ऊपर बड़ी भारी विपत्तिका आना अनिवार्य था। सर जानने राज-सभामें प्रस्ताव किया कि पचास लाख पौंड (साढ़े सात करोड़ रुपये) के नोट तुरन्त ही ऐसे सौदागरोंको उधार दे दिये जायँ जो जमानत दे सकते हों। यह प्रस्ताव पास हो गया और यह बात भी स्वीकार कर ली गई कि सर जान और कुछ सौदागर इस कामको अपने हाथमें ले लें। उस दिन इस प्रस्तावके पास होते होते रात हो गई और दूसरे दिन सर जानने यह समझ कर कि सरकारी कामोंमें देर लगा करती है उस नगरके सेठोंसे साढ़े दस लाख रुपया अपनी जमानत पर कर्ज लेकर उसी दिन शामको उन सौदागरोंके पास भेज दिया जिनको सहायता की सबसे जल्दी जरूरत थी। पिटको इस बातकी क्या खबर थी? उन्होंने दूसरे दिन राजसभामें सर जानसे मिलकर बड़ा खेद प्रगट किया और कहा कि "रुपयेकी जितनी जल्दी जरूरत है उतनी जल्दी इकट्टा नहीं हो सकता और अभी कई दिनों तक ठहरना पड़ेगा।" सर जानने खुशीके साथ जवाब दिया कि "रुपया तो यहाँसे आज ही शामको रवाना कर दिया गया!" इस बातको सुनकर पिट ऐसे चौंके कि मानों सर जानने उनके छुरी भोंक दी हो। सर जान अन्त

तक इसी तरह प्रसन्नता और उत्साहके साथ उपयोगी काम करते रहे और अपने कुटुम्ब और देशके लिए बहुत अच्छा उदाहरण छोड़ गये। दूसरोंके लिए भलाई करनेसे उनका भी कल्याण हुआ। यद्यपि उनको धन नहीं मिला; क्योंकि वे ऐसे उदारचित्त थे कि उन्होंने अपनी निजी सम्पत्तिमेंसे भी देश-हितके लिए बहुत सा रुपया खर्च कर डाला था। किन्तु उनको सुख, आत्म-संतोष और शान्ति मिली जो धनसे भी बढ़कर होती है। वे बड़े स्वदेशभक्त थे और उनमें काम करनेकी विचित्र शक्तियाँ थीं। यद्यपि वे देशसेवामें लगे रहते थे तो भी उन्होंने अपने कुटुम्बकी ओरसे अपनी आँख न फेरी। उन्होंने अपने पुत्र और पुत्रियोंको खूब शिक्षा दी जिससे उन्होंने भी बहुत परोपकार किया और बड़ा नाम कमाया।

बारहवाँ अध्याय।

सदाचार और सुजनता।

विदेशेषु धनं विद्या व्यसनेषु धनं मतिः।
परलोके धनं धर्म्मः शीलं सर्वत्र वै धनम्[1]॥—सुभाषितावलिः।

हरएक बात—जैसे हमारी रक्षा, जातिकी प्रतिष्ठा, प्रत्येक मनुष्यका गौरव एक एक मनुष्यके चरित्र प्रभाव पर अवलम्बित है।...जो मनुष्य किसी अच्छे पद पर पहुँचकर यह भूल जाता है कि मैं सज्जन हूँ वह देशको बड़ी हानि पहुँचाता है। निर्दोष जीवनवाले दश मनुष्य देशको जितना लाभ पहुँचा सकते हैं वह अकेला उस लाभसे अधिक हानि पहुँचाता है।—लार्ड स्टेन्ले।

चरित्र मनुष्यका सर्वस्व है। मनुष्यके अधिकारमें जितनी चीजें हैं उनमें सबसे बढ़कर चरित्र है। सदाचार एक तरहका पद है। सदाचारी मनुष्यके लोग शुभचिन्तक होते हैं। मनुष्यकी दशा चाहे कैसी भी हो, परन्तु सदाचार उस दशाको गौरववान् बना देता है। सदाचारमें धनसे भी

---

१ विद्या परदेशमें धन है, बुद्धि आपत्तिमें धन है, धर्म परलोकका धन है, पर चरित्र सब जगह धनका काम देता है।

अधिक शक्ति होती है। सदाचारी मनुष्यको सब तरहकी प्रतिष्ठा मिल जाती है और उससे कोई ईर्षा या द्वेष नहीं करता। सदाचारी मनुष्यके चरित्रका प्रभाव दूसरोंपर अवश्य पड़ता है, क्योंकि सब लोग यह जानते हैं कि वह ईमानदारीका व्यवहार करता है और उसे अपनी इज्जतका खयाल है। जिस मनुष्यमें ये गुण होते हैं उसका सर्वसाधारण सबसे जियादा आदर और विश्वास करते हैं।

सदाचार मनुष्यकी प्रकृतिका सर्वोत्तम रूप है। सदाचार धर्मनिष्ठतासे उत्पन्न होता है। सदाचारी मनुष्य समाजके अंतःकरण होते हैं। इसके सिवाय प्रत्येक अच्छे राज्यका काम-काज सदाचारी मनुष्योंद्वारा ही सबसे अच्छी तरह चल सकता है; क्योंकि असलमें सदाचार ही संसार पर शासन करता है। नैपोलियनने युद्धमें भी कहा था कि "सदाचार शारीरिक बलसे दश गुना अच्छा है।" जातियोंका बल, उनका परिश्रम और उनकी सभ्यता सभी बातें मनुष्यके चरित्रपर निर्भर हैं। सदाचार हमारी रक्षाका मूलाधार है। कायदे कानून भी सदाचारके आधार पर बनाये जाते हैं–वे कोई नई चीज नहीं हैं। न्यायशीला प्रकृतिके दरबारमें व्यक्तियोंको, राष्ट्रोंको और जातियोंको उनकी योग्यताके अनुसार फल मिलता है—योग्यतासे जियादा किसीको एक हब्बा भी नहीं मिलता। यह नियम है कि जैसा कारण होता है वैसा ही उसका परिणाम होता है। इसी नियमके अनुसार जातिका चरित्र जैसा होगा फल उसको वैसे ही मिलेंगे।

यदि किसी मनुष्यने शिक्षा कम पाई हो, उसकी शक्तियाँ हीन हों और उसके पास धनकी मात्रा भी कम हो तो कुछ हरज नहीं है; यदि उसका चरित्र उत्कृष्ट श्रेणीका है, तो सब जगह उसका आदर होगा—दूसरोंपर उसका प्रभाव अवश्य पड़ेगा। सन् १८०१ ईसवीमें कैनिंगने लिखा था कि "मैं शक्ति प्राप्त करनेके लिए सदाचारके मार्गपर चलूँगा। मैं किसी दूसरे मार्गपर जानेकी चेष्टा न करूँगा। मुझे विश्वास है कि सदाचारके मार्गपर चलनेसे यद्यपि देरमें सफलता होती है, परन्तु होती जरूर है।" फ्रैंक्लिनको सर्व साधारणके नेता बननेमें जो सफलता हुई उसका कारण यह न था कि उनकी योग्यता बहुत बढ़ी चढ़ी हो अथवा वे अच्छे वक्ता हों–उनमें ये बातें तो औसत दरजेकी ही थीं; परन्तु उनका चरित्र बहुत ही अच्छा था और

यही उनकी सफलताका कारण था। उनका कथन है कि "सदाचारकी वजहसे ही मेरे साथी मेरा कहना मानते थे। मुझमें बोलनेकी तो शक्ति ही न थी; मैं कभी सुललित व्याख्यान न दे सकता था, बोलनेके वक्त न तो मुझे अच्छे शब्द ही मिलते थे और न मैं शुद्ध भाषा ही बोल सकता था; परन्तु इसपर भी मेरी ही बात बड़ी रहती थी।" सदाचारसे छोटे बड़े सभी दूसरोंके विश्वासपात्र बन सकते हैं। रूसके सम्राट् एलैग्जेंडर प्रथमके विषयमें कहा जाता है कि "उनका चरित्र एक राज्यके कानूनोंके समान दृढ़ और अटल था—उसमें जरा भी अन्तर न पड़ सकता था।" जब फ्रोडीका युद्ध जारी था तब फ्रांसके रईसोंमें **मोनटेन** ही एक ऐसा मनुष्य था जो अपने किले (कोठी) के फाटकोंको खुला रखता था। उसके विषयमें लोग कहा करते थे कि "उसका चरित्र उसकी रक्षा करनेमें एक अच्छी घुड़सवार सेनासे भी बढ़कर है!"

सदाचारकी शक्ति ज्ञानकी शक्तिसे कहीं बढ़कर है। हृदयकी कोमलताके बिना विचार-शक्ति, सदाचारके बिना बुद्धिमत्ता और सुजनताके बिना चतुराई, शक्तियाँ तो हैं परन्तु इन शक्तियोंसे केवल अनर्थ किया जा सकता है। हम उनसे शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं अथवा मनोविनोद कर सकते हैं; परन्तु उनकी प्रशंसा करना कभी कभी ऐसा ही होता है जैसे किसी गिरहकटकी चतुराई अथवा किसी डाँकूकी घोड़ेकी सवारीकी प्रशंसा करना।

सचाई, ईमानदारी और सुजनता सच्चरित्रताकी जड़ है। जिस मनुष्यमें ये गुण हों और इनके साथ दृढ़ संकल्प करनेकी शक्ति भी हो, उसमें ऐसा बल आ जाता है जो किसीके रोके नहीं रुकता। वह परोपकार करने, पापसे बचने और आपत्ति सहन करनेके लिए बलवान् हो जाता है। जब कलोनाका निवासी **स्टीफिन्सन** अपने बैरियोंके हाथ कैद हो गया तब उन्होंने उससे घृणाके साथ मुँह बनाकर पूछा कि "अब तुम्हारा किला कहाँ है?" स्टीफिन्सनने अपने हाथको अपने हृदयपर रखकर कहा कि "यहाँ है।" जब ग्रीसके सम्राट् सिकंदरने पंजाबके राजा पोरसको हराकर कैद कर लिया तब सिकंदरने पोरस (पुरु) से पूछा कि "अब तू मेरे अधिकारमें है। बोल अब तेरे साथ कैसा व्यवहार करूँ?" पोरसने उत्तर दिया कि "जैसा राजा राजाओंके साथ करते हैं।" यह उत्तर पोरसके चरित्र-बलका साक्षी है। इसे

सुन कर सिकन्दरने पोरसको क्षमा कर दिया और उसका सारा जीता हुआ राज्य फेर दिया। आपत्तिके समयमें सत्यशील मनुष्यका चरित्र अत्यन्त तेजके साथ प्रकाशित होता है और जब कोई भी चीज काम नहीं आती तब वह अपनी सत्यपरता और साहसके बलपर खड़ा रहता है।

लार्ड इर्सकिनके विचार बड़े ही स्वतंत्र थे। वे जिन चरित्रके नियमोंके अनुसार चलते थे वे ऐसे अच्छे हैं कि उनको हर एक युवकको अपने हृदय पर अंकित कर लेना चाहिए। वे कहा करते थे कि "शुरू जवानीमें मैंने पहले पहल यही सीखा था कि मैं अपने भले बुरे समझनेवाले अंतःकरणकी आज्ञाके अनुसार कर्तव्यपालन करूँ और अपने कामोंके फलको परमात्मा पर छोड़ दूँ। मैं इस उपदेशको जीवनपर्यंत याद रक्खूँगा और सदैव इसीके अनुसार चलूँगा। मैंने अब तक इसी उपदेशके अनुसार काम किया है। मुझे कभी यह शिकायत करनेका मौका नहीं मिला कि इस उपदेशके अनुसार चलनेसे मुझे कोई लौकिक हानि हुई है; बल्कि इस उपदेशके अनुसार चलनेसे मुझे उन्नति और धनकी प्राप्ति हुई है और मैं अपने बच्चोंको भी इसी मार्गपर चलनेकी शिक्षा दूँगा।"

जीवनका एक सबसे बड़ा उद्देश यह है कि मनुष्य अपने चरित्रको अच्छा बनावे। इस उद्देशकी प्राप्तिके लिए प्रयत्न करनेसे ही मनुष्यमें उत्साह पैदा हो जायगा और मनुष्यत्वकी महत्ताको वह ज्यों ज्यों समझता जायगा त्यों त्यों उसका उत्साह सजीव और दृढ़ होता जायगा। जीवनका उद्देश ऊँचा होना चाहिए, चाहे हम वहाँ तक पहुँच न सकें। मिस्टर डिजरेलीने कहा है कि "जो युवक ऊपरकी तरफ न देखेगा वह नीचे देखने लगेगा। क्योंकि जो आत्मा ऊँचे विषयोंमें आनन्द नहीं पाता वह नीचे विषयमें मग्न हुए बिना नहीं रह सकता। अर्थात् जो मनुष्य ऊँचा उद्देश नहीं रखता वह अवश्य ही नीचा हो जाता है। जार्ज हर्बर्टने कैसी बुद्धिमानीकी बात कही है:—"दूसरोंके साथ नम्रताका बर्ताव करो और अपने उद्देश ऊँचे रक्खो। ऐसा करनेसे तुम विनयशील और उदारचित्त हो जाओगे। अपने भावोंको नीच न बनाओ। जो मनुष्य आकाशको लक्ष्य करके निशाना मारता है उसका तीर उस मनुष्यसे बहुत ऊँचा जाता है जो वृक्षको निशाना मान कर तीर चलाता है।" जिस मनुष्यके जीवनका उद्देश ऊँचा है वह उस मनुष्यसे अवश्य अच्छा रहेगा

जिसका कोई उद्देश ही नहीं है। जो कोई सर्वोत्तम फल पानेकी चेष्टा करता है वह पहलेकी अपेक्षा बहुत जियादा उन्नति कर लेता है। यह संभव है कि हम जितनी सफलता प्राप्त करना चाहते हों उतनी न पासकें, परन्तु फिर भी उन्नति करनेके लिए जो चेष्टा की जाती है वह सदैवके लिए लाभदायक हुए बिना नहीं रहती।

कुछ मनुष्य खोटे सिक्केके समान ऊपरी दृष्टिसे देखनेमें तो सदाचारी मालूम पड़ते हैं परन्तु वे असलमें नहीं होते। असली चीजको पहचानना कठिन नहीं है। कुछ लोग सदाचारकी आड़में धन प्राप्त करनेके लिए भोले मनुष्योंको धोखा दिया करते हैं। कर्नल चार्टेरिसने एक मनुष्यसे जो ईमानदारीके लिए प्रसिद्ध था, एक बार कहा था कि "यदि तुम मुझे अपने नामका प्रयोग कर लेने दो, तो मैं इसके बदले तुम्हें एक हजार मुहरें दे सकता हूँ।" ईमानदार मनुष्यने पूछा, "यह क्यों?" उसने उत्तर दिया, "क्योंकि मैं तुम्हारे नामसे दस हजार मुहरें पैदा कर सकता हूँ।"

सदाचारका मूलाधार इसी बात पर है कि मनुष्य जो बात कहे अथवा जो काम करे उसमें ईमानदारीका बर्ताव करे। सत्यपोषण सदाचारका प्रधान अंग है। सर राबर्ट पीलकी मृत्युके बाद वैलिंगटनने एकबार राजसभामें सर राबर्टके चरित्रकी इस प्रकार प्रशंसा की थीः—" आप सबोंको सर राबर्ट पीलकी सच्चरित्रताका अनुभव हुआ होगा। जनसाधारणसे संबंध रखनेवाले कामोंमें मेरा और उनका बहुत दिनों तक साथ रहा था। हमारे सम्राट् हम दोनोंसे एक साथ सम्मति लिया करते थे। मुझे सर राबर्टके मित्र होनेका सौभाग्य बहुत दिनों तक रहा है। जब तक मेरी उनसे जान पहिचान रही तब तक मुझे कोई मनुष्य ऐसा न मिला जिसमें समाजसेवा करनेकी उनसे अधिक प्रबल इच्छा हो। जब तक मेरा संबंध उनके साथ रहा तब तक मैंने उनकी एक बात भी ऐसी न देखी जिसमें उन्होंने सत्य पर अत्यन्त प्रेम न दिखाया हो; और मुझको अपने समस्त जीवनमें कभी यह शंका न हुई कि उन्होंने कोई ऐसी बात कही हो जिसके सच होनेपर उन्हें दृढ़ विश्वास न हो।" निस्संदेह इसी उदारता और सत्यशीलताके कारण सर राबर्टका दूसरोंपर बड़ा प्रभाव पड़ता था।

स्वर्गीय मुंशी गंगाप्रसाद वर्माके विषयमें भी यही बात कही गई थी । उनकी मृत्युपर शोक करनेके लिए प्रयागमें एक सभा हुई थी । उसमें संयुक्तप्रान्तके शिक्षाविभागके डायरेक्टर माननीय मिस्टर सी. एफ. डीला-फोसने कहा था कि " मुन्शी गंगाप्रसाद वर्माकी सफलताका गुप्त रहस्य क्या था ? वह कौनसी बात थी जिससे उन्होंने सरकारी और जनसाधारणसंबंधी कामोंमें सफलता प्राप्त की थी ? इसका उत्तर यह है कि वे अपने चारित्रिक बल और प्रभावसे, अपनी पक्की ईमानदारीसे और सार्वजनिक हितके प्रत्येक काममें योग देनेसे सबोंके विश्वासपात्र बन गये थे । मेरा खयाल है कि आज तक किसीको यह कहनेका साहस नहीं हुआ कि सार्वजनिक कामोंमें वे स्वलाभकी नीच इच्छासे योग देते हों । हरएक काममें जो वे करते थे—चाहे वह ठीक हो या गलत—उनकी सच्चाईपर किसीको संदेह न होता था । वे जो कुछ कहते या करते थे उसको सच जानकर कहते या करते थे ।"

सच्चरित्र बननेके लिए यह जरूरी है कि हम जो काम करें और जो बात कहें उसमें सच्चाई हो । मनुष्यको वास्तवमें भी वैसा ही होना चाहिए जैसा वह दूसरोंको मालूम होता है । उसका चरित्र ऊपर और भीतर एक सा होना चाहिए । उसके पास दूसरोंके दिखानेके लिए बाह्य आडम्बर न होना चाहिए । अमेरिकाके एक सज्जनने ग्रेनविल शार्पको लिखा कि "मैंने तुम्हारे सद्गुणोंके कारण अपने पुत्रका नाम तुम्हारे ही नामपर रक्खा है।" शार्पने उत्तर दिया कि " मैं जोर देकर तुमसे अनुरोध करता हूँ कि जिस कुटुम्बका नाम तुमने अपने पुत्रको दिया है उस कुटुम्बकी यह प्यारी उक्ति भी उसको सिखा देना कि तुमको वास्तवमें भी वैसे ही होनेकी सदा कोशिश करनी चाहिए जैसा तुम दूसरोंके सामने अपने आपको प्रकट करना चाहते हो । मेरे पिता मुझसे कहा करते थे कि तुम्हारे पितामहने इस उक्तिका बड़ी सावधानी और नम्रताके साथ पालन किया था । इसीके कारण वे ऐसे खरे और ईमानदार हो गये कि ये गुण उनके चरित्रके प्रधान अंग बन गये थे । वे जिस तरह अपने साथ उसी तरह दूसरोंके साथ भी हमेशा ईमानदा-रीका वर्ताव करते थे ।" जो अपनी कदर करता है और दूसरोंकी कदर करना जानता है वही मनुष्य इस उक्तिके अनुसार चल सकता है । ऐसा मनुष्य जो काम करेगा वह ईमानदारीके साथ और उत्तम भावोंसे करेगा । वह टालम-

टोल न करेगा, किन्तु अपनी ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठता पर अभिमान करेगा। जो मनुष्य कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं उनका आदर सत्कार नहीं होता और उनकी बात भी नहीं मानी जाती। उनके मुँहसे निकली हुई सच्ची बात भी कमजोर मालूम होती है।

सदाचारी मनुष्य अकेलेमें भी और दूसरेके सामने भी ईमानदारीके साथ काम करता है। एक बार एक लड़का अपने पड़ौसीके घर गया। जब वह वहाँ पहुँचा तो उसने देखा कि उस घरमें कोई नहीं है। एक तरफ एक डलिया सेबोंसे भरी हुई रक्खी थी, परन्तु उसने उन सेबोंमें हाथ भी न लगाया। जब पड़ौसी आया तो उसने पूछा, "तुमने सेब क्यों न चुराये? यहाँ कोई देखनेवाला तो था नहीं!" लड़केने उत्तर दिया कि "देखनेवाला था क्यों नहीं? मैं स्वयं ही तो देखनेवाला था और मैं अपने आपको कोई बेईमानीका काम करते हुए नहीं देखना चाहता।" यह एक साधारण उदाहरण है, परन्तु यह दिखलानेके लिए काफी है कि वह लड़का विवेकबुद्धिके अनुसार चलता था। विवेकबुद्धिने उस लड़केके चरित्र पर अधिकार जमा लिया था और वह उस पर शासन करती थी। यह बुद्धि प्रति दिन और प्रति घंटे चरित्रको सुधारती रहती है। उसमें एक ऐसी शक्ति होती है जो क्षणक्षणपर अपना प्रभाव डालती रहती है। विवेकबुद्धिके शक्तिशाली प्रभावके बिना चरित्रकी रक्षा नहीं हो सकती। इसके बिना मनुष्य प्रलोभनोंमें फँसता जाता है और उसका चरित्र धीरे धीरे निकम्मा होता जाता है। प्रलोभनोंमें फँसनेसे अथवा कोई नीचता या बेईमानीका काम करनेसे—चाहे वह काम कितना ही छोटा हो—मनुष्यकी अधोगति होती जाती है। ऐसे काममें चाहे सफलता हो या न हो, चाहे वह काम छिपा रहे या दूसरों पर प्रगट हो जाय परन्तु यह बात जरूर है कि उस कामका करनेवाला पहला सा नहीं रहता, एक दूसरा ही मनुष्य हो जाता है। उसके दिलमें अशान्ति पैदा हो जाती है। वह आत्मधिक्कारका शिकार बन जाता है, या यों कहिए कि उसका अंत:करण उसको फटकारा करता है।

यहाँ पर यह जान लेनेका मौका है कि अच्छी आदतें डालनेसे चरित्र कितना पुष्ट होता है। कहा जाता है कि आदमी आदतोंकी गठरी है। मनुष्यकी आदतें वही असर रखती हैं जो उसकी प्रकृति। किसी कामको बार

ार करनेसे या किसी बातको बार बार सोचनेसे कुछ ऐसी शक्ति आ जाती है। एक विद्वान्का मत है कि "मनुष्यमें जो कुछ है वह आदत है, यहाँ-तक कि सदाचार भी आदत है।" बटलरने कहा है कि "मनुष्यके लिए यह बहुत जरूरी है कि वह अपने आपको वशमें रक्खे और प्रलोभनोंका दृढ़ताके साथ सामना करे। ऐसा करनेसे सदाचारकी आदत पड़ जाती है, यहाँ तक कि अंतमें उसके लिए कुकर्म करनेकी अपेक्षा सच्चरित्र बनना अधिक सुगम हो जाता है। शरीरसंबंधी आदतें बाहरी कार्मोसे बनती हैं। इसी तरह मानसिक आदतें दो तरहसे बनती हैं; एक तो हमारी आन्तरिक इच्छायें भली या बुरी जैसी हों उन्हींके अनुसार चलनेसे और दूसरे आज्ञा-पालन, सत्यशीलता, न्यायपरायणता और दयालुताके नियमोंके अनुसार इच्छा करनेसे।" आदत डालनेसे हरएक काम सुगम हो जाता है और कठिनाइयाँ हट जाती हैं। यदि आप संयमके आदी हो जायँ, तो आपको असंयमसे घृणा हो जायगी। यदि आप विवेक और विचारपूर्वक काम करनेकी आदत डाल लें, तो आप दुराचारके पास न फटकेंगे। इस लिए हमको इस विषयमें बहुत सावधान रहना चाहिए कि हमारे ऊपर कोई बुरी आदत हमला न करने पावे; क्योंकि चरित्र उस जगह पर हमेशा निर्बल हो जाता है जहाँ पर वह एक बार क्षीण हो चुकता है; और यदि हम किसी नियमको फिरसे स्थापित करें, तो वह बहुत दिनोंमें उतना दृढ़ हो पाता है जितना वह नियम जो कभी तोड़ा नहीं गया। एक रूसी विद्वान्ने खूब कहा है कि "आदतें मोतियोंकी मालाके समान हैं। यदि गिरहको खोल दिया जाय, तो उसमेंके सारे मोती बिखर जायँ।" अच्छी आदतोंकी मालाका भी यही हाल है।

किसी कामकी आदत पड़ जानी चाहिए, फिर तो वह काम अपने आप हुआ करता है—हमको प्रयत्न नहीं करना पड़ता। आदतमें कितनी शक्ति हो जाती है, यह हमको उसी वक्त मालूम होता है जब हम उस आदतके विरुद्ध कोई काम करना चाहते हैं। जो काम बार बार किया जाता है वह शीघ्र ही सुगमताके साथ होने लगता है और उस काममें हमारा मन भी लग जाता है। पहले पहल आदतमें मकड़ीके जालेसे अधिक शक्ति नहीं मालूम होती, परन्तु वही आदत पक्की हो जानेपर हमको इस तरह जकड़ देती है जैसे कोई लोहेकी जंजीर जकड़ती हो। जीवनकी छोटी छोटी बातें

अलग अलग महत्त्वहीन मालूम होती हैं—वे मेहकी बूँदोंके समान तुच्छ जान पड़ती हैं; परन्तु वे ही बूँदें मिलकर नदी बन जाती है।

आत्मसम्मान, स्वावलम्बन, उद्योग, परिश्रम, सत्यपरता—ये सब गुण आदत डालनेसे आते हैं; उन पर केवल विश्वास करनेसे अर्थात् उनको अच्छा समझनेसे कुछ नहीं हो सकता। सदाचार या नीतिके नियम क्या हैं? हमने आदतोंके जो नाम रख लिये हैं वे ही नियम हैं; क्योंकि नियम शब्द (नाम) हैं और आदतें चीजें हैं जो अपनी अच्छाई अथवा बुराईके अनुसार उपकारी अथवा हानिकारक होती हैं। ज्यों ज्यों हम बड़े होते जाते हैं त्यों त्यों हमारे स्वतंत्र उद्योग और विचारोंका कुछ भाग आदतमें दाखिल होता जाता है। जिन कामोंकी हमको आदत पड़ जाती है वे काम हमको करने ही पड़ते हैं; और हम उन्हीं जंजीरोंसे बँध जाते हैं जिनको हम स्वयं अपने चारों तरफ बनाते रहते हैं।

छोटे बच्चोंमें अच्छी आदतें डालना बहुत जरूरी है। इस विषयमें जितना कहा जाय उतना थोड़ा है। उनमें अच्छी आदतें अत्यन्त सुगमतासे पड़ जाती हैं और एक बार पड़ जानेपर जीवनपर्यंत बनी रहती हैं। वृक्षकी छाल पर खुदे हुए अक्षरोंके समान वे उम्रके साथ बढ़ती और चौड़ी होती जाती हैं। बच्चेको जिस मार्गपर चलनेकी शिक्षा दी जायगी वह वृद्ध होनेपर भी उस मार्गको न छोड़ेगा। आदिके भीतर ही अंत छिपा रहता है। जब मनुष्य जीवनके मार्गपर पहले पहल चलता है तभी मालूम हो जाता है कि वह किधर जायगा और कहाँ पहुँचेगा। लार्ड कालिङ्गवुडने अपने एक नौजवान मित्रसे कहा था कि " मेरी बात याद रखना। तुम्हारी उम्र २५ वर्षकी हो उससे पहले ही तुमको अपना चरित्र निश्चित कर लेना चाहिए। उससे तुमको उम्र भर काम पड़ेगा।" उम्रके साथ ज्यों ज्यों आदतें पक्की होती जाती हैं और चरित्रगठन होता जाता है, त्यों त्यों किसी नये मार्गको ग्रहण करना अधिक कठिन होता जाता है, इस लिए किसी सीखी हुई बातको भुलाना नई बात सीखनेसे प्रायः कठिन होता है। इसी कारण ग्रीस देशके एक चतुर बाँसुरी बजाना सिखानेवालेका यह नियम था कि वह उन लोगोंसे दूनी फीस लेता था जो किसी अयोग्य अध्यापककी शिक्षा पाये हुए होते थे। किसी पुरानी आदतको जड़से निकाल देनेमें जितना दुःख और कठिनाई होती है उतनी

दाँतके उखाड़नेमें भी नहीं होती । यदि तुम ऐसे मनुष्योंको सुधारना चाहो, जिनको आलस्य, फिजूलखर्ची या शराब पीनेकी आदत पड़ गई हो, तो तुमको बहुत ही कम सफलता होगी । क्योंकि उन मनुष्योंकी आदतें ऐसी पक्की हो जाती हैं कि वे निकल नहीं सकतीं । इस लिए मिस्टर लिञ्जने खूब कहा है कि " सर्वश्रेष्ठ आदत यह है कि अच्छी आदतें सीखनेमें सावधान रहनेकी आदत डाली जाय । "

और तो क्या आनंदित रहनेकी भी आदत डाली जा सकती है । कुछ मनुष्योंकी ऐसी आदत होती है कि वे हर एक बात या चीजकी खूबियोंको देखते हैं, परन्तु कुछ मनुष्य उनकी बुराइयों पर ही निगाह डालते हैं और उनको बुरी समझ कर अपने मनमें दुःखी होते हैं । डाक्टर जानसन कहा करते थे किं हर बातकी खूबियोंको देखनेकी आदत मनुष्यके लिए ऐसी अच्छी है कि उसके सामने हजार रुपया सालानाकी आमदनी भी कोई चीज नहीं । हममें ऐसी शक्ति मौजूद है कि हम अपने विचारोंको उन बातोंपर लगावें जो हमको आनन्द और उत्साह प्रदान कर सकती हैं। ऐसा करनेसे हम अपने विचारोंको आनन्ददायक बना सकते हैं । जिस तरह और बातोंकी आदत डाली जा सकती है उसी तरह इस बातकी भी आदत डाली जा सकती है । बच्चोंमें ऐसी आनन्ददायक आदत डालना और उनको अच्छे स्वभावका और प्रसन्नचित्त बनाना बहुत अच्छा है; बल्कि बहुतसे मनुष्योंके लिए तो ऐसी शिक्षाका मिलना ज्ञान और हुनरकी शिक्षासे भी बढ़कर है ।

जिस तरह सूर्यका प्रकाश छोटे छोटे छेदोंमेंसे भी दिखाई दे जाता है, उसी तरह छोटी छोटी बातें भी मनुष्यके चरित्रको प्रगट कर देती हैं । असलमें छोटे छोटे कामोंको अच्छी तरह और ईमानदारीके साथ करनेसे ही चरित्र बनता है । हमारा नित्य प्रतिका जीवन पत्थरकी खानके समान है । उसमेंसे हम आदतरूपी पत्थरोंको निकालते हैं और उनको काट छाँटकर अपने चरित्रकी इमारत खड़ी करते हैं । किसी मनुष्यकी सच्चरित्रताकी परीक्षा यह जाननेसे हो सकती है कि वह दूसरोंके साथ कैसा बर्ताव करता है । बड़ों, छोटों और बराबरवालोंके साथ अच्छा व्यवहार करनेसे चित्त हमेशा प्रसन्न रहता है । ऐसा व्यवहार दूसरोंको भी प्रसन्न कर देता है; क्योंकि वह इस बातका सूचक है कि हम उनका आदर करते हैं । ऐसे व्यवहारसे हमको दूसरोंकी अपेक्षा दसगुनी

प्रसन्नता होती है। जिस तरह हम अपने आपको और बहुत सी बातोंकी शिक्षा देते हैं, उसी तरह सदाचारकी भी शिक्षा दे सकते हैं। चाहे मनुष्यके पल्ले एक पैसा भी न हो, तो भी वह दूसरोंके साथ नम्रता और दयालुताका बर्ताव कर सकता है। जिस तरह सूर्यका प्रकाश दुनियाकी चीजोंपर गुप्तरूपसे अपना असर डालता है, उसी तरह सज्जन मनुष्य भी अपना प्रभाव समाजपर गुप्त-रूपसे डालता है। जोर या शोरकी अपेक्षा सुजनता अधिक बलवती और फलवती होती है। पेड़का अंकुर कितना छोटा होता है; परन्तु वह जमीनको फोड़कर निकल आता है और सिर्फ बढ़-बढ़कर मिट्टीके डलोंको अलग हटा देता है। इसी इरह सज्जन मनुष्य निरंतर सुजनताका बर्ताव करके ही धीरे धीरे सफलता प्राप्त कर लेता है।

हमारा आचरण हमारे जीवनपर बहुत बड़ा प्रभाव डालता है। हमारा आचरण जैसा होता है वैसा ही हमारा जीवन बन जाता है। कानूनोंकी उत्पत्ति आचरणके कारण ही होती है। मनुष्योंके आचरणको शुद्ध बनानेके लिए कानून बनाये जाते हैं। इस लिए आचरण कानूनसे कहीं जियादा महत्त्वकी चीज है। कायदे कानूनोंसे तो हमको यत्र तत्र ही काम पड़ता है, परन्तु आचरण हमारे साथ सर्वत्र रहते हैं; वे समाजमें हवाकी तरह फैले रहते हैं। शिष्टाचार सद्व्यवहारको कहते हैं। विनयशीलता और प्रेमपूर्ण बोल-चाल शिष्टाचारके प्रधान अंग हैं। मनुष्य आपसमें जो हितकर और अच्छा व्यवहार करते हैं उसमें परोपकारिताकी मात्रा अवश्य होनी चाहिए। लेडी मानटेगने कहा था "नम्रता स्वयं तो बिना मूल्य आती है, परन्तु उससे हर एक चीज खरीदी जा सकती है।" सबसे सस्ती चीज प्रेमपूर्ण बोलचाल है; क्योंकि किसीके साथ प्रेमल बर्ताव करनेमें सबसे कम कष्ट उठाना पड़ता है और सबसे कम स्वार्थ-त्यागकी जरूरत पड़ती है। बर्लेने महारानी ऐलिजबैथसे कहा था कि "यदि आप सद्व्यवहारसे लोगोंके दिलोंपर काबू कर लें तो वे लोग अपने दिल और अपने धन दोनोंको आपके समर्पण कर देंगे।" यदि हम किसी तरहकी बनावट या चालाकीको काममें न लायँ किन्तु अपने स्वभावके अनुसार नम्रतापूर्वक काम करते रहें, तो इससे सामाजिक आनन्द और सुखपर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ेगा। नम्रताके और प्रेमपूर्ण बोल्चालके छोटे छोटे काम मनुष्यके जीवनमें छोटे छोटे परिवर्तन कर

देते हैं । ये काम अलग अलग देखनेमें चाहे महत्त्वहीन मालूम हों, परन्तु जब बारबार किये जाते हैं और बहुतसे हो जाते हैं तब बहुत प्रभावशाली हो जाते हैं । जिस तरह हर रोज थोड़ा थोड़ा समय निकालनेसे अंतमें बहुत समय बच रहता है या एक एक पैसा हररोज जमा करनेसे धन इकट्ठा हो जाता है, उसी तरह इन कामोंके अंतमें बड़े महत्त्वपूर्ण परिणाम होते हैं ।

शिष्टाचार कार्यका आभूषण है । हरएक बात या काम कहने या करनेका एक ढंग होता है जिससे उस बात या कामका मूल्य और भी बढ़ जाता है । यदि कोई काम ईर्षाके कारण अथवा अपना बड़प्पन प्रकट करनेके लिए किया जाय, तो उसकी गिनती अनुग्रहमें नहीं हो सकती । कुछ मनुष्य ऐसे हैं जो अपने रूखेपन पर अभिमान करते हैं । ऐसे मनुष्योंमें चाहे सच्चरित्रता और योग्यता हो, परन्तु उनके व्यवहारको कोई अच्छा न कहेगा । जो मनुष्य दूसरोंका बारबार अपमान करता हो और जली-कटी बातें कहता हो उसको कौन पसंद करेगा ? कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं जिन्हें दूसरोंके साथ प्रेमपूर्ण मिष्ट भाषण करनेमें अपने बड़प्पनका बड़ा खयाल रहता है और छोटेसे छोटे मौकेपर भी अपना बड़प्पन जताये बिना नहीं रहते । वे दूसरोंके लिए जब कोई छोटा सा भी काम करते हैं, तब इस ढंगसे करते हैं और इस तरह बातें करते हैं कि मानो वे दूसरोंपर बड़ा भारी अहसान कर रहे हैं । ऐसे मनुष्योंको भी कोई पसंद नहीं करता ।

जिन मनुष्योंको अपने व्यापारके संबंधमें दूसरोंसे काम पड़ता रहता है उनको शिष्टाचारकी बड़ी जरूरत है, परन्तु अतिके शिष्टाचारसे कोरी दिखावट और मूर्खता टपकती है । जो मनुष्य किसी ऊँचे पदपर हो अथवा बहुत प्रसिद्ध हो उसमें सुशीलता और सुजनता जरूर होनी चाहिए । इन गुणोंके बिना उसको सफलता नहीं हो सकती; क्योंकि ऐसा बहुधा देखा गया है कि इन गुणोंके न होनेसे परिश्रम, ईमानदारी और सच्चरित्रताका बहुतसा असर जाता रहता है । यह जरूर है कि कुछ मनुष्य ऐसे उदारचित्त होते हैं कि वे आचार-विचारके दोषोंपर ध्यान न देकर केवल बड़े बड़े गुणोंपर ही दृष्टिपात करते हैं; परन्तु सारी दुनिया तो ऐसी नहीं है ! जनसाधारण हमारे बाहरी आचारविचार देखकर ही हमारे संबंधमें अपनी राय कायम करते हैं ।

हमको दूसरोंके विचारोंका लिहाज करना चाहिए। यह भी सच्ची नम्रताका एक चिह्न है। जिन मनुष्योंको कोरी शेखी मारनेकी आदत होती है वे पक्षपाती हो जाते हैं और अपनी हरएक बात पर घमंड करने लगते हैं। वे दूसरोंकी बातोंकी कुछ भी कदर नहीं करते। हमको यह मान लेना चाहिए कि मनुष्योंमें मतभेद होता ही है। इस लिए हमको दूसरोंकी बातें सहनशीलताके साथ सुननी चाहिएँ और उन पर दयाभाव रखना चाहिए। नियमों और विचारोंमें मतभेद होने पर भी मनुष्य शान्तिपूर्वक रह सकते हैं। यह न होना चाहिए कि वे एक दूसरेसे लड़ बैठें अथवा सख्तसुस्त कहने लगें। कभी कभी ऐसा होता है कि कटु शब्द बोलनेसे दूसरे मनुष्यके हृदयपर बड़ी चोट लगती है। मसल मशहूर है कि 'बोली ठोलीका घाव तीरके घावसे भी जियादा देरमें पुरता है।'

प्रेमपूर्ण अन्तःकरण और दयाभावसे जो विवेकबुद्धि उत्पन्न होती है वह किसी विशेष श्रेणीके मनुष्योंमें ही नहीं पाई जाती,—मजदूर, रईस अथवा साधु सभी उसको धारण कर सकते हैं। यह जरूरी नहीं है कि मजदूर बोलचालके रूखे, कडुवे और अविवेकी हों। वे भी विवेकी बन सकते हैं। दूसरे देशवालोंकी नम्रता शिष्टाचार और विवेकशीलताको देखकर हमको यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि ये गुण हममें भी आ सकते हैं। यदि हम अधिक उन्नति कर लें और दूसरे देशवालोंके साथ मिलते जुलते रहें, तो ये गुण हममें निस्संदेह आ सकते हैं और इसके साथ ही हमारे अन्य उत्तमोत्तम गुणोंको भी किसी तरहकी हानि नहीं पहुँच सकती। अमीरसे अमीर आदमीसे लेकर गरीबसे गरीब आदमी तक, और बड़ेसे बड़े आदमीसे लेकर छोटेसे छोटे आदमी तक, सभी मनुष्य उदारहृदयके हो सकते हैं। जिस मनुष्यका हृदय उदार न हो उसे सज्जन न कहना चाहिए। आजतक कोई सज्जन ऐसा नहीं हुआ जिसका हृदय उदार न रहा हो। मिर्जई पहननेवाले किसानमें और रेशमी कोट पहननेवाले सेठमें, दोनोंमें उदारता हो सकती है। कपड़ोंसे या बाहरी दिखावटसे मनुष्यकी उदारताका कुछ संबंध नहीं है। यह हो सकता है कि किसी मनुष्यके कपड़ेलत्ते और दूसरी बाहरी बातें सीधी सादी हों, परन्तु उसका हृदय उदार हो। जो लोग उस मनुष्यके भीतरी गुणोंको नहीं पहचानते वे शायद उसकी सादगी और भोलेपनको बुरा समझें, परन्तु बुद्धिमान् मनुष्य उसके चरित्रको पहचानेंगे और उसकी कदर करेंगे।

स्वावलम्बन।

विलियम ग्रांट और चार्ल्स ग्रांट एक किसानके लड़के थे। जिस ग्राममें वे रहते थे उसके पास होकर एक नदी बहती थी। एक बार उस नदीमें ऐसी बाढ़ आई कि उनकी सब चीजें बह गईं, यहाँ तक कि जिस जमीन पर वे खेती करते थे वह भी बह गई। गरज यह कि वह किसान और उसके दोनों लड़के सब तरहसे तबाह हो गये। इस मुसीबतने उनको बेबस कर दिया। लाचार वे लोग वहाँसे नौकरीकी तलाशमें निकले। चलते चलते वे लैंकशरके जिलेमें पहुँचे। वहाँ वे एक पहाड़ी पर चढ़ गये और उसपरसे आसपासकी जमीनको और इवैल नदीको देखने लगे। वे इस जिलेमें पहले कभी न आये थे और न वहाँका कुछ हाल जानते थे, इसलिए पहाड़ी पर खड़े होकर यह देखते रहे कि अब किस तरफको चलना चाहिए। कुछ देर सोचनेके बाद उन्होंने अपनी यात्राका मार्ग इस तरह निश्चित किया,—उन्होंने उस पहाड़ीपर एक छड़ीको सीधी खड़ी कर छोड़ दी और यह सोच लिया कि जिस तरफ यह छड़ी गिरेगी उसी तरफ चल पड़ेंगे। बस जिस तरफ वह छड़ी गिरी उसी तरफ वे लोग चल दिये। चलते चलते वे एक ग्राममें पहुँचे। वहाँ उनको एक छापखानेमें काम मिल गया और उन दोनोंने काम सीखना शुरू कर दिया। दोनों भाई ऐसे मेहनती, संयमी और ईमानदार थे कि उन्होंने छापखानेके मालिकको अपने गुणोंसे शीघ्र ही प्रसन्न कर लिया। कुछ समय तक वे इसी तरह परिश्रम करते रहे और उन्होंने इतनी उन्नति कर ली कि अपना निजी छापखाना खोल लिया। इसके बाद वे बहुत वर्षों तक परिश्रम और उद्योग करते रहे और दूसरोंकी भलाईमें लगे रहे। इसका नतीजा यह हुआ कि वे धनाढ्य हो गये और जिन लोगोंसे उनकी जान पहचान हो गई थी वे उनका बड़ा आदर करने लगे। उन्होंने कई छापखाने और रुईके मिल खोल दिये जिनसे उस जिलेके बहुतसे आदमियोंके लिए नौकरी और धंधा निकल आया। उन्होंने जिस काममें परिश्रम किया वह खूब सोच समझ कर किया। इससे उनको अच्छी सफलता हुई। उनके परिश्रमके कारण उस जगह रौनक ही रौनक नजर आने लगी। चारों तरफ कार्यकुशलता, आनन्द, स्वास्थ्य और धनका साम्राज्य हो गया। अपने विपुल धनमेंसे वे बड़ी उदारताके साथ सब तरहके अच्छे कामोंके लिए धन देने लगे—उन्होंने गिर्जे बनवाये, स्कूल स्थापित किये और मजदूरोंके

वर्गको, जिसमेंसे वे स्वयं उठे थे, उन्नत बनानेके लिए अनेक चेष्टायें कीं। जिस पहाड़ी पर खड़े होकर उन्होंने छड़ीके द्वारा अपना मार्ग निश्चित किया था उस पहाड़ीपर उन्होंने इस घटनाके स्मरणार्थ एक मीनार बनवा दिया। ये दोनों भाई अपनी उदारता और अच्छे कामोंके कारण दूर दूर तक प्रसिद्ध हो गये। कहा जाता है कि सुप्रसिद्ध उपन्यास-लेखक मिस्टर डिकन्सने अपने एक उपन्यासमें दो पात्रोंका चरित्र-चित्रण इन्हीं दोनों भाइयोंके चरित्रके आधारपर किया है।

मिस्टर डिकन्सने अपने पात्रोंका चरित्र जैसा दिखाया है वैसा ही इन दोनों भाइयोंका था। इन दोनों भाइयोंकी अनेक कथायें इस बातको साबित करती हैं कि अपने उपन्यासमें मिस्टर डिकन्सने अतिशयोक्तिसे काम नहीं लिया है, अर्थात् उन्होंने अपने पात्रोंके चरित्रको अच्छा बनानेके लिए अपनी तरफसे कोई बात बहुत बढ़ाकर नहीं लिखी है। यहाँपर हम इन दोनों भाइयोंकी अनेक कथाओंमेसे केवल एक कथाका उल्लेख करते हैं:—एक बार मैनचेस्टरके एक सौदागरने इन दोनों भाइयोंके विरुद्ध एक पुस्तक छपवाई, जिसमें बड़े भाई विलियमकी खूब ही हँसी उड़ाई गई थी। जब विलियमको किसीने इस पुस्तककी खबर दी तब वह केवल इतना ही कह कर रह गया कि "इस पुस्तकके लेखकको कभी पश्चात्ताप करना पड़ेगा।" जब उस पुस्तकके लेखक अर्थात् सौदागरने यह बात सुनी तब उसने कहा कि "वह खयाल करता होगा कि मैं कभी न कभी उसका कर्जदार हो जाऊँगा; परन्तु उसका यह खयाल गलत है। मैं कर्जदार नहीं हो सकता।" मगर व्यापारमें यह बात पहलेसे नहीं मालम हो सकती कि किसे किसका अहसान उठाना पड़ेगा। इत्तफाक ऐसा हुआ कि जिस सौदागरने विलियमकी बुराई की थी उसका देवाला निकल गया और उसे इस बातकी जरूरत पड़ी कि व्यापार फिर शुरू करनेके लिए वह एक सर्टीफिकेट पेश करे जिस पर उन दोनों भाइयोंके हस्ताक्षर हों! उसे आशा न थी कि दोनों भाई उसके ऊपर यह कृपा करेंगे; परन्तु अपने कुटुम्बकी बुरी दशा देखकर उससे न रहा गया। वह मजबूर हो गया और उसे उन दोनों भाइयोंकी सेवामें सर्टीफिकेटपर हस्ताक्षर करनेका निवेदन करना पड़ा। वह बड़े भाईके सामने गया, जिसकी उसने अपनी पुस्तकमें हँसी उड़ाई थी। उसने

अपने मुसीबतका हाल सुनाया और सर्टीफिकेट सामने रख दिया। विलियमने कहा कि "एक दफे तुमने हमारे विरुद्ध एक पुस्तक लिखी थी?" सौदागरका दिल धड़कने लगा और वह सोचने लगा कि अब मेरा सर्टीफिकेट आगमें झोंक दिया जायगा; परन्तु विलियमने ऐसा न किया उसने उस सर्टीफिकेट पर अपने कारखानेकी तरफसे अपने दस्तखत कर दिये और सर्टीफिकेटको सौदागरके हाथमें देकर कहा कि "हमारा यह कायदा है कि हम किसी ईमानदार सौदागरके सर्टीफिकेट पर हस्ताक्षर करनेसे इनकार नहीं करते और हमने आज तक तुम्हारी ईमानदारीके विरुद्ध कोई बात नहीं सुनी है।" उस सौदागरकी आँखोंमेंसे आँसुओंकी धारा बहने लगी। विलियमने कहा कि "तुमको मालूम होगा उस समय मैंने कहा था कि तुम पुस्तक लिखनेपर पश्चात्ताप करोगे। आखिर वही बात हुई। परन्तु मैंने जो कुछ कहा था वह इस नीयतसे नहीं कहा था कि मैं तुमको धमकी देना चाहता था, किन्तु मेरा मतलब यह था कि किसी दिन तुम हम लोगोंकी कदर करोगे और तुमने हमको जो दुःख दिया है उसपर पछतावा करोगे।" सौदागरने कहा कि "मैं सचमुच पछता रहा हूँ।" विलियमने फिर कहा कि "अच्छा तो तुम हम लोगोंको अब पहिचान गये कि हम कैसे आदमी हैं। लेकिन यह तो कहो कि अब तुम्हारी क्या हालत है—अब तुम्हारा क्या करनेका इरादा है?" सौदागरने उत्तर दिया कि "सर्टीफिकेट मिल जानेपर मेरे मित्र मेरी सहायता करेंगे।" विलियमने पूछा, "लेकिन आज कल तुम्हारी क्या हालत है।" उसने उत्तर दिया कि "महाजनोंके कर्ज चुकानेके लिए मैं अपना सर्वस्व दे चुका हूँ और अब मैं अपने कुटुम्बके निर्वाहके लिए जरूरी चीजें भी नहीं खरीद सकता हूँ। यदि मैं अपना सब कर्ज न चुकाता, तो मुझे सरकारसे पुनः व्यापारके लिए सर्टीफिकेट भी न मिल सकता। विलियमने कहा कि भाईसाहब मैं यह नहीं देख सकता कि तुम्हारी स्त्री और बच्चे इस तरह दुःख भोगें। कृपा करके स्त्रीके लिए मुझसे यह दस पौंड (डेढ़ सौ रुपये) का नोट ले जाओ। हैं! हैं! तुम रोते क्यों हो? अब सब ठीक ठाक हो जायगा। उत्साहको हाथसे न जाने दो। आदमीकी तरह काम करनेमें लग जाओगे, तो तुम्हारी गिनती फिर बड़े बड़े सौदागरोंमें होने लगेगी।" उस सौदागरका दिल भर आया। उसने विलियमको धन्यवाद

देना चाहा, परन्तु उससे बोला न गया और वह अपने हाथोंसे अपने मुँहको छिपाकर बच्चेकी तरह सिसकता हुआ कमरेके बाहर चला गया।

जो गुण विलियम ग्रांट और उनके भाईमें थे उन्हीं गुणोंसे सेठ राणूरावजी भी अलंकृत हैं। ग्रांट भाइयोंके समान शुरूमें वे भी बड़े निर्धन थे और उन्होंने भी उसी तरह धीरे धीरे मेहनत और ईमानदारीके मार्गपर चल कर अपनी उन्नति की है। राणूरावजीका जन्म पूना जिलेके एक ग्राममें सन् १८४६ ईसवीमें हुआ था। वे जातिके माली हैं। उनके पिता ऐसे दरिद्र थे कि रात दिन मेहनत करनेपर भी अपने कुटुम्बका निर्वाह न कर सकते थे। उन्होंने अपने पुत्र राणूरावजीको एक राजके साथ गारा उठानेके काम पर लगा दिया था। राणूरावजी कुछ समय तक यही काम करते रहे; परन्तु उनको मजदूरी बहुत थोड़ी मिलती थी। जब वे १०–११ वर्षके हुए तब उनकी माताका देहान्त हो गया। इस घटनाने उनको और भी दुखी कर दिया। घरका काम काज करनेको भी कोई न रहा। जब राणूरावजी और उनके पिता सब तरहसे तंग आगये तब वे नौकरीकी तलाशमें पूना चल दिये। पूनामें उन दोनोंको एक बागमें नौकरी मिल गई; परन्तु इस नौकरीमें उनको केवल दो चार रुपया मासिक वेतन मिलता था जिससे उनकी गुजर बड़ी कठिनतासे होती थी। कुछ समय बाद राणूरावजी बम्बईमें ‘ टाइम्स आफ इंडिया ’ छापेखानेमें टाइप घिसनेके काम पर नौकर हो गये और उन्हें ३) मासिक वेतन मिलने लगा। इस छापेखानेमें उनको आगामी उन्नतिकी कुछ आशा न दिखाई दी, इस लिए उन्होंने यह नौकरी छोड़ दी और उतने ही वेतनपर ‘ ऐज्युकेशन सोसायटी प्रेस ’ में नौकरी कर ली। यहाँ उनका वेतन धीरे धीरे १०) मासिक हो गया। उनकी मेहनत और ईमानदारीसे प्रेसके सुपरिण्टेण्डेंट टामस ग्रेहम उनसे बड़े खुश रहते थे। इसके बाद राणूरावजीने ओरिएंटल प्रेसमें नौकरी कर ली। इसी प्रेसमें जावजी दादाजी भी नौकर थे। दोनोंने मिलकर एक मकान किराये पर लिया और कुछ निजी काम शुरू कर दिया। पहले वे पुराने टाइप खरीदने बेचने लगे और फिर उन्होंने बिक्रीके लिए नये टाइप भी मँगा लिये। इस काममें उन्हें ऐसी सफलता हुई कि उन्होंने नौकरी छोड़ दी। जावजीने टाइप ढालनेका निजी कारखाना खोल दिया और राणूरावजी उनके सहायक बन गये। जब सेठ जावजीने ‘ निर्णयसागर प्रेस ’

खोला तब इस काममें भी राणूरावजी उनके परम सहायक रहे और निर्णय-सागर प्रेसकी बदौलत राणूरावजी भी मालामाल हो गये । वे टाइप बनानेके काममें बहुत ही निपुण हैं उनका स्वभाव ऐसा अच्छा है कि सर्वसाधारण उनका बड़ा सम्मान करते हैं। सरकारने भी उनकी खूब इज्जत की है—उन्हें 'जे. पी.' पदसे अलंकृत कर दिया है । वे जन-सेवामें खूब योग देते हैं और अच्छे कामोंमें अपनी गिरहका हजारों रुपया खर्च कर देते हैं।

सच्चा सज्जन वही है जिसका स्वभाव सर्वोत्तम आदर्शोंके अनुकरणसे बना हो । सज्जनोंकी श्रेष्ठता और शक्ति सब युगोंमें मानी गई है । 'सज्जन' शब्द नया नहीं है । सज्जन अपनी सज्जनतासे मुँह नहीं मोड़ता, चाहे वह कष्ट और भयमें ही क्यों न फँसा हो । सज्जनता एक तरहका पद है, क्योंकि प्रत्येक उदार मनुष्य सज्जनका आदर करता है । जो मनुष्य कोरे पदाधिकारी होते हैं, परन्तु उनमें सुजनता नहीं होती उनके सामने कुछ लोग सिर नहीं झुकाते, परन्तु सज्जनका वे भी आदर करते हैं । सज्जन मनुष्यके गुण फैशन पर निर्भर नहीं हैं किन्तु सच्चरित्रता पर—उसके अधिकारकी चीजोंपर नहीं किन्तु उसके स्वाभाविक गुणों पर निर्भर हैं । किसी कविने कहा है कि "सज्जन वह है जो ईमानदार हो, भलमनसाहतका बर्ताव करता हो और अपने दिलमें सच बोलता हो।"

सज्जनमें एक गुण अवश्य होता है । वह यह कि उसे आत्म-सम्मानका बड़ा खयाल रहता है, अर्थात् वह अपनी कदर करता है—अपने आपको तुच्छ नहीं समझता । वह अपने चरित्रकी भी कदर करता है—परन्तु वह अपने चरित्रकी केवल उन्हीं बातोंकी कदर नहीं करता जो दूसरोंको दिखाई देती हैं किन्तु उन बातोंकी भी करता है जिन्हें वह स्वयं देखता है; वह उन बातोंकी कदर करता है जिनको उसका अंतःकरण अच्छा बतलाता है। और चूँकि वह अपना सम्मान करता है, इस लिए वह दूसरोंकी भी कदर करता है । वह मनुष्य मात्रको आदरका पात्र समझता है और इस विचारसे उसमें नम्रता, क्षमा, कृपालुता और दया आ जाती है । जस्टिस महादेव गोविन्द रानडेके बारेमें कहा जाता है कि एक दिन वे कचहरीको जा रहे थे। रास्तेमें एक बुढ़िया लकड़ीका बोझा धरतीपर रक्खे बैठी थी। वह बड़ी दूरसे बोझेको सिरपर रक्खे आरही थी, इस लिए थक गई थी और यहाँ आकर उसने दम

लिया था। सामनेसे रानडे आ रहे थे। बुढ़िया यह नहीं जानती थी कि ये हाईकोर्टके जज हैं; उनको साधारण मनुष्य समझकर कहने लगी कि "बेटा! मेरे बोझको उठवाता जा।" रानड़ेने तुरन्त ही बोझा उठाकर बुढ़ियाके सिर-पर रख दिया! यह एक सच्चे सज्जनकी स्वाभाविक नम्रताका बढ़िया उदाहरण है। इसी तरह लार्ड **एडवर्ड फिजजिरल्डके** विषयमें कहा जाता है कि एक बार वे कैनेडा (अमेरिका) में सफर कर रहे थे। रास्तेमें उनको उसी देशकी एक स्त्री मिली जो अपने पतिकी चीजोंको अपने सिरपर लादे जा रही थी; परन्तु वह बोझके मारे दबी जाती थी और बड़ी मुश्किलसे पैर उठाती थी। स्त्रीकी तो यह दशा थी, परन्तु उसका पति खाली हाथों बिना किसी बोझके उसके साथ साथ जा रहा था। लार्ड एडवर्डको उस स्त्री पर बड़ी दया आई और उन्होंने तुरन्त ही उसके बोझको अपने कंधेपर रख लिया!

सच्चे सज्जनको अपनी इज्जतका बड़ा खयाल रहता है, इस लिए वह बड़ी सावधानीके साथ कुकर्मोंसे बचता है। वह हर एक बातके कहनेमें अपने सामने इमानदारीका ऊँचा आदर्श रखता है। वह न तो टालमटोल करता है और न सच्ची बातको छिपाता है। वह दूसरोंको धोखा नहीं देता और अपने कर्तव्यसे आनाकानी भी नहीं करता। वह हमेशा इमानदार, सच्चा और खरा रहता है। उसका नियम है ईमानदार रहना—जो उचित हो उसी कामको करना। जो बात उचित होती है उसके लिए वह 'हाँ' कहता है; और जब 'नहीं' कहनेका मौका होता है तब वीरताके साथ 'नहीं' कह देता है। जो मनुष्य सज्जन होता है वह कभी रिशवत (घूँस) नहीं लेता। केवल वे लोग, जिनके विचार नीच होते हैं अथवा जो किसी नियमके अनुसार नहीं चलते, अपने आपको दूसरोंके हाथ बेचते हैं। ईमानदार **जोनस हानवे** रसदके महकमेंमें कमिश्नर थे, परन्तु वे किसी ठेकेदारसे किसी तरहकी भी भेंट न लेते थे। उनका खयाल था कि ऐसा करनेसे मैं अपने कर्तव्यका पालन ठीक ठीक न कर सकूँगा। यही गुण ड्यूक आफ **वैलिंगटनके** जीवनमें भी पाया जाता है। जब असाईके युद्धका अन्त हो गया तब एक दिन हैदराबादका प्रधान मंत्री वैलिंगटनके पास आया और उसने यह जानना चाहा कि उसके स्वामी निजाम (हैदराबादके शासक) और मराठा राजाओंमें जो संधि होनेवाली है उसमें निजामको क्या मिलेगा। संधिकी सब

बातें वैलिंगटनको मालूम थीं, परन्तु वे अभी किसी और पर प्रकट न की गई थीं। इस भेदको जाननेके लिए निजामका मंत्री वैलिंगटनको १५ लाख रुपयेसे भी जियादा देने लगा। वैलिंगटन पहले कई सेकंड तक उस मंत्रीके मुँहकी ओर चुपचाप देखते रहे और फिर यों बोले, "अच्छा, तो तुम इस भेदको छिपा सकते हो? किसीसे कहोगे तो नहीं?" मंत्रीने जवाब दिया कि "मैं इस भेदको बेशक छिपा सकता हूँ।" तब वैलिंगटनने हँसकर कहा कि "बस ऐसा ही मुझे समझो। जिस तरह तुम अपने भेदको छिपा सकते हो उस तरह मैं भी अपना भेद छिपा सकता हूँ।" यह कहकर वैलिंगटनने मंत्रीको झुककर प्रणाम किया और बेचारा मंत्री लज्जाके मारे वहाँसे तुरन्त ही चल दिया।

वैलिंगटनके नातेदार मारक्विस आफ वैलेजली भी ऐसे ही उदारचरित थे। एक बार ईस्ट इंडिया कम्पनीने वैलेजलीको मैसूरकी विजयके उपलक्ष्यमें १५ लाख रुपया भेंट स्वरूप देना चाहा, परन्तु वैलेजलीने साफ इनकार कर दिया। वैलेजलीने कहा था कि "इस बातकी जरूरत नहीं है कि इस समय मैं यह बतलाऊँ कि मेरा चरित्र कितना स्वतंत्र है और मैं जिस पदपर हूँ उसकी महत्ता कितनी बड़ी है। इन दो बड़ी बड़ी बातोंके उपरान्त कई बातें और भी हैं जिनके कारण मैं इस भेंटको अस्वीकार करता हूँ। मैं इस भेंटको अच्छा नहीं समझता। मैं अपनी सेनाके सिवाय और किसी चीजकी परवाह नहीं करता। मेरी सेनाके इन वीर सैनिकोंके हिस्सेमें यदि कुछ कमी की जायगी तो अवश्य ही मुझे बड़ा दुख होगा।" वैलेजलीने भेंटको अस्वीकार करनेका जो इरादा कर लिया था उसे कोई भी न बदल सका।

धन और पदका सच्ची सुजनताके साथ कोई जरूरी संबंध नहीं है। निर्धन मनुष्य भी सच्चा सज्जन हो सकता है—उसके भावोंमें और रोजमर्राके कामोंमें सुजनता आ सकती है। वह ईमानदार, सच्चा, खरा, नम्र, संयमी, साहसी, अपनी कदर करनेवाला और आत्मावलम्बी हो सकता है—और इसीको सच्चा सज्जन बनना कहते हैं। जिस मनुष्यके पास धन न हो परन्तु उसके भाव अच्छे हों वह उस मनुष्यसे सब तरह अच्छा है जिसके पास धन तो हो परन्तु उसके भाव निकृष्ट हों। यद्यपि पहले मनुष्यके पास धन नहीं है तो भी सब कुछ है और दूसरेके पास सब कुछ होते हुए भी कुछ नहीं है।

पहला मनुष्य सब तरहकी आशा कर सकता है और उसको किसी बातका डर नहीं होता; परन्तु दूसरेको किसी लाभकी आशा नहीं होती और डर हर बातका लगा रहता है। जिन मनुष्योंके भाव हीन हैं असलमें वे ही मनुष्य दीन हैं। जिसने सब कुछ खो दिया हो; परन्तु साहस, प्रसन्नता, आशा, धर्मपरायणता और आत्म-सम्मानको हाथसे न जाने दिया हो, वह फिर भी धनाढ्य है। क्योंकि ऐसे मनुष्यका सारा संसार विश्वास करता है और उसके भाव ऐसे ऊँचे होते हैं कि उसको छोटी छोटी चिन्तायें कष्ट नहीं दे सकतीं। वह इस बात पर अभिमान कर सकता है कि मैं वास्तवमें सज्जन हूँ।

अत्यंत निर्धन मनुष्योंमें भी वीर और सज्जन पुरुष पाये जाते हैं। हम इस बातका एक उदाहरण देते हैं। यह उदाहरण पुराना है, परन्तु है बहुत अच्छा। एक बार इटली देशकी एक नदीमें बाढ़ आई उस नदीका सारा पुल बह गया, सिर्फ बीचका कुछ अंश बच रहा जिस पर एक घर बना हुआ था। उस घरके आदमी खिड़कियोंमेंसे बाहर झाँक झाँककर आसपासवालोंको सहायताके लिए पुकारने लगे; क्योंकि पुलका यह अंश, जो अब तक बचा हुआ था बहनेहीको था। नदीके किनारेपर दर्शकोंकी भीड़ लगी हुई थी। उस भीड़में से एक धनाढ्य मनुष्य बोला कि " अगर कोई उस घरके आदमियोंको बचा दे, तो मैं उसको सौ मुहरें दूँगा।" यह सुनकर एक गरीब युवा किसान नाव लेकर नदीमें चला गया और उस घरके आदमियोंको नावमें बिठाकर किनारेपर ले आया। इस तरह जब उन लोगोंकी जानें बच गईं तब धनाढ्यने किसानसे कहा कि " यह लो सौ मुहरें।" परन्तु किसानने उत्तर दिया कि " यह इनाम लेकर मैं अपने मनुष्यत्वको नहीं बेचूँगा। ये रुपया इन्हीं बेचारोंको दे दो; क्योंकि इनको रुपयेकी जरूरत है।" यद्यपि वह एक गरीब किसान ही था, तो भी उसमें सच्ची सज्जनता मौजूद थी।

पालीताना (काठियावाड़) के एक छोटेसे जैन बोर्डिंग हौसके मंत्री कुँवरजीका काम इससे कुछ कम प्रशंसनीय नहीं है। सन् १९१३ ईस्वीमें पालीतानामें बड़ी भारी वृष्टि हुई और नदीमें अकस्मात् बाढ़ आ गई। रातका समय था; सब लोग निद्रादेवीकी गोदमें शयन कर रहे थे। मकान गिरने लगे और सोतेहुए आदमी बहने लगे। इस अवसर पर लगभग एक हजार मनुष्य और अगणित पशु कालके ग्रास बन गये। कुँवरजी बोर्डिंग

हौसमें अपने कुटम्बसहित रहते थे । अब प्रश्न यह था कि वे इस अवसरपर पहले अपने घरवालोंकी रक्षा करें अथवा बोर्डिंग हौसके विद्यार्थियोंके बचानेकी चेष्टा करें । उन्होंने अपना धर्म यही समझा कि पहले विद्यार्थियोंको बचाया जाय । कुँवरजीने एक और मनुष्यकी सहायतासे बड़ी कठिनाईसे १९ विद्यार्थियोंको वृक्षपर चढ़कर उनके प्राण बचाये । इतनेहीमें शेष १७ विद्यार्थी और कुँवरजीका सारा कुटुम्ब जलमें बह गया ! .

आस्ट्रियाके स्वर्गीय सम्राट् फ्रांसिसकी सुजनताका परिचय इस कथासे मिलता है । आस्ट्रियाकी राजधानीमें एक बार हैजा खूब जोरसे फैला । उन्हीं दिनोंमें एक दफे सम्राट् अपने एक कर्मचारीके साथ सड़कोंपर चक्कर लगा रहे थे । उन्होंने देखा कि एक आदमी एक लाशको ठेले पर रखकर घसीटे लिए जा रहा है । उस लाशके साथ कोई भी शोकाश्रु बहानेवाला न था । इस विचित्र दृश्यको देखकर सम्राट्का ध्यान उस ओर गया और उन्होंने उस लाशके संबंधमें पूछताछ की । जवाब मिला कि " यह लाश एक गरीब आदमीकी है जो हैजेमें मर गया है । हैजेके डरके मारे उसके किसी नातेदारका यह साहस न हुआ कि वह उस लाशके साथ कब्र तक जावे । " फ्रान्सिसने कहा कि " अच्छा तो मैं इस लाशके साथ जाऊँगा, क्योंकि मैं चाहता हूँ कि मेरे देशका कोई भी मनुष्य मरनेपर इस अन्तिम सत्कारसे बंचित न रक्खा जाय ।' यह कहकर सम्राट् उस लाशके साथ कब्रिस्तान तक गये, जो वहाँसे बहुत दूर पर था । वहाँ पहुँचकर वे नंगे सिर खड़े रहे और उन्होंने मृतकका सब क्रियाकर्म आदरपूर्वक अपने सामने करवाया । "

सब बातोंसे बढ़कर यह बात है कि सज्जन मनुष्य सच्चा होता है । वह सत्यको जीवनका सर्वस्व समझता है । एक विद्वान्का कथन है कि सज्जन बननेमें सत्यपोषणसे सफलता होती है । जो सज्जन होता है वह सच्चा जरूर होता है । ड्यूक आफ वैलिंगटनने एक बार कहा था कि अँगरेजी अफसरोंको अपनी सच्चाईका बड़ा अभिमान रहता है ।

सच्ची वीरता और सुजनताका साथ है । जो वीर होता है वह उदार और क्षमावान् भी होता है । वह कभी भी निष्ठुरता और निर्दयताका बर्ताव नहीं करता । एक युद्धमें फ्रान्सके एक वीरने सर फेल्टन हार्वेको मारनेके लिए तलवार उठाई, परन्तु यह देखकर कि हार्वेके एक ही हाथ था उस वीरने

अपनी तलवार नीची कर ली और वह उसको बिना मारे ही चला गया। भीष्म पितामहका शरीर जब पाण्डवोंके बाणोंके मारे जर्जरित हो गया तब वे रण-क्षेत्रमें थक कर गिर गये और कुछ देर बाद उनका प्राणान्त हो गया। जब भीष्म घायल पड़े थे तब सब लोग उनको देखनेके लिए आये। पाण्डव भी उनके आसपास खड़े हो गये। जो पाण्डव अभी भीष्मके ऊपर बाणपर बाण छोड़ रहे थे वे ही पाण्डव अब अपने अस्त्रशस्त्र फेंककर उनकी सेवा करने लगे। उस समय पाण्डवोंने भीष्मके साथ वैसा ही व्यवहार किया जैसा वे महाभारतसे पहले किया करते थे। वे वीर थे, अस्त्ररहित शत्रुपर हाथ चलाना जानते ही न थे।

हम लोगोंके मुँहसे बहुधा यह सुना करते हैं कि वीरताका जमाना चला गया, परन्तु फिर भी इस जमानेमें वीरता और सुजनताके ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि इतिहासमें उनसे बढ़िया उदाहरण शायद ही मिल सकें। सन् १८६२ ईसवीमें फरवरीकी २७ तारीखको बरकिन्हैड नामक जहाज आफ्रिकाके किनारे किनारे जा रहा था। रातके दो बजे वह जहाज अकस्मात् एक चट्टानसे टकरा गया। उस समय जहाजके सब यात्री सो रहे थे। जहाजमें ४७२ पुरुष और १६६ स्त्रियाँ और बच्चे थे। टक्कर लगते ही जहाजका पेंदा फट गया और उसमें पानी भरने लगा। यह देख कप्तानने तुरन्त ही स्त्रियों और बच्चोंके बचानेका हुक्म दिया। जहाजके ऊपरसे नावें उतारी गईं और उनमें स्त्रियाँ और बच्चोंको बिठला दिया गया। जब नावें चलने लगीं तब जहाजके कप्तानने बिना सोचे समझे कहा कि "अब जो पुरुष तैरकर नावों तक जा सकते हों, कूद कर चले जायँ और नावोंमें बैठ जायँ।" परन्तु एक फौजी कप्तानने कहा, "नहीं! नहीं! ऐसा करनेसे नावोंमें बोझ बढ़ जायगा और नावें स्त्रियों और बच्चोंसहित डूब जायँगी।"

यह सुनकर जहाजके सब पुरुष ज्योंके त्यों खड़े रह गये—उनमेंसे एक भी न हिला। सब पुरुष जहाजपर ही रह गये। अब कोई नाव न बची थी, इसलिए उनके बचनेकी भी कोई आशा न थी। परन्तु किसी पुरुषका मन विचलित न हुआ; कोई पुरुष उस आपत्ति-कालमें कर्तव्य पालनसे न हटा। उनमेंसे एक पुरुषने, जो समुद्रमें तैर कर बच आया था, यह सब हाल आकर कहा। उसने कहा कि "हममेंसे किसीने भी जहाजके डूबनेतक जरा भी

कुड़कुड़ाहट न की। जहाज डूब गया और उसके साथ वे वीर पुरुष भी डूब गये। उन सज्जनों और वीरोंकी जय हो। ऐसे पुरुषोंके उदाहरण कभी मिट नहीं सकते हैं। जिस तरह उनकी स्मृति अमर है उसी तरह उनके उदाहरण भी अमर हैं।

सन् १९१२ ईसवीमें अटलान्टिक महासागरमें टाइटैनिक नामक जहाज भी इसी तरह डूबा था। इस दुर्घटनाका हाल हम लोगोंने समाचारपत्रोंमें पढ़ा था और उसकी सुध हम अभी तक नहीं भूले हैं। इस अवसर पर भी अनेक वीरोंने अपनी वीरताका परिचय दिया था। टाइटैनिक ऐसा मजबूत बनाया गया था कि लोगोंको आशा थी कि इस जहाजको कोई चीज हानि न पहुँचा सकेगी परन्तु मनुष्य सोचता कुछ है और होता कुछ है। टाइटैनिक समुद्रमें तैरती हुई एक हिम-शिलासे टक्कर खा गया और उसमें छिद्र हो गया। नावें इतनी न थीं कि सब लोग उनमें बैठकर अपने प्राण बचा सकते। कायर मनुष्योंके साथ उस जहाजमें अनेक वीर पुरुष भी थे। इँग्लेंडके सुप्रसिद्ध मासिक पत्र 'रिव्यू आफ रिव्यूज' के संपादक स्टेड जैसे महानुभाव भी उस जहाजमें सफर कर रहे थे। जब जहाजमें टक्कर लगी और उसमें पानी भरने लगा तब कप्तानने हुक्म दिया कि "पहले स्त्रियों और बच्चोंको नावोंमें बिठलाकर बचाया जाय।" कप्तानकी आज्ञा पाते ही सब पुरुष पीछे हट गये और स्त्रियाँ और बच्चे नावोंमें बैठकर चल दिये। बहुतसे वीरोंने उस समय दूसरोंके प्राण बचाये और वे स्वयं जलमें डूब गये।

"आये नहीं आठ सौ जन भी नौकायें भर गईं तमाम,
सोलह सौ यात्री निर्भय हो मर कर अमर कर गये नाम।
वह मरना भी दर्शनीय है, है सजीवताका वह चित्र,
उस स्वर्गीय भावको भाषा प्रकट करेगी कैसे मित्र!
वह देखो अस्टरसे धनपति तथा स्टेडसे नैतिक वीर,
एक एक सामान्य मनुजकी रक्षा कर तज रहे शरीर!"

सज्जन मनुष्यको पहचाननेके लिए कई तरहसे परीक्षा की जा सकती है, परन्तु एक परीक्षा ऐसी है जिसमें कभी धोखा नहीं होता—वह अपने अधीनोंपर किस प्रकार शासन करता है? वह स्त्रियों और बच्चोंके साथ कैसा

व्यवहार करता है? पदाधिकारी अपने अधीनोंके साथ, स्वामी अपने नौकरोंके साथ, गुरु अपने शिष्योंके साथ और प्रत्येक मनुष्य अपनेसे निर्बल मनुष्योंके साथ कैसा व्यवहार करता है? ये लोग अपनी शक्तिका प्रयोग करनेमें कितनी न्यायपरता, क्षमा और कृपालुताको काममें लाते हैं, यह जाननेसे सुजनताकी उत्तम परीक्षा हो सकती है। **लामोट्टी** एक बार एक भीड़में होकर जा रहा था। उसका पैर अकस्मात् एक युवकके पैरपर पड़ गया। युवकने पलटकर लामोट्टीके मुँह पर एक थप्पड़ मारा। लामोट्टीने कहा कि "महाशय, आप यह जान कर कि मैं अंधा हूँ अपने कियेपर अवश्य पछतावा करेंगे।" जो मनुष्य ऐसे लोगोंको तंग करता है जो उसका मुकाबला नहीं कर सकते वह दुष्ट है, सज्जन नहीं है। जो दुर्बलोंपर अत्याचार करता है वह कायर है, मर्द नहीं है। जिस मनुष्यके विचार अच्छे हैं उसमें बलवान् होनेपर और भी श्रेष्ठता आ जाती है। वह अपने बलका प्रयोग अत्यन्त सावधानीसे करता है; क्योंकि वह जानता है कि राक्षसके समान बली होना अच्छा है, परन्तु राक्षसकी तरह उस बलका प्रयोग करना अत्याचार है।

नम्रता भी सज्जनताकी एक अच्छी कसौटी है। अपनेसे छोटों और बराबरवालोंके आदर करनेका गुण सच्चे सज्जनके स्वभावमें कूट कूट कर भरा रहता है। वह स्वयं कष्ट उठा लेता है, परन्तु दूसरोंका मन दुखाकर पापका भागी नहीं बनना चाहता। वह उन मनुष्योंके दोषों, असफलताओं और अपराधोंको क्षमा कर देता है जिनको जीवनमें उसके बराबर सुविधायें नहीं मिली हैं। वह अपने पशुओंपर भी दयाभाव रखता है। वह अपने धन, बल अथवा शक्तियोंपर घमंड नहीं करता। वह यह नहीं चाहता कि दूसरे उसके विचारोंको जबरदस्ती ग्रहण कर लें, किन्तु जब मौका आता है तब वह स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचारोंको प्रगट कर देता है। वह जब किसी पर कृपा करता है तब अपना अहसान जताना नहीं चाहता।

लार्ड **चैथैमने** कहा था कि "सज्जन मनुष्यमें आत्मत्यागका गुण होता है। वह रोजमर्राकी छोटी छोटी बातोंमें भी अपने आप कष्ट भोगकर दूसरोंको सुख पहुँचानेका प्रयत्न करता है। वीर सर **राल्फ ऐबरक्रोम्बीके** उत्तम चरित्रमें यही गुण था। एक बार वे एक युद्धमें ऐसे घायल हो गये कि उनके लोग एक डोलीमें बिठालकर जहाजमें ले गये। उस समय उनको आराम

देनेके लिए एक सिपाहीका कम्बल उनके सिरके नीचे रख दिया गया और उससे उनको बहुत शान्ति मिली। उन्होंने पूछा कि—" मेरे सिरके नीचे क्या है?" किसीने उत्तर दिया कि " और कुछ नहीं; एक सिपाहीका कम्बल है।" यह सुनकर वे कुछ उठे और उन्होंने पूछा कि " यह किसका कम्बल है।" जवाब मिला कि " हमारे आदमियोंमेंसे ही एक आदमी का है।" सर राल्फने फिर कहा कि " मैं उस आदमीका नाम जानना चाहता हूँ जिसका यह कम्बल है।" जवाब मिला कि " यह कम्बल डंकनरायका है जो ४१ नम्बरकी पलटनमें है।" सर राल्फने कहा कि " अच्छा तो डंकनरायके पास यह कम्बल आज रातको ही पहुँचा देना।" सर राल्फने मरते समय भी अपने आरामकी परवाह न की और उस सिपाहीको एक रातके लिए भी कम्बलसे वंचित रखना न चाहा।

फुलरने प्रसिद्ध एडमिरल सर फ्रान्सिस ड्रेकके विषयमें जो कुछ लिखा है उससे थोड़े शब्दोंमें ही मालूम हो सकता है कि सच्चे सज्जन और कार्यकुशल मनुष्यका चरित्र कैसा होता है:—उनका जीवन पवित्र था। वे इमानदारीका व्यवहार करते थे और अपनी बातके धनी थे। वे अपने अधीनों पर दयाभाव रखते थे और आलस्यसे सबसे अधिक घृणा करते थे। दूसरे आदमी चाहे कितने ही विश्वसनीय और चतुर हों, परन्तु वे उनपर किसी जरूरी कामको न छोड़ते थे; किन्तु जहाँ साहस चतुराई अथवा परिश्रमकी जरूरत होती थी वहाँ वे स्वयं काम करते थे। वे भयको तुच्छ समझते थे और किसी तरहकी मेहनतसे मुँह न मोड़ते थे।
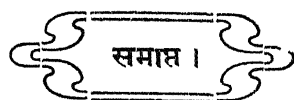
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर सीरीज।

हमारे यहाँसे इस नामकी एक ग्रन्थमाला प्रकाशित होती है। हिंदी-संसारमें यह अपने ढंगकी अद्वितीय है। अभी इसमें जितने ग्रन्थ निकले हैं वे भाव, भाषा, छपाई और सौंदर्य आदि सभी दृष्टियोंसे बेजोड़ हैं। प्रायः सभी साहित्य-सेवियोंने उनकी मुक्त कंठसे प्रशंसा की है। स्थायी ग्राहकोंको पूर्व प्रकाशित और आगे प्रकाशित होनेवाले सभी ग्रंथ पौनी कीमतमें दिये जाते हैं। पूर्व-प्रकाशित ग्रन्थोंका लेना न लेना ग्राहकोंकी इच्छापर है; परन्तु आगेके ग्रंथ लेने पड़ते हैं। स्थायी ग्राहक होनेकी 'प्रवेश फी' आठ आने हैं। अभीतक नीचे लिखे ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं:—

१-२ **स्वाधीनता।** जान स्टुअर्ट मिलकी 'लिबर्टी' का अनुवाद। मूल्य दो रुपया।

३ **प्रतिभा।** प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत अविनाशचन्द्रदास एम. ए. बी. एल. के 'कुमारी' नामक शिक्षा-प्रद और भावपूर्ण उपन्यासका अनुवाद। मूल्य सवा रु०।

४ **फूलोंका गुच्छा।** उच्च श्रेणीकी ११ गल्पोंका संग्रह। मूल्य नौ आने।

५ **आँखकी किरकिरी।** डाक्टर रवीन्द्रनाथ टागोरके 'चोखेर बालि' नामक प्रसिद्ध उपन्यासका अनुवाद। मूल्य एक रुपया दस आने।

६ **चौबेका चिट्ठा।** बंग-साहित्य-सम्राट् स्वर्गीय बंकिम बाबूके ज्ञान-विज्ञान और देश भक्ति-पूर्ण मनोरंजक ग्रंथका अनुवाद। मूल्य बारह आने।

७ **मितव्ययता।** सेमुएल स्माइल्स साहबके 'थ्रिफ्ट' नामक ग्रन्थके आधारसे लिखित। मूल्य पन्द्रह आने।

८ **स्वदेश।** डा० रवीन्द्रनाथ टागोरके चुने हुए स्वदेश-सम्बंधी निबंधोंका अनुवाद। मूल्य दश आने।

९ **चरित्रगठन और मनोबल।** राल्फ वाल्डो ट्राइनके 'कैरेक्टर बिल्डिंग थाट पावर' का अनुवाद। मूल्य तीन आने।

१० **आत्मोद्धार।** प्रसिद्ध हबशी विद्वान् डाक्टर बुकर टी. वाशिंगटनका बहुतही शिक्षाप्रद आत्मचरित। मूल्य एक रुपया।

११ **शान्तिकुटीर।** श्रीयुत अविनाश बाबूके 'पलाशवन' नामक शिक्षाप्रद गार्हस्थ्य उपन्यासका अनुवाद। मूल्य चौदह आने।

१२ **सफलता और उसकी साधनाके उपाय।** कई अंग्रेजी पुस्तकोंके आधारसे लिखित। मूल्य बारह आने।

१३ **अन्नपूर्णाका मन्दिर**। अतिशय हृदयभेदी, करुणरसपूर्ण और शिक्षाप्रद उपन्यास । मूल्य बारह आने ।

१४ **स्वावलम्बन**। सेमुएल स्माइल्सके 'हेल्फ-सेल्प' नामक ग्रन्थके आधारसे लिखित । मूल्य डेढ़ रुपया ।

१५ **उपवास चिकित्सा**। उपवाससे अर्धोपवाससे और अल्प भोजनसे तमाम रोगोंको नष्ट करनेका उपाय । मूल्य बारह आने ।

१६ **सूमके घर धूम**। सभ्य हास्यपूर्ण प्रहसन । मूल्य तीन आने ।

१७ **दुर्गादास**। प्रसिद्ध स्वामि-भक्त वीर दुर्गादासके ऐतिहासिक चरित्रको लेकर इस नाटककी रचना की गई है। यह बंगालके सर्वश्रेष्ठ नाटक लेखक स्वर्गीय द्विजेन्द्रलाल रायके नाटकका अनुवाद है। मूल्य एक रुपया ।

१८ **बंकिम-निबन्धावली**। स्वर्गीय बंकिमबाबूके चुने हुए विविध निबंधोंका अनुवाद। मूल्य चौदह आने ।

१९ **छत्रसाल**। बुंदेलखण्ड-केसरी महाराज छत्रसालके ऐतिहासिक चरित्रके आधारपर लिखा हुआ देश-भक्तिपूर्ण उपन्यास । मूल्य डेढ़ रुपया ।

२० **प्रायश्चित्त**। नोबेल प्राइज-प्राप्त, बेलजिएमके सर्व-श्रेष्ठ कवि मेटर-लिंकके एक भावपूर्ण नाटकका हिंदी अनुवाद। मूल्य चार आने।

२१ **अब्राहमलिंकन**। गुलामोंको स्वाधीनता दिलानेवाले अमेरिकाके प्रसिद्ध सभापतिका जीवनचरित । मूल्य दश आने ।

२२ **मेवाड़-पतन**। ऐतिहासिक नाटक। मूल लेखक स्वर्गीय द्विजेन्द्रलाल राय। मूल्य बारह आने ।

२३ **शाहजहाँ**। स्वर्गीय द्विजेन्द्रलाल रायके सर्वश्रेष्ठ नाटकका अनुवाद । यह भी ऐतिहासिक है। मूल्य चौदह आने।

२४ **मानवजीवन**। अंग्रेजी, गुजराती, बंगला और मराठीकी कई सदा-चार सम्बन्धी पुस्तकोंके आधारसे लिखा हुआ उत्कृष्ट ग्रंथ। मूल्य १।≈)

२५ **उसपार**। द्विजेंद्रबाबूके एक अतिशय हृदयद्रावक और शिक्षाप्रद सामाजिक नाटकका अनुवाद। मूल्य एक रुपया ।

२६ **ताराबाई**। यह भी द्विजेंद्रबाबूके एक नाटकका अनुवाद है । यह पद्यमय है। हिंदीमें यही सबसे पहिला पद्य नाटक है। मूल्य एक रुपया ।

२७ **देश-दर्शन**। इसमें इस देशकी शोचनीय अवस्थाका रोमांचकारी दर्शन कराया है। अंगरेजीके कोई पचास ग्रंथोंके आधारसे इसकी रचना हुई है। मूल्य तीन रुपये।

२८ हृदयकी परख। स्वतंत्र और भावपूर्ण सचित्र उपन्यास। मूल्य चौदह आने।

२९ नवनिधि। प्रसिद्ध गल्प लेखक श्रीयुत प्रेमचन्दजीकी एकसे एक बढ़-कर सुंदर और भावपूर्ण नव गल्पोंका संग्रह। मूल्य चौदह आने।

३० नूरजहाँ। स्व० द्विजेंद्रलाल रायके ऐतिहासिक नाटकका अनुवाद। मूल्य एक रुपया।

३१ आयर्लैण्डका इतिहास। राष्ट्रीय ग्रन्थ। मूल्य १॥।≈)

३२ शिक्षा। डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुरके शिक्षा सम्बंधी निबंधोंका सुस्पष्ट अनुवाद। मूल्य नव आने।

३३ भीष्म। स्वर्गीय द्विजेंद्रबाबूके पौराणिक नाटकका अनुवाद। मूल्य १≈)

३४ कावूर। इटलीके स्वतंत्र सुव्यवस्थित राष्ट्र बनानेवाले प्रसिद्ध राज-नीतिज्ञ और देशभक्तका जीवनचरित। मूल्य एक रुपया।

३५ चन्द्रगुप्त। स्वर्गीय द्विजेंद्रबाबूके हिंदू राजत्वकालीन अपूर्व ऐतिहासिक नाटक। मूल्य एक रुपया।

३६ सीता। स्व० द्विजेंद्रबाबूका पौराणिक नाटक। मूल्य नव आने।

३७ छायादर्शन। मरनेके बाद जीवकी क्या अवस्था होती है। इत्यादि बातोंपर प्रकाश डालनेवाला अपूर्व ग्रन्थ। मूल्य सवा रुपया।

हमारी अन्यान्य पुस्तकें।

१ व्यापारशिक्षा। व्यापार सम्बंधी प्रारंभिक पुस्तक। मूल्य नव आने।

२ युवाओंको उपदेश। विलियम कावेटके "एडवाइस टू यंग मेन" के आधारसे लिखित। चरित्र-गठन करनेवाला ग्रंथ। मूल्य नव आने।

३ कनकरेखा। प्रसिद्ध गल्पलेखक केशवचन्द्र गुप्त एम. ए., बी. एल. की बङ्गला गल्पोंका अनुवाद। मूल्य बारह आने।

४ शान्तिवैभव। 'मैजेस्टी आफ कामनेस' का अनुवाद। मूल्य पांच आने।

५ लन्दनके पत्र। विलायतसे एक देशभक्त भारतवासीकी भेजी हुई देश-भक्तिपूर्ण चिट्ठियोंका संग्रह। मूल्य तीन आने।

६ अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा। मूल्य ढाई आने।

७ पिताके उपदेश। एक सुशिक्षित पिताके अपने विद्यार्थी पुत्रके नाम भेजे हुए पत्रोंका संग्रह। मूल्य दो आने।

८ सन्तान कल्पद्रुम। इसमें वीर, विद्वान् और सद्गुणी संतान उत्पन्न करनेके विषयमें वैज्ञानिक पद्धतिसे विचार किया गया है। मूल्य बारह आने।

९ **कोलम्बस** । नई दुनियाँ या अमेरिकाका पता लगानेवाले प्रसिद्ध उद्योगी और साहसी नाविकका जीवनचरित । मूल्य बारह आने ।

१० **ठोक पीटकर वैद्यराज** । प्रसिद्ध नाटक-लेखक मौलियरके फ्रेंच प्रहसनका सुन्दर हिंदी रूपांतर । मूल्य पाँच आने ।

११ **बूढ़ेका ब्याह** । खड़ी बोलीका सचित्र काव्य । मू० छह आने ।

१२ **दियातले अँधेरा** । स्त्रीशिक्षासम्बंधी दिलचस्प कहानी । मूल्य डेढ़ आना ।

१३ **भाग्यचक्र** । एक हृदयद्रावक शिक्षाप्रद गल्प । मूल्य एक आना ।

१४ **विद्यार्थीके जीवनका उद्देश्य** । मूल्य एक आना ।

१५ **सदाचारी बालक** । एक शिक्षाप्रद कहानी । मूल्य दो आने ।

१६ **बच्चोंके सुधारनेके उपाय** । प्रत्येक माता पिताके पढ़ने योग्य । मूल्य आठ आने ।

१७ **गिरना, उठना और अपने पैरों खड़े होना** । अर्थात् अस्तोदय और स्वावलम्बन । मूल्य १=)

१८ **योग-चिकित्सा** योगकी सीधीसादी क्रियाओंसे रोगोंके दूर करनेके उपाय । मूल्य दो आने ।

१९ **दुग्ध-चिकित्सा** । केवल दूध पिलाकर समस्त रोगोंको दूर करनेके सरल उपाय । मूल्य दो आने ।

२० **श्रमण-नारद** । बौद्ध युगकी एक बहुतही शिक्षाप्रद कहानी । मूल्य दो आने ।

२१ **देवदूत** । जन्मभूमिका स्वर्गसे भी बढ़कर अनुभव करनेवाला अभिनव काव्य । नई कल्पना । लेखक पं० रामचरित उपाध्याय । मू० ।=)

२२ **विधवा-कर्तव्य** । मू० ॥)

२३ **अंजना पवनंजय काव्य** । मू० =)॥

२४ **भारत-रमणी** । नाटक । मू० ।॥=)

नोट—इनके सिवाय और और प्रसिद्ध प्रकाशकोंके हिंदी ग्रंथ भी हमारे यहाँ मिलते हैं । बड़ा सूचीपत्र मँगाकर देखिये ।

मिलनेका पता—

हिन्दी-ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग पो० गिरगांव—बम्बई ।